

अमृतलाल मदान एवं धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में
निहित जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

Amritlal Madan evam Dharampal Sahil ke Upnyason men
Nihit Jeevan moolyon ka tulnatmak Adhyayan

Thesis Submitted For the Award of the Degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

In

(Hindi)

By

SONIA

(41800333)

Supervised By
Dr. Reeta Singh

Co-Supervised by
Dr. Vinod Kumar



L OVELY
P ROFESSIONAL
U NIVERSITY

Transforming Education Transforming India

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY

PUNJAB

2022

समर्पण
माता-पिता को
जिन्होंने जन्म दिया
गुरुजनों को
जिन्होंने समय को समझने के लिए
दृष्टि दी

घोषणा-पत्र

मैं सोनिया शोधार्थी पीएच. डी. हिन्दी सत्य व निष्ठापूर्वक प्रमाणित करती हूँ कि 'अमृतलाल मदान एवं धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में निहित जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर किया गया शोध मेरा मौलिक शोध कार्य है। यह शोध प्रबंध लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब की पीएच. डी. हिन्दी की उपाधि हेतु प्रस्तुत किया गया है। यह शोध डॉ. रीता सिंह, सहायक प्रोफेसर व डॉ. विनोद कुमार एसोसिएट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ़ समाज विज्ञान एवं भाषा संकाय, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब के निर्देशन में पूरा किया गया है।

मैं यह भी प्रमाणित करती हूँ मेरे द्वारा किया गया प्रस्तुत शोध प्रबंध आंशिक अथवा पूर्ण रूप से किसी अन्य उपाधि के लिए अन्य किसी विश्वविद्यालय को प्रस्तुत नहीं किया गया है।

दिनांक:

सोनिया (शोध छात्रा)

पंजीयन संख्या: 41800333

स्कूल ऑफ़ समाज विज्ञान एवं भाषा
संकाय, लवली प्रोफेशनल
यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब

प्रमाणपत्र

प्रमाणित किया जाता है कि सोनिया ने 'अमृतलाल मदान एवं धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में निहित जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब के अंतर्गत हिन्दी विषय की पीएच.डी. की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध मेरे निर्देशन में स्वयं पूर्ण किया है। शोधकर्त्री का अनुसंधान कार्य इनके व्यक्तिगत परिश्रम एवं अनुशीलन पर आधारित पूर्णतया मौलिक कार्य है। मेरे संज्ञान में यह शोध प्रबंध आंशिक अथवा पूर्ण रूप से किसी अन्य उपाधि के लिए किसी अन्य विश्वविद्यालय को प्रस्तुत नहीं किया गया है। मैं प्रस्तुत शोध-प्रबंध को पीएच. डी. (हिन्दी) की उपाधि हेतु मूल्यांकनार्थ प्रस्तुत करने की संस्तुति प्रदान करती हूँ।

दिनांक

डॉ. रीता सिंह, सहायक प्रोफेसर

हिन्दी संकाय, सामाजिक विज्ञान और भाषा स्कूल

लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी फगवाड़ा, पंजाब

प्रमाणपत्र

प्रमाणित किया जाता है कि सोनिया ने 'अमृतलाल मदान एवं धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में निहित जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब के अंतर्गत हिन्दी विषय की पीएच.डी. की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध मेरे निर्देशन में स्वयं पूर्ण किया है। शोधकर्त्री का अनुसंधान कार्य इनके व्यक्तिगत परिश्रम एवं अनुशीलन पर आधारित पूर्णतया मौलिक कार्य है। मेरे संज्ञान में यह शोध प्रबंध आंशिक अथवा पूर्ण रूप से किसी अन्य उपाधि के लिए किसी अन्य विश्वविद्यालय को प्रस्तुत नहीं किया गया है। मैं प्रस्तुत शोध-प्रबंध को पीएच. डी. (हिन्दी) की उपाधि हेतु मूल्यांकनार्थ प्रस्तुत करने की संस्तुति प्रदान करता हूँ।

दिनांक:

डॉ. विनोद कुमार, एसोसिएट प्रोफेसर

हिन्दी संकाय, सामाजिक विज्ञान और भाषा स्कूल

लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी फगवाड़ा, पंजाब

आभार

सर्वप्रथम मैं अपने शोध कार्य की निर्देशिका परमपूज्या मैडम डॉ० रीता सिंह व सहायक निर्देशक आदरणीय डॉ० विनोद कुमार जी का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ। जिनके कुशलतम मार्गदर्शन में इस शोध कार्य को पूरा किया जा सका। विषय चयन से लेकर शोध कार्य की परिणति तक आपके सहज, सरल व मधुर स्वभाव ने मुझे और भी अधिक प्रोत्साहित किया। अतः मैं आप दोनों पूज्यों के व्यक्तित्व को पुनः प्रणाम करती हुई मेरे मार्गदर्शन में दिए गए अमूल्य समय व सहयोग के लिए धन्यवाद करती हुई कृतज्ञता प्रकट करती हूँ।

मैं नमन करती हूँ मेरे माता-पिता को जिन्होंने मेरे शोध कार्य हेतु समय प्रदान किया। कृतज्ञता ज्ञापन के प्रस्तुतिकरण में आगे बढ़ते हुए मैं आभार व्यक्त करती हूँ अपने जीवन साथी का जिनके सहयोग से यह शोध कार्य पूरा हुआ।

शोध कार्य की पूर्णता के लिए मैं ऋणी रहूँगी उन सब ग्रंथकारों की जिनके ग्रन्थों के सन्दर्भ मैंने अपने शोध कार्य में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से लिए हैं।

सोनिया

पंजीकरण संख्या 41800333

हिंदी संकाय, सामाजिक विज्ञान और भाषा स्कूल

लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब

प्राक्कथन

हिंदी साहित्य के अंतर्गत उपन्यास विधा में मेरी अभिरुचि अधिक रही है। इस विधा की ओर आकर्षित करने का श्रेय प्रेमचंद के प्रसिद्ध उपन्यास 'गोदान' को है। अतः मेरे विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग ने मुझे उपन्यास विधा पर शोध करने के लिए प्रेरित किया। मेरी इच्छा रही है कि मैं हरियाणा के किसी उपन्यासकार पर शोध कार्य करूं अतः मैंने हरियाणा के प्रसिद्ध उपन्यासकार अमृतलाल मदान व पंजाब के प्रसिद्ध उपन्यासकार धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन को मेरे शोध-विषय के रूप में चुना। उपन्यास साहित्य की वह रुचिकर कृति होती है जो कहानियों के माध्यम से अपने विषय का प्रस्तुतीकरण पाठक को सरलता से करा कर उसको सोचने को बाध्य कर देती है।

प्रथम अध्याय— 'सैद्धांतिक पृष्ठभूमि' में उपन्यासकारों व उनके उपन्यासों का संक्षिप्त वर्णन करते हुए जीवन मूल्यों का अर्थ, भेद तथा तुलनात्मक अध्ययन को स्पष्ट किया गया है।

द्वितीय अध्याय—'सामाजिक व पारिवारिक जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन' के अंतर्गत पति-पत्नी, माता-पिता, दादा-दादी के सम्बन्ध में बदलते जीवन मूल्य,संयुक्त परिवारों की जीवन मूल्यों के संरक्षण में भूमिका व एकल परिवार के कारण जीवन मूल्यों में हो रहे द्वास को दर्शाया गया है। वर्तमान समाज द्वारा अपनाए जा रहे मूल्यों व परंपरागत मूल्यों का मूल्यांकन कर उचित सामाजिक जीवन मूल्यों की ओर संकेत किया गया है। सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन मूल्यों के विघटन के कारकों व उनके निवारण के उपायों के प्रति ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया गया है।

तृतीय अध्याय— 'सांस्कृतिक जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन' के अन्तर्गत भारतीय संस्कृति के गौरवमयी मूल्यों से अवगत कराया गया तथा पाश्चात्य संस्कृति के अच्छे व बुरे प्रभावों का उल्लेख करते हुए सांस्कृतिक जीवन मूल्यों में संक्रमण की पीड़ा को उकेरा गया है।

चतुर्थ अध्याय—‘आर्थिक जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन’ के अंतर्गत अर्थ के बढ़ते महत्व के फलस्वरूप उत्पन्न आर्थिक विषमता, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, धनलोलुपता, उपभोगवादिता आदि पक्षों का विवेचन करते हुए परंपरागत आर्थिक जीवन मूल्यों श्रमनिष्ठा, आत्मनिर्भरता, उचित साधनों द्वारा धनार्जन व धन का सदुपयोग आदि में हो रहे अवमूल्यन को उजागर किया गया है।

पंचम अध्याय—‘संवैधानिक व राजनीतिक जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन’ के अंतर्गत वर्तमान राजनीति में व्याप्त अवसरवादिता, स्वार्थपरकता, भाई-भतीजावाद, भ्रष्टाचार, उन्मुक्तता एवं साम्प्रदायिकता का विश्लेषण करते हुए देशभक्ति, कर्तव्य-परायणता, ईमानदारी, निष्पक्षता, न्याय, समता तथा बंधुता जैसे परम्परागत संवैधानिक व राजनीतिक जीवन मूल्यों के महत्व को स्पष्ट करते हुए उनमें हो रहे परिवर्तनों को दर्शाया गया है।

षष्ठ अध्याय— ‘जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्व’ के अन्तर्गत सामाजिक व पारिवारिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, संवैधानिक तथा राजनीतिक जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्वों का विश्लेषण किया गया है।

व्यवहारिक अध्ययन के अंतर्गत प्रश्नावली के माध्यम से मननशील बुद्धिजीवियों से जीवनमूल्यों के कारक व निवारक तत्वों पर विचार कर उपन्यासकारों के चिन्तन से तुलना करने का सार्थक प्रयास किया गया है।

उपर्युक्त अध्ययन के पश्चात **‘उपसंहार’** में शोध निष्कर्षों को दिया गया गया है और साथ में भविष्य में होने वाले शोध कार्यों की संभावनाओं को उकेरा गया है।

विषयानुक्रमणिका	ix-xiv
प्रस्तावना	xv-xxii
प्रथम अध्याय : सैद्धांतिक पृष्ठभूमि	1-48
1.1 जीवन मूल्य का अर्थ, परिभाषा व वर्गीकरण	
1.1.1 मूल्य का अर्थ, परिभाषा	
1.1.2 जीवन मूल्य का अर्थ, परिभाषा	
1.1.3 जीवन मूल्यों का वर्गीकरण	
1.1.4 साहित्य और जीवन मूल्य का सम्बन्ध	
1.2 तुलनात्मक अध्ययन	
1.2.1 तुलना का अर्थ व परिभाषा	
1.2.2 तुलनात्मक अध्ययन : अर्थ व परिभाषा	
1.2.3 तुलनात्मक अध्ययन इतिहास और परम्परा	
1.2.4 तुलनात्मक अध्ययन के तत्व	
1.2.5 तुलनात्मक अध्ययन का विकास	
1.2.6 तुलनात्मक अध्ययन का महत्व	
1.2.7 तुलनात्मक अध्ययन की पद्धतियां	
1.3 अमृतलाल मदान : जीवन, व्यक्तित्व एवं कृतित्व	
1.3.1 जीवन परिचय	
1.3.2 कृतित्व	
1.4 धर्मपाल साहिल : जीवन, व्यक्तित्व एवं कृतित्व	

1.4.1 जीवन परिचय

1.4.2 कृतित्व

द्वितीय अध्याय— आलोच्य उपन्यासों में पारिवारिक और सामाजिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन 49—92

2.1 पारिवारिक मूल्य

2.1.1 परिवार— परिभाषा एवं स्वरूप

2.1.2 पारिवारिक सम्बन्ध

2.1.2.1 पति—पत्नी के सम्बन्ध

2.1.2.2 माता—पिता और सन्तान के सम्बन्ध

2.1.2.3 सास—ससुर और बहू के सम्बन्ध

2.1.2.4 दादा—दादी और बच्चों के सम्बन्ध

2.2 सामाजिक मूल्य— संक्रमण और विघटन

2.2.1 समाज अर्थ व परिभाषा

2.2.1.1 वर्ण और जाति व्यवस्था

2.2.1.2 विवाह

2.2.1.3 अन्धविश्वास व रूढिगत परम्पराएँ

2.3 तुलनात्मक निष्कर्ष

2.3.1 साम्य

2.3.2 वैषम्य

**तृतीय अध्याय— आलोच्य उपन्यासों में सांस्कृतिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन
93—120**

- 3.1 संस्कृति का अर्थ व स्वरूप
 - 3.1.1 धर्म और संस्कृति
 - 3.1.2 रहन—सहन तथा खान—पान सम्बन्धी सांस्कृतिक मूल्य
 - 3.1.3 मेले व त्यौहार विषयक सांस्कृतिक मूल्य
 - 3.1.4 क्लब व पार्टी सम्बन्धी सांस्कृतिक मूल्य
 - 3.1.5 रीति—रिवाज व परम्परा विषयक सांस्कृतिक मूल्य
 - 3.1.6 वैवाहिक सांस्कृतिक मूल्य
 - 3.1.7 शिक्षा व संस्कृति
 - 3.1.8 धर्म का बाजारीकरण
- 3.2 तुलनात्मक निष्कर्ष
 - 3.2.1 साम्य
 - 3.2.2 वैषम्य

**चतुर्थ अध्याय— आलोच्य उपन्यासों में आर्थिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन
121—141**

- 4.1 अर्थ शब्द का तात्पर्य
- 4.2 अर्थ शब्द की परिभाषा
- 4.3 आर्थिक मूल्य के विषय में भारतीय चिन्तन
- 4.4 आलोच्य उपन्यासों में आर्थिक मूल्य, संक्रमण तथा विघटन

- 4.4.1 श्रमनिष्ठा
- 4.4.2 आत्मनिर्भरता
- 4.4.3 उचित साधनों द्वारा धनोपार्जन
- 4.4.4 धन का उचित उपयोग
- 4.5 तुलनात्मक निष्कर्ष
 - 4.5.1 साम्य
 - 4.5.2 वैषम्य

पंचम अध्याय— आलोच्य उपन्यासों में संवैधानिक व राजनीतिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन 142—170

- 5.1 संविधान का अर्थ
- 5.2 संवैधानिक मूल्य
 - 5.2.1 स्वतंत्रता
 - 5.2.2 न्याय
 - 5.2.3 बंधुता
 - 5.2.4 समता
- 5.3 राजनीतिक मूल्य
- 5.4 धर्म और राजनीति
- 5.5 धर्मनिरपेक्षता और सांप्रदायिकता
- 5.6 अवसरवादिता व राजनीति
- 5.7 भ्रष्ट राजनीति

5.8 तुलनात्मक निष्कर्ष

5.8.1 साम्य

5.8.2 वैषम्य

**अध्याय—6 जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्वों का अध्ययन
171—198**

6.1 पारिवारिक व सामाजिक जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्व

6.1.1 पति—पत्नी में सामंजस्य का अभाव

6.1.2 विवाह—विच्छेद में निरंतर वृद्धि

6.1.3 पारिवारिक अनियन्त्रता

6.1.4 पश्चिमी मनोवृत्तियों का प्रभाव

6.2 सांस्कृतिक जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्व

6.2.1 संयुक्त परिवार विघटन व एकल परिवार

6.2.2 शिक्षा का बाजारीकरण

6.2.3 साम्प्रदायिक सद्भावना का अभाव

6.2.4 साहित्य, इंटरनेट व मीडिया का गिरता स्तर

6.2.5 पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव

6.3 आर्थिक जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्व

6.3.1 लालच व असंतोष

6.3.2 पाश्चात्य प्रभाव व भूमंडलीकरण

6.4 राजनीतिक जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्व

6.4.1 भाई-भतीजावाद

6.4.2 अवसरवादिता

6.4.3 जातीयता

6.4.4 साम्प्रदायिकता

6.4.5 व्यवहारिक अध्ययन

उपसंहार 199-207

अमृतलाल मदान का साक्षात्कार 208-213

धर्मपाल साहिल का साक्षात्कार 2013-2018

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची 219-222

आधार ग्रन्थ सूची

सहायक ग्रन्थ सूची

कोश ग्रन्थ सूची

परिशिष्ट

अमृतलाल मदान एवं धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में निहित जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

प्रस्तावना—

जीने की आपाधापी में, जीवन मूल्य क्या ठहर पाए

टूट गए कुछ बिखर गए, क्षण भंगुर कांच के साये।

फिर भी समय की मांग यही, उनकी कथा भी जाए कही

कीरचें चूभती रही मर्म पर, जहाँ मरहम के थे फाहे।।

अमृत लाल मदान (मुक्तक काव्य)

साहित्यकार अपनी लेखनी से तात्कालिक समाज के सभी पक्षों का स्पर्श करता हुआ अपने साहित्य का संवर्धन करता है। समाज की परिवर्तनशीलता का प्रत्यक्ष द्रष्टा बना अपनी रचनाओं में उन परिवर्तनों को अंकित करता है। तथाकथित परिवर्तन समाज के हित और अहित दोनों पक्षों में हो सकते हैं। समाज की नींव मूल्यों पर आधारित होती है। मूल्यों के अभाव में समाज आत्मा विहीन शरीर जैसा है। जीवन मूल्य वे आदर्श होते हैं, जो व्यक्ति, परिवार और समाज के कार्य में दृष्टिगोचर होते हैं। इस प्रकार जीवन मूल्य उस पैमाने का कार्य करता है, जिसके द्वारा किसी विचार या कार्य को अच्छा या बुरा उचित या अनुचित स्वीकार्य या अस्वीकार्य माना जाता है। उपन्यास विधा साहित्य की सशक्त विधा के रूप में प्रख्यात है। इसे मानव जीवन का गद्यात्मक महाकाव्य कहा जाता है। जीवन के विविध पक्षों का व्यापक चित्रण, इसमें कथा के माध्यम से किया जाता है। इसके पीछे लोकरंजन की भावना के साथ—साथ लोकमंगल की भावना भी निहित होती है। आज उपन्यास साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा बन चुकी है। इसमें उपन्यासकार मानव जीवन से सम्बन्धित सुखद व दुःखद किन्तु मर्मस्पर्शी घटनाओं को निश्चित तारतम्य के साथ चित्रित करता है। इसे पढ़ कर ऐसा लगता है जैसे कि हमारे ही जीवन का प्रतिबिम्ब है। उपन्यास साहित्य सभी मानव जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति करता है। उपन्यास समाज की आलोचनात्मक व्याख्या को प्रस्तुत करता है।

उपन्यासकार के लिए कहानी साधन मात्र है साध्य नहीं। उसका उद्देश्य मात्र पाठकों का मनोरंजन करना ही नहीं वरन वह तो अपने युग का एक प्रत्यक्ष द्रष्टा बन सत्य और कल्पना दोनों का सहारा लेते हुए व्यापक सामाजिक जीवन को प्रस्तुत कर समाज में एक नई चेतना जागृत करने का प्रयास करता है। अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल श्रेष्ठ साहित्यकार हैं। वे एक सफल उपन्यासकार की भांति अपने उपन्यासों में व्यक्ति, परिवार और समाज से संबंधित प्रत्येक पक्ष (सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक) के जीवन मूल्यों के महत्व व उनके बदलते स्वरूप को उजागर करते हैं। दोनों उपन्यासकार आधुनिक समय में मूल्य हीनता को दर्शाते हुए इससे बचने की चेतावनी देते हैं। एक स्वस्थ समाज की संरचना के लिए पाठकों को सही जीवन मूल्यों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित भी करते हैं।

समस्या कथन—

अमृतलाल मदान एवं धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में निहित जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

समस्या औचित्य—

सामाजिक व मानवीय व्यवहार तभी सभ्य व संस्कृत कहे जा सकते हैं जब उनका सरोकार जनकल्याण से हो। निरंतर प्रगतिशील व अद्यतन समाज में सभी जीवन मूल्य परिवर्तन के दौर से गुजर रहे हैं। समाज द्वारा अंगीकृत व अस्वीकृत परिवर्तनों की अभिव्यक्ति सजग साहित्यकारों की लेखनी कैसे अछूती रह सकती है। अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में ये परिवर्तन सर्वत्र अवलोकित हो रहे हैं।

अमृतलाल मदान ने विभाजन के दंश को झेला है व विस्थापन की भयंकर परिस्थितियों का सामना किया है। उन्होंने बंटवारे की त्रासदी से लेकर वर्तमान समाज तक के मूल्यों को अपनी लेखनी से संजोने का उत्तम काम किया। अमृतलाल मदान का अधिकांश जीवन दहशत और तनाव के बीच संघर्ष करते हुए व्यतीत हुआ। उनकी रचनाओं में निजी जीवन की स्मृतियां, संघर्ष, भारत—पाक

विभाजन से उत्पन्न सांप्रदायिकता व तनाव वाली मानसिकता दिखाई देती है। इस प्रकार तनाव वाली स्थिति में रहने के कारण उनकी कृतियों में विद्रोह की भावना अधिक दिखाई पड़ती है। मदान जी जहाँ कहीं भी जीवन मूल्यों को टूटते हुए देखते हैं, उनका विद्रोह का स्वर और भी प्रखर हो जाता है।

अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल अपनी रचनाओं के माध्यम से यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि हम मूल्यों को टूटते हुए देख रहे हैं और अधिकतर वर्तमान राजनीति मूल्यों के खिलाफ है। प्रेम, करुणा, सहानुभूति आदि मूल्य जो समाज के विकास और शांति के लिए नितांत आवश्यक हैं। उनको राजनीति खंडित कर रही है। वे सच्चे और सजग साहित्यकार हैं जो अपनी रचनाओं के माध्यम से आज भी समाज के विविध जीवन मूल्यों की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति कर रहे हैं।

शोध कार्य के उद्देश्य—

कोई भी कार्य बिना उद्देश्य के नहीं होता। अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में निहित जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन भी एक सोद्देश्य विषय है। अतः शोध कार्य के अधोलिखित उद्देश्य हैं।

- जीवन मूल्यों के स्वरूप व भेदों को स्पष्ट करना।
- वर्तमान समाज में जीवन मूल्यों में हो रहे परिवर्तनों को प्रस्तावित उपन्यासकारों के उपन्यासों के माध्यम से उजागर करना।
- प्रस्तावित उपन्यासकारों के उपन्यासों में निहित जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- प्रस्तावित उपन्यासकारों के उपन्यासों में जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्त्वों को उजागर करना।

शोध कार्य में चुनौतियां—

साहित्यकार एक भिन्न प्रकार की मानसिकता एवं व्यक्तिगत पृष्ठभूमि में अपनी रचना को प्रस्तुत करता है। विवेचना के समय उस मानसिकता तक पहुंचना

एक चुनौती होगी। बहुत से विद्वानों ने भी इस विषय पर कार्य व विचार प्रस्तुत किए हैं। उन सबको दृष्टिगोचर करना भी बेहद चुनौतीपूर्ण होगा। इसके अतिरिक्त जीवन मूल्यों पर किए गए समस्त साहित्य की उपलब्धता भी एक चुनौती है। जीवन मूल्यों का गहनता से विश्लेषण कर उनके ह्रास के कारणों का पता लगाना व मूल्यों के विघटन को रोकने के लिए सुझावों को प्रस्तुत करना भी एक चुनौतीपूर्ण कार्य रहेगा।

शोध प्रविधि—

मानव एक जिज्ञासु और बुद्धिजीवी प्राणी है। वह अपनी जिज्ञासा को शांत करने के लिए निरंतर खोज व अनुसंधान करता रहता है। वह इस शोध या खोज में अनेक विधियों का सहारा लेता है। प्रस्तुत शोध में निम्नलिखित विधियों का अवलम्बन लेकर शोध का सुखद व पूर्ण अवसान किया जायेगा।

ऐतिहासिक शोध प्रविधि—

जीवन मूल्य को समझने के लिए मानव इतिहास को जानना पड़ेगा और इस कार्य के लिए ऐतिहासिक शोध प्रविधि का प्रयोग किया जाएगा।

तुलनात्मक शोध प्रविधि—

उपन्यासकारों के उपन्यासों में निहित जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए तुलनात्मक विधि का प्रयोग किया जाएगा।

मनोविश्लेषणात्मक शोध प्रविधि—

उपन्यासों के पात्रों की मनोदशा को समझना अति आवश्यक है। इस कार्य के लिए मनोविश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया जाएगा।

विश्लेषणात्मक शोध प्रविधि—

समाज में निहित सामाजिक मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य, राजनैतिक मूल्य व धार्मिक मूल्यों के सूक्ष्म विश्लेषण में इस विधि का प्रयोग किया जाएगा।

शोध के लिए आवश्यक तथ्य एकत्र करने के लिए विधियां—

साक्षात्कार—

अमृतलाल मदान और धर्मपाल साहिल से साक्षात्कार करने से उनके विषय में और उनके साहित्य के विषय में बहुत से महत्वपूर्ण तथ्यों की प्राप्ति होगी।

अवलोकन—

अपने आसपास के समाज का अवलोकन, जीवन मूल्यों का प्रत्यक्षीकरण, मूल्यों व समाज का अवबोध कराने में सहयोग करेगा।

परिसीमांकन—

किसी भी विषय या कार्य की पूर्णता व सफलता के लिए उसका सीमाबद्ध होना आवश्यक है। अनेक कार्य या विचार शोध को प्रभावित करने वाले होते हैं परंतु बिना किसी भटकाव के आवश्यक व वांछनीय उपयोगी सामग्री के साथ शोध कार्य को समय—सीमा के अंदर करने का प्रयास रहेगा।

परिकल्पना—

पूर्वानुमान या कल्पना ही किसी कार्य के प्रारंभ का आधार होती है। मन में परिकल्पित कार्य को ही सफलतापूर्वक अवसान की ओर बढ़ाया जाता है जिस से कार्य को निश्चित दिशा मिलती है। इस शोध कार्य के लिए अधोलिखित प्राक्कल्पना को ध्यान में रखते हुए शोध कार्य किया जाएगा।

- अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में जीवन मूल्यों में हो रहे परिवर्तनों को उजागर करने का प्रयास किया गया है।
- जीवन मूल्यों के प्रति मानसिक उलझनों को दूर करते हुए उचित व नवीन जीवन—मूल्यों की स्थापना की गई है।
- अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में जीवन मूल्य एक आदर्श समाज की स्थापना में सहायक सिद्ध होंगे।

उपलब्ध साहित्य की समीक्षा—

कुमार, अनिल. अमृतलाल मदान और उनका साहित्य. कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय कुरुक्षेत्र. दिसंबर 2007— प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने 2007 तक अमृतलाल मदान के साहित्य के मुख्य पक्षों को उजागर करने का प्रयास किया है।

कुमार, प्रदीप. अमृतलाल मदान के नाटकों में युग चेतना. दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा उच्च शिक्षा और शोध संस्थान मद्रास, चेन्नई, नवंबर 2011— प्रस्तुत शोध में मदान के नाटकों में निहित युग चेतना को अपने शोध कार्य के द्वारा उजागर किया है।

मूल्यों पर उपलब्ध अन्य शोध ग्रंथ—

जाला, दीपिका. 'राही मासूम रजा के उपन्यासों में निहित जीवन मूल्य', सरदार पटेल यूनिवर्सिटी, 2018. प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने राही मासूम रजा के उपन्यासों में निहित जीवन मूल्य और उनके बदलते स्वरूप को उजागर किया है। इस शोध में सामाजिक, धार्मिक, नैतिक, राजनैतिक मूल्यों में आए आकस्मिक परिवर्तन को राही मासूम रजा के उपन्यासों के माध्यम से दर्शाने का सफलतम प्रयास किया गया है।

मकवाना, समीता बेन. ममता कालिया के उपन्यासों में जीवन मूल्य और उनका विघटन एक अनुशीलन'. सरदार पटेल यूनिवर्सिटी. 2018. प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने ममता कालिया के उपन्यासों में निहित घर, परिवार, समाज, समुदाय में दिन प्रतिदिन हो रहे जीवनमूल्यों के विघटन को अपने शोध के माध्यम से उजागर किया है। यहाँ विशेष तौर पर वृद्ध-सम्मान, नारी सम्मान व नारी शिक्षा के प्रति समाज की अवरोही सोच को दर्शाया गया है।

महला, संगीता आर. 'शिवानी के उपन्यासों में पारिवारिक मूल्य विघटन एक अनुशीलन'. सरदार पटेल यूनिवर्सिटी, 2017. प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने शिवानी जी के उपन्यासों के माध्यम से सयुंक्त परिवारों के टूटने और और उनसे होने वाले दुष्परिणामों का उल्लेख किया है। परिवार विघटन के कारणों में आज के एक दुसरे

के सम्मान, सेवा-भाव, विश्वास का अभाव व आधुनिक फैशन व दूरदर्शन के नाटकों के प्रभाव को प्रमुख कारण के तौर पर दिखलाया गया है।

चौरसिया, संध्या. 'निर्मल वर्मा के कथा साहित्य में जीवन मूल्य'. अलीगढ़ यूनिवर्सिटी, 2016. प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने निर्मल वर्मा के कथा साहित्य में अकेलापन, अजनबीपन, पारिवारिक सम्बन्धों की टूटन, तनाव, कुंठा, निराशा, मुक्त शारीरिक सम्बन्ध, परम्परावादी स्त्री की सोच, नारी की मनस्थिति, प्रेम के नाना स्वरूपों को अपने शोध के माध्यम से दर्शाया है।

मिश्रा, सरोज कुमार. हिंदी नाटकों में बदलते सामाजिक मूल्यों का अनुशीलन. पंडित रविशंकर शुक्ल यूनिवर्सिटी, 2015. शोधार्थी ने प्रस्तुत शोध ग्रंथ में हिंदी नाटकों में बदलते सामाजिक मूल्यों को दर्शाया है।

रस्तोगी, देव शरण. हिंदी छायावादी काव्य में अभिव्यक्त नैतिक मूल्य. चौधरी चरण सिंह यूनिवर्सिटी मेरठ. 2014. प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने हिंदी की छायावादी कविताओं में प्राचीन जीवन मूल्यों के प्रति विद्रोह है, थोथी नैतिकता, रूढ़िवादिता, सामंतकालीन धार्मिक एवं सामाजिक परंपराओं के प्रति विरोध व मानवीय कल्याण की भावनाओं को उजागर किया गया है।

गर्ग, मिथिलेश. हिंदी के छायावादी काव्य में व्यक्त नैतिक मूल्य. चौधरी चरण सिंह यूनिवर्सिटी मेरठ, अगस्त 2014. इस शोध ग्रंथ में शोधार्थी ने छायावादी कवियों में संकलित नैतिक मूल्यों को उजागर करने का प्रयास किया है।

शर्मा, नीरजा. नवी दशक के नाटकों में मूल्य विघटन एक विश्लेषण. सावित्रीबाई फुले यूनिवर्सिटी पुणे, 2011. शोधार्थीनी ने प्रस्तुत शोध ग्रंथ में नवी दशक के नाटकों में मूल्य विघटन को दर्शाया है।

सिंह, वंदना. प्रेमचंद्रोत्तर कहानियों में बदलते मूल्य. वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर, 2008. शोधार्थीनी ने प्रस्तुत शोध ग्रंथ में प्रेमचंद्र के बाद की कहानियों में बदलते मूल्यों को दर्शाया है।

सुमेश, ए. एस. रामदरश मिश्रा के काव्य में जीवन मूल्यों की तलाश एक अनुशीलन महात्मा गांधी यूनिवर्सिटी मन्नान, 2008. शोधार्थी ने प्रस्तुत शोध ग्रंथ में रामदरश मिश्रा के काव्य में जीवन मूल्यों को अपने शोध ग्रन्थ के माध्यम से प्रकट किया है।

यह विषय न कभी अतीत हुआ है और न ही हो सकता है। इस विषय की परिवर्तनशीलता सदा ही जिज्ञासा बनाए रखती है और उसी जिज्ञासा का परिणाम यह शोध है।

शोध अन्तराल—

पूर्व में किए गए शोध कार्यों के साहित्य पुनरावलोकन से कुछ निष्कर्ष प्राप्त होते हैं। जिनमें प्रमुख बात है कि पूर्व के शोध अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल के नाटकों व कथाओं पर हुए हैं उनके उपन्यास उपेक्षित रहे हैं। अतः यह शोध जीवन मूल्यों से परिपूर्ण उनके उपन्यासों को उद्घाटित करने का एक प्रयास है।

प्रथम अध्यायः
सैद्धांतिक पृष्ठभूमि

प्रथम अध्याय : सैद्धांतिक पृष्ठभूमि

1.1 जीवन मूल्य—मानव जीवन को सुचारु रूप से चलाने के लिए विद्वानों ने जीवन के कुछ मानदंड निश्चित किए उन्हीं के आधार पर मूल्य की अवधारणा अस्तित्व में आई। मानव के विकास के साथ-साथ मूल्य शब्द के अर्थ को विस्तार मिला। संक्षेप में कहना हो तो सदाचरण, आत्मसंयम, इन्द्रियों का नियंत्रण आदि अर्थों में भी मूल्य का प्रयोग देखा जाता है। यह बात नितांत सत्य है कि मूल्य मानव जीवन के उन्नायक व सुख के प्रतिष्ठापक होते हैं। मानव को सच्चे अर्थों में मानव बनाने का कार्य मानव मूल्य ही करते हैं, इसी से जीवन में मानव मूल्यों का महत्व स्पष्ट हो जाता है। जन-समाज के कल्याण को ध्यान में रखते हुए समाज के सुसंस्कृत वर्ग ने जिन मूल्यों को समाज के लिए उपयोगी एवं महत्वपूर्ण बताया उन्हीं मूल्यों को देश, काल के विशेष संदर्भ में मानव-मूल्यों के रूप में स्वीकार किया गया। इनमें से बहुत से मूल्य शाश्वत हैं। वे देश और काल की सीमाओं को लांघकर हर युग के हर देश के मानव के लिए उसी प्रकार महत्वपूर्ण बने रहते हैं। सत्य एक ऐसा ही मूल्य है। यह और बात है कि देश और काल के संदर्भ में मानव इसकी व्याख्या बदलता रहता है लेकिन सत्य तब भी नहीं बदलता। वह मानव को सदा ही ऊपर उठाता है इससे मुंह नहीं मोड़ा जा सकता। दूसरी कोटि के मूल्य परिस्थिति विशेष के अनुसार होते हैं। वह बहुतायत से अपने रूप और व्यवहार में देश, काल और वातावरण के अनुसार बहुत कुछ बदलते रहते हैं पर यह नहीं भूलना चाहिए कि उनके भी आधार में बहुत कम परिवर्तन होता है।

1.1.1 मूल्य— अर्थ, परिभाषा

मूल्य के कोशगत अर्थ—

संस्कृत हिंदी कोश—'मूल्य' शब्द संस्कृत की 'मूल' धातु में 'यत' प्रत्यय लगाने से बना है, जिसका अर्थ कीमत, मजदूरी आदि होता है।"(आप्टे 812)

मानक अंग्रेजी कोश— 'मूल्य' शब्द के उपयोगिता, गुण, कीमत, भाव आदि संज्ञा के रूप में अर्थ बतलाये गये और क्रियात्मक संज्ञा के रूप में महत्व देना, आदर देना, कद्र करना, सम्मान देना आदि भी अर्थ होते हैं।(75)

मूल्य शब्द के अनेक अर्थ हैं मूल्य किसी वस्तु, व्यवहार या स्थिति का वह गुण या धर्म है जिसे प्राप्त करने, पूरा करने या चरितार्थ करने के लिए व्यक्ति जीता है तथा आजीवन प्रयास करता रहता है। इन्हें, मनुष्य के जीवन—लक्ष्यों का समानार्थक भी माना जा सकता है। मूल्य को आचार, कुशलता या सौन्दर्य के मानदण्ड के रूप में भी जाना जाता है। समाज के लोग इनका समर्थन करते हैं, लोग इनके साथ जीना चाहते हैं और अपने आचार—व्यवहार में, वे इन्हें भरसक उतारने का प्रयत्न करते हैं। मूल्य के स्वरूप को और अधिक समझने के लिए भारतीय व पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाओं का अवलोकन अनिवार्य हैं।

भारतीय विद्वानों की मूल्य विषयक परिभाषाएं—

डॉ.नगेन्द्र 'मूल्य' का अर्थ समझाते हुए कहते हैं— "मनुष्य के कर्म अथवा भोग के फलितार्थ रूप में जिसका महत्व या मान होता है, सामान्यतः उसे ही मूल्य कहते हैं।" (भारतीय सौन्दर्यशास्त्र की भूमिका 158)

डॉ. राधाकमल ने मूल्य शब्द की परिभाषा देते हुए कहा है— "जो कुछ भी इच्छित है, वही मूल्य है।" (दि सोशल स्ट्रक्चर ऑफ वैल्यूज21)

दिनकर मूल्य के सम्बन्ध में कहते हैं— "मूल्य आचरण के सिद्धान्तों को कहते हैं। मूल्य वे मान्यताएँ हैं जिन्हें मार्ग दर्शक ज्योति मानकर सभ्यता चलती रही है और जिनकी उपेक्षा करने वालों को परम्परा अनैतिक, उच्छृंखल या बागी कहते हैं।" (आधुनिक बोध 48)

पाश्चात्य विद्वानों का मूल्यपरक चिंतन—

हेनडरसन के अनुसार— "कोई भी वस्तु जो मनुष्य की आवश्यकता को संतुष्ट करें मूल्य कहलाती है। वे मनुष्य की आवश्यकता को पूरी करने वाली वस्तुओं को मूल्य मानते हैं।"(सोशीयोलोजी 204)

जोसफ़ एन. फिचर के मत के अनुसार—“मूल्य वे मानदण्ड हैं जो सम्पूर्ण संस्कृति और समाज को अभिप्राय और सार्थकता प्रदान करते हैं। (सोशीयोलोजी 204)

अर्थशास्त्र में मूल्य का अर्थ—

अर्थशास्त्र के अनुसार मूल्य का अर्थ किसी वस्तु की कीमत, भाव, दाम, मजदूरी या धन है।

नीति शास्त्र में मूल्य का अर्थ—

नीति शास्त्र के अनुसार मनुष्य के चरित्र का उत्थान करने वाले तत्वों को मूल्य कहा गया है। इसके अंतर्गत सद्-असद्, नैतिक-अनैतिक, शुभ-अशुभ आदि पर मनन किया जाता है।

समाजशास्त्र में मूल्य का अर्थ—

समाजशास्त्र में समाज के विभिन्न पक्षों का अध्ययन किया जाता है। सामाजिक रिश्तों तथा सामाजिक माहौल को अनुकूल करने वाले तत्वों को समाजशास्त्र में मूल्य कहा जाता है। मूल्यों की रचना उनका उपयोग करने व मूल्यों को विकसित करने का कार्य समाज करता है।

दर्शनशास्त्र में मूल्य का अर्थ—

भारतीय मनीषा पुरुषार्थ चतुष्टय अर्थात् धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को मूल्यों के रूप में स्वीकार करती है। भारतीय दर्शनशास्त्र में कहा गया है कि मानव शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के संयोग से बनता है। शरीर के विकास के लिए अर्थ, मानसिक विकास के लिए ज्ञान, बुद्धि के विकास के लिए धर्म, आत्मा के विकास के लिए मोक्ष की आवश्यकता होती है। अतः धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को दर्शनशास्त्र में मूल्य कहा गया है। यह भारतीय जीवन के प्राचीनतम मूल्य हैं। यह मूल्य समाज में किसी ना किसी रूप में सदैव भारतीय समाज में रहे हैं। प्राचीन भारत में धर्म और मोक्ष पर आधारित मूल्यों का अधिक महत्व था परंतु 21वीं सदी में अर्थ और काम का महत्व बढ़ गया है।

जीवन का अर्थ—

कालिका प्रसाद—“यह शब्द संस्कृत का पुल्लिंग शब्द है जिसका अर्थ है जीवन, जीता रहना, प्राण धारण, जीवित दशा, जीवन का आधार रूप वस्तु।”(बृहत् हिंदी कोश 912)

जीवन शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की जीव् (प्राणधारणे) धातु से ल्युट् प्रत्यय के संयोग से होती है जिसका शाब्दिक अर्थ जीवनदायी या प्राणधारण करना है।

जीवन के विषय में त्रिलोकीनाथ खन्ना का मन्तव्य है—

“किसी भी प्राणी में प्राण शक्ति के उदय, विस्तार, क्षय तथा समाप्ति का व्यापार ही जीवन है क्योंकि जीव की स्थिति कोई एकांत स्थिति नहीं है। अतः एव जीव और परिवेश के बीच होने वाली क्रिया—प्रतिक्रिया का नाम ही जीवन है। जीवन वह नैसर्गिक शक्ति है जो प्राणियों, वृक्षों आदि को अंगों और उपांगों से युक्त करके सक्रिय और सचेष्ट बनाती है। जिसके फलस्वरूप वे अपना भरण—पोषण करते हुए अपने वंश की वृद्धि करते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सभी सजीव प्राणी चाहे वह मानव हो अथवा अन्य जीव तभी तक सक्रिय रहते हैं जब तक उनमें जीवन रहता है।”(स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों में जीवन मूल्यों का संघर्ष 48)

रामचंद्र वर्मा जीवन को पाँच मुख्य लक्षणों में परिभाषित करते हैं। उनके अनुसार “जीवन एक विशेष प्रकार की क्रियाशीलता है। जीवन जिसके पांच मुख्य लक्षण होते हैं। 1. गतिशीलता 2. अनुभूति या संवेदना 3. आत्मपोषण 4. आत्मवर्धन और 5. प्रजनन।” (मानक हिंदी कोश खंड 2, 372) ये लक्षण सभी प्राणियों में पाए जाते हैं लेकिन मनुष्य एक विवेकशील व सामाजिक प्राणी है। अतः मनुष्य के संदर्भ में जीवन की परिभाषा इतनी संकुचित नहीं हो सकती। आहार, निद्रा, भय व मैथुन से आगे भी उसका जीवन है जो उसे उसके परिवेश से, समाज से जोड़ता है। अपने विवेक के कारण वह दूसरों का हित—अहित ध्यान में रखते हुए सुविचारित व सुनियोजित कर्म करता है जिससे उसका स्वयं का तथा दूसरे प्राणियों का जीवन सुखमय हो जाता है।

1.1.2 जीवनमूल्य— अर्थ, परिभाषा

मूल्य व जीवन परस्पर एक-दूसरे के पूरक हैं। मूल्य पद का प्रयोग हम चाहे जहाँ भी, जिस भी अर्थ के लिये करें, सार्थकता मनुष्य जीवन से जुड़ कर ही पाता है। उसका अस्तित्व व महत्त्व जीवन के सन्दर्भ में ही है और इसलिए उसे किसी भी तरह से जीवन से भिन्न करके नहीं देखा जा सकता। जीवन से जुड़े होने के कारण ही इसके अर्थ में अनवरत विस्तार होता जा रहा है। वैदिक काल में जीवन मूल्य का क्षेत्र अत्यंत सीमित था तथा पुरुषार्थ चतुष्टय अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की गणना ही इसके अन्तर्गत होती थी, परंतु कालान्तर में नैतिक तथा फिर सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक क्षेत्रों के मूल्यों को भी इसने अपनी सीमाओं में समेट लिया और इस प्रकार जीवनमूल्य शब्द सीमित अर्थ की सीमा को लांघकर, विस्तृत संभावनाओं से सम्पन्न हो गया। आध्यात्मिक व नैतिक मूल्यों को लम्बे समय तक जीवनमूल्य माना जाता रहा है।

डॉ. शर्मा के अनुसार— “मानव—जीवन को सम्यक् और सुचारु रूप से परिचालित करने के उद्देश्य से विद्वानों ने जीवन के कुछ मापदण्डों का निर्धारण किया और उन्हीं के आधार पर मूल्य की अवधारणा अस्तित्व में आई।” (हिंदी उपन्यास और जीवन मूल्य 2)

डॉ. अनिल कुमार मिश्र के अनुसार—“मानवीय विकास हेतु निर्धारित आदर्श एवं मान्यताओं का ही दूसरा नाम जीवनमूल्य है। प्राचीनकाल से ही प्रत्येक देश और समाज में जीवन जीने का एक निश्चित क्रम दृष्टिगोचर होता है, चाहे उसका स्वरूप कुछ भी रहा हो। जीवन का यह निश्चित क्रम ही जीवन—मूल्य है।” (रामकथा में जीवन मूल्य 11)

उक्त परिभाषाओं के अवलोकन के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि जीवन मूल्यों पर सभी विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं में तनिक अंतर हो सकता है परन्तु उन सब का मूल स्वर एक है। समाज व देश को उन्नति की ओर अग्रसर करने वाले कुछ आदर्श व नियम ही जीवन मूल्य हैं और उनका ध्येय मानव कल्याण व उत्थान है।

1.1.3 मूल्यों का वर्गीकरण—

प्रत्येक समाज एवं संस्कृति की अपनी कुछ निजी, जातीय विशेषताएं होती हैं, जो उसे दूसरे अन्य समाज से अलग करती हैं। इन विशेषताओं के कारण ही भिन्न-भिन्न संस्कृति के लोगों के चिंतन की पद्धति में विभिन्नता पाई जाती है, अतः उनके मूल्यों में भी विशिष्टता और विभिन्नता परिलक्षित होती है क्योंकि मूल्य मानव की चिंतन प्रक्रिया का ही एक परिणाम होते हैं। इसके अतिरिक्त मानव एक जिज्ञासु प्राणी है। वह भौतिक विकास के साथ-साथ आत्मोपलब्धि के नये-नये आयाम भी उद्घाटित करता चलता है। वह निरंतर कुछ जीवनोपयोगी नया खोजता है तथा उसके अनुसार नये-नये मूल्यों की स्थापना करता है। साथ ही वह प्राचीन मूल्य संस्कारों को भी निरंतर नवीन रूप प्रदान करता चलता है परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों में हमें अनेक प्रकार के जीवन-मूल्य देखने को मिलते हैं।

ये मूल्य किसी छोर पर व्यक्ति, परिवार, वर्ग, समाज राष्ट्र आदि से सम्बन्धित होते हैं, तो कहीं उनका सीधा सम्बंध अर्थ और राजनीति से होता है। कहीं वे धर्म के क्षेत्र में पहुँच जाते हैं तो कहीं साहित्य से जुड़ जाते हैं। अत्यंत व्यापकता के कारण ही इनका वर्गीकरण करना आवश्यक हो जाता है, जिससे हम इनके प्रकारों तथा स्वरूप को, भिन्न-भिन्न संस्कृतियों के परिप्रेक्ष्य में देख सकें। लेकिन इनका विभाजन भी कोई सरल कार्य नहीं, क्योंकि प्रत्येक युग की पारिस्थितियों और परिवेश में घटित परिवर्तनों के कारण उस युग के मूल्यों में भी परिवर्तन एवं विघटन होते रहते हैं। कुछ मूल्य महत्वहीन होकर अपनी सार्थकता गवां देते हैं और कुछ नए उभरते हुये मूल्य मनुज-चेतना को प्रभावित करते हैं। इस कारण इनका जो भी वर्गीकरण किया जाता है, वह समय के साथ अनुपयुक्त लगने लगता है। अतः इनका कोई निश्चित एवं वैज्ञानिक वर्गीकरण करना संभव नहीं है। ये भी इनका श्रेणीकरण मूलतः मूल्य के अर्थ तथा स्वरूप से सम्बद्ध है और जब उनमें इतना मतवैभिन्न्य मिलता है तो इनके वर्गीकरण पर भी इसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। फलतः मूल्यों के अनेक विभाजन किये जाते रहे हैं तथा आज भी किये जा रहे हैं। परंतु उनमें से किसी को भी अंतिम मान लेना कठिन है। यहाँ यह संकेत कर देना आवश्यक है कि मात्र इच्छा के आधार पर निर्मित मूल्य मानवीय चेतना के उन्नायक

नहीं हो सकते। प्रत्येक मूल्य की पृष्ठभूमि में विवेक का होना अनिवार्य है। आवश्यकता के सन्दर्भ और विवेक की कसौटी के आधार पर ही नए मूल्यों की स्थापना होती है। इसी आधार पर विचारकों ने मूल्यों का वर्गीकरण करने का प्रयास भी किया है।

भारतीय विद्वानों के द्वारा किया गया मूल्यों का वर्गीकरण

डॉ. धर्मपाल मैनी ने अपनी पुस्तक 'भारतीय मूल्य चेतना' मूल्यों का वर्गीकरण निम्न प्रकार किया है— 1. शारीरिक मूल्य 2. व्यक्तिगत मूल्य 3. आर्थिक मूल्य 4. नैतिक मूल्य 5. सामाजिक मूल्य 6. राजनीतिक मूल्य 7. धार्मिक मूल्य 8. बौद्धिक मूल्य 9. सौन्दर्यसंबंधित मूल्य 10. आध्यात्मिक मूल्य। (16)

पाश्चात्य विद्वान स्पागर ने मूल्यों को 6 वर्गों में बांटा है— सैद्धान्तिक मूल्य, आर्थिक मूल्य, सौन्दर्यात्मक मूल्य, सामाजिक मूल्य, राजनीतिक मूल्य व धार्मिक मूल्य। (मोहिनी शर्मा हिंदी उपन्यास और जीवन मूल्य 10)

पाश्चात्य विद्वान प्लेटो ने मूल्यों को 3 वर्गों में बांटा है, सत्यम, शिवम व सुंदरम। उनके अनुसार सृष्टि में जो भी पदार्थ सत्य हैं, हितकारी हैं और सुंदर हैं, वही मूल्य होने का गौरव प्राप्त करते हैं। (अरुण सोढ़ी, एजुकेशन ऑफ़ सोशियोलॉजी 95)

मूल्यों के दिए गए वर्गीकरण के आधार पर सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। इन्हीं चार श्रेणियों के अंतर्गत सभी मूल्यों को समाविष्ट किया जा सकता है। आगामी अध्यायों में इन्हीं के परिप्रेक्ष्य में उपन्यासों में व्यक्त मूल्यों का विश्लेषण प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाएगा।

1.1.4 साहित्य और मूल्य का सम्बन्ध—

मूल्यों से रहित साहित्य की कल्पना भी नहीं की जा सकती, साहित्य में निहित जीवनमूल्यों तथा जीवन विषयक अवधारणाओं का समाज से सीधा सम्बन्ध होता है। ये परम्परा से कटे हुए नहीं रहते हैं बल्कि किसी न किसी रूप में उससे जुड़े रहते हैं। समाज के प्रचलित आदर्श, आचार, व्यवहार साहित्यों में अवलोकित होते हैं। साहित्य सामयिक सामाजिक मूल्यों को ग्रहण करता हुआ, नूतन जीवन

मूल्यों निर्माण के साथ समाज को गतिशीलता प्रदान करता रहता है। अतः परिवर्तित समाज व उसके मूल्यों का प्रतिबिम्ब साहित्य में स्वाभाविक रूप से देखा जा सकता है। प्रत्येक युग के जीवन दर्शन तथा जीवनमूल्यों में भिन्नता आ जाना स्वाभाविक है। हालाँकि समाज का अभिष्ट मूल्य स्थापना है, परन्तु परम्परा से चले आ रहे मूल्यों में परिवर्तन साधारणतः नहीं हो जाता है, ये किसी विशिष्ट परिस्थिति में आकर नये कलेवर धारण करते हैं। यह कहा जा सकता है कि आज व्यक्तिवादिता व स्वार्थ के कारण मूल्य संकट की स्थिति उत्पन्न हुई है। ऐसी दशा में मूल्य परिवर्तन की सम्भावना तो रहती है परन्तु शाश्वत मूल्य कभी नहीं बदलते, उनका अस्तित्व विषम परिस्थितियों के कारण दब जाता है। जो मूल्य बदलते हैं, वे समाज के सापेक्ष ही होते हैं और जो नवीन जीवन मूल्य समाज में विकसित होते हैं वे भी समाज सापेक्ष होते हैं।

शाश्वत मूल्यों का आज भी समाज और साहित्य में महत्व है। बदली हुई परिस्थितियों के परिणामस्वरूप ही समाज या साहित्य के मूल्य दर्शन और आदर्श बदलते हैं। पूर्णतः साहित्य का जीवन दर्शन जीवन मूल्यों पर आधारित रहता है, इसीलिए मूल्य परिवर्तनशीलता के कारण व्यक्ति की मानसिकता बदल जाती है और इस भिन्न मानसिकता से उत्पन्न मूल्यों के द्वारा जीवन दर्शन का निर्माण होता है। आज का साहित्यकार यथार्थ जीवन का चित्रण समाज से भिन्न होकर नहीं कर सकता है। इस लिए साहित्यकार अपने साहित्य के अन्तर्गत समाज के मूल्यों को अंकित करता है।

वास्तव में मूल्य विहीन समाज निरर्थक है, क्योंकि मानवीय मूल्य ही साहित्य और समाज को केंद्र में रख कर गति प्रदान करने में सक्षम होते हैं। साहित्य तात्कालिक परिस्थितियों को ही प्रमाणिक स्वरूप प्रदान करता रहा है। यह बात भिन्न है कि साहित्य नये जीवन-मूल्यों को गति प्रदान करने में सफल रहा है या नहीं। यह प्रश्न अत्यन्त उलझा हुआ है। फिर भी साहित्य में जीवन-मूल्यों का चित्रण होता रहा है, किन्तु साहित्यकार नवीन-मूल्यों को स्थापित कर पाता है या नहीं यह प्रश्न भी शोचनीय है। जबकि साहित्य हमारी परम्पराओं से जुड़ा रहने के बावजूद भी परम्पराओं के प्रति विद्रोह करके उसे नयी दिशा तथा गति प्रदान करता

है। यही कारण है आज वैज्ञानिक युग विघटन का युग है। इस युग का व्यक्ति तथा परिवार व समाज नयी शिक्षा, नये दबाव और नयी परिस्थितियों से जूझ रहे हैं। आज का व्यक्ति मूल्य संकट की स्थिति में न तो मूल्यों को पूरी तरह से त्याग रहा है और न ही पूरी तरह से आत्मसात् कर रहा है। वही साहित्य की स्थिति है। आज के साहित्य में साहित्यकार केवल नीतिगत व आदर्श आचार व्यवहार विषयक मूल्यों की स्थापना करता हो ऐसा नहीं है, अपितु यह तो भौतिक या साधनागत मूल्यों की भी आवश्यकता का प्रतिपादन करता है और उनके पारस्परिक संघर्षों को अपने साहित्य में दर्शाता है। प्रेमचंद के गोदान में यथार्थवादी दृष्टि अभिव्यक्त हुई है, जबकि प्रसाद ने आदर्श की स्थापना पर बल दिया। साहित्य में दो मनःस्थितियां बनी रहती हैं, एक ओर आदर्श मूल्यों का पोषण तो दूसरी ओर यथार्थ का। लेकिन एक श्रेष्ठ साहित्यकार उसे ही कहा जा सकता है जो काल की सीमा के मध्य समन्वयात्मक प्रवृत्ति से यथार्थ मूल्यों को लेखनबद्ध करता हुआ मानव-मूल्यों की स्थापना करता है। अतः साहित्य का प्रतिपाद्य विषय जीवन-मूल्य है जो मानव-मूल्यों तथा मानव संवेदनाओं को महत्त्व देता है।

1.2 तुलनात्मक अध्ययन- सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि

1.2.1 तुलना- अर्थ, परिभाषा

तुलना शब्द की व्युत्पत्ति-

वामन शिवराम आप्टे के अनुसार- "तुलना' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की 'तुल' धातु में ल्युट् प्रत्यय के संयोग से बनने वाले शब्द 'तुलनम्' से की है। हिन्दी में 'तुलनम्' शब्द से विकसित 'तुलना' शब्द स्त्रीलिंग भाववाची संज्ञा का वाचक है।" (संस्कृत हिंदी कोश पृष्ठ-433) अंग्रेजी भाषा में 'कम्पेरिजन' शब्द का प्रयोग तुलना शब्द के लिए किया जाता है। 'तुलना' शब्द के अनेक अर्थ हैं। कोशग्रन्थों में इसके अनेक अर्थ दिए गए हैं। 'तुलना' शब्द के कोशगत अर्थों का अवकोलन आवश्यक है जो इस प्रकार से है-

संस्कृत और हिन्दी कोशों में वर्णित अर्थ :-

वामन शिवराम आप्टे अपने कोश में तुलना का अर्थ तोलना, उठाना, निर्धारण करना, आँकना, परिक्षांकन लिया है।' (संस्कृत हिंदी कोश, 433)

आक्सफोर्ड डिक्शनरी में 'तुलना' शब्द की परिभाषा इस प्रकार दी है—“तुलना किन्हीं दो वस्तुओं में समान गुणों एवं अन्तरों का उद्घाटन या प्रस्तुतिकरण अथवा इन्हीं विशेषताओं का संयोजन होती है। तुलना कभी—कभी आरम्भ में सम्भावनापूर्ण लग सकती है पर अन्ततः उसमें कुछ भी सिद्ध न हो सके यह भी नहीं होता है।”(56)

सर मोनियर विलियम अपने कोश ग्रन्थ में तुलना शब्द की व्याख्या करते हुए उसके लिए उठाना, तोलना, आँकना और किसी के साथ किसी की समतुल्यता करना आदि अर्थ निर्धारित करते हैं। (संस्कृत—इंग्लिश कोश, 567)

आचार्य रामचन्द्र वर्मा ने तुलना शब्द के निम्नलिखित अर्थ बताए हैं, “कई वस्तुओं के गुण, मान आदि के एक दूसरे से कम या अधिक अथवा अच्छी या बुरी होने का विचार, मिलान तारतम्य, सदृश्य, समानता उपमा। तराजू पर तौले जाना, तौल या मान में बराबर उतरना।”(लोक भारती प्रमाणिक हिन्दी कोश, 364)

डॉ० श्याम सुन्दर दास हिन्दी शब्द सागर में तुलना शब्द के अर्थ को इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं—“दो या दो से अधिक वस्तुओं के गुण मान आदि के एक दूसरे से घट बढ़ होने का विचार तुलना कहलाता है।”(हिन्दी शब्दसागर, 2115)

1.2.2 तुलनात्मक अध्ययन : अर्थ व परिभाषा

तुलनात्मक अध्ययन अनेकविध विषयों एवं विधाओं की तरह एक ऐसा अध्ययन है जिसके तुलनीय तत्वों के माध्यम से अध्ययन के किसी विशिष्ट क्षेत्र या विषय से नहीं अपितु प्रत्येक क्षेत्र या विषय यथा, धर्म, दर्शन, मनोविज्ञान, सौन्दर्य शास्त्र, संस्कृति, समाजशास्त्र, इतिहास, साहित्य इत्यादि सभी में समता एवं विषमता का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है तथा तुलनात्मकता के माध्यम से विशिष्टता एवं श्रेष्ठता को पहचाना जा सकता है।

तुलनात्मक अध्ययन की परिभाषाएं—

तुलनात्मक अध्ययन के विषय को अनेक विद्वानों ने अपने-अपने अनुसार परिभाषित किया करने का प्रयास किया है। उन्होंने इसका प्रमुखतः वर्गीकरण तीन भागों में किया है, जो इस प्रकार हैं—

1. साहित्य पर आधारित
2. उद्देश्य पर आधारित
3. भाषा पर आधारित

साहित्य के आधार पर विद्वानों के विचार—

साहित्य के आधार पर अनेक विद्वानों ने जो अपने विचार प्रस्तुत किये हैं वे इस प्रकार हैं—

इन्द्रनाथ चौधरी के अनुसार—“तुलनात्मक साहित्य विभिन्न साहित्यों का तुलनात्मक अध्ययन है तथा साहित्य के साथ प्रतीति एवं ज्ञान के दूसरे क्षेत्रों का भी तुलनात्मक अध्ययन है।” (तुलनात्मक साहित्य की भूमिका 5)

डॉ० हरभजन सिंह के अनुसार—“तुलनात्मक अध्ययन को साहित्यिक सामग्रियों और अन्तःदृष्टियों के संगम की क्रिया मानते हैं।” (तुलनात्मक साहित्य 11)

डॉ० नगेन्द्र का मतव्य है—“तुलनात्मक साहित्य जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, साहित्य का तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन प्रस्तुत करता है। यह नाम वास्तव में एक प्रकार का न्यूनदीप प्रयोग है और साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन का वाचक है।” (तुलनात्मक साहित्य 12)

उद्देश्य के आधार पर विद्वानों के विचार—

रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव मानते हैं, “तुलनात्मक साहित्य का मूल लक्ष्य दो या दो से अधिक साहित्यिक कृतियों के अंतः सम्बन्धों का अध्ययन करना है, चाहे उसमें किन्हीं

भी साधन उपकरणों का उपयोग क्यों न किया जाए।" (डॉ०नगेन्द्र, तुलनात्मक साहित्य 11)

डॉ० मनोरम शर्मा अंगीकार करते हैं, "यह अध्ययन अन्तः साहित्यिक अध्ययन है जो अनेक भाषाओं को आधार मानकर चलता और जिसका उद्देश्य होता है— अनेकता में एकता का संधान।" (तुलनात्मक अध्ययन स्वरूप व समस्याएं 35)

मैक्समूलर के अनुसार— "सभी उच्चतर ज्ञान की प्राप्ति तुलना पर ही आधारित होती है।" (तुलनात्मक अध्ययन भारतीय भाषाएँ व साहित्य 119)

टी० एस० इलियट के मतानुसार— "तुलना और विश्लेषण आलोचक के प्रमुख औजार हैं। मूल्यांकन परक आलोचना की श्रेष्ठता को मापने के लिए तुलनात्मक पद्धति का लाभ उठाती है।" (तुलनात्मक अध्ययन स्वरूप व समस्याएं 19)

भाषा के आधार पर विद्वानों के विचार—

डॉ० सरगु कृष्ण के मतानुसार— "तुलनात्मक अनुसंधान विभिन्न भाषा साहित्यों की कृतियों एवं स्थितियों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता हुआ विभिन्न भाषाओं एवं क्षेत्रों में ध्वनित मानव जाति के उदय एवं मस्तिष्क में परिलक्षित भाव साम्य का समुदघाटन कर विश्व मानवता की एकता का निरूपम विश्लेषण प्रस्तुत करता है।" (तुलनात्मक अनुसंधान उसकी समस्याएं 11)

डॉ. वीरेन्द्र श्रीवास्तव हिन्दी में भाषा वैज्ञानिक शोध में लिखते हैं— "तुलनात्मक पद्धति का तात्पर्य है कि किसी भाषा की अन्य समकालिक भाषा या भाषाओं से तुलना करके संरचना की विशेषताओं को प्रस्फुटित किया जाए। यह साम्य और वैषम्य दोनों के उद्घाटन से ही हो सकता है।" (सम्भावना पत्रिका 6)

अतः उपर्युक्त परिभाषाओं के मूल्यांकन के उपरांत कह सकते हैं कि साहित्य के अध्ययन की अनेक विधियों में से तुलनात्मक अध्ययन भी एक विधि है।

तुलनात्मक अध्ययन साहित्य—विषयक आदान—प्रदान के क्षेत्र में विशेष भूमिका अदा करता है। राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय विचारों का प्रकटीकरण एवं उदात्तीकरण

इस विधि द्वारा ही सम्भव है। साहित्यों के तुलनात्मक अध्ययन के अन्तर्गत अध्ययनकर्ता, तुलनीय साहित्यिक रचनाओं व रचनाकारों, लेखकों, विधाओं एवं प्रवृत्तियों में निहित समता एवं विषमता का मूल्यांकन प्रस्तुत करता है। इसके माध्यम से हम विश्व की विभिन्न भाषाओं से भी अवगत होते हैं। तुलनात्मक अध्ययन एक व्यापक संकल्पना है जिसमें सभी प्रादेशिक साहित्यों की तुलना कर उनमें व्याप्त विश्व की सार्वभौम, सांस्कृतिक एकता को निर्धारित करके उसके आधार पर साहित्य के मूल स्वरों के साथ-साथ समग्र व्यक्तित्व तथा उसके सांस्कृतिक हृदय को स्पष्ट किया जा सकता है।

1.2.3 तुलनात्मक अध्ययन— इतिहास और परम्परा

तुलनात्मक शब्द का प्रयोग अंग्रेजी भाषा में 1598 ई० से प्रचलन में है। सबसे पहले 'मेयरस' ने तुलनात्मकता पर आधारित 'ए कम्पेरेटिव डिस्कोर्स ऑफ अवर इंग्लिश पोयट्स विद द ग्रीक लैटिन एण्ड इटालियन पोयट्स' नामक पुस्तक लिखी थी। विज्ञान के क्षेत्र में तुलनात्मक अध्ययन दृष्टि 1800 ई० में क्यूविणे द्वारा दी गई। शीघ्र ही जर्मनी भाषा शास्त्र के क्षेत्र में इस रीति को अंगीकार कर लिया गया। 1830 ई० में फ्रांसीसी कोशकार 'लिटरे' ने इस रीति को अपना लिया। साहित्य के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन का सर्वप्रथम अंग्रेजी भाषा में प्रयोग मैथ्यू आर्नल्ड ने सन् 1848 ई० में अपने एक पत्र में 'ऐम्बियर' के शब्द 'इस्तवार कोपारातीव' का अनुवाद करते हुए किया था। फ्रांसीसी भाषा में इससे पहले से 'लितरेत्योर कोपार' शब्द प्रचलन में था, जो पहली बार 'विलमा' ने 1829 ई० में 'क्यूवियर' के 'अनातोमी कोपारे' 1800 ई० के सादृश्य पर किया गया था। तुलनात्मक साहित्य पद का सर्वप्रथम प्रयोग मैथ्यू आर्नल्ड ने अपने एक निबन्ध में किया था। इसकी पुष्टि करते हुए इंद्रनाथ चौधरी अपनी पुस्तक 'तुलनात्मक साहित्य: भारतीय परिप्रेक्ष्य' में लिखते हैं, "तुलनात्मक साहित्य का सर्वप्रथम प्रयोग मैथ्यू आर्नल्ड ने सन् 1848 में अपने एक पत्र में सबसे पहले किया था वस्तुतः तुलनात्मक साहित्य में दो देश, दो भाषा, दो रचनाकारों की कृतियों को एक दूसरे के सापेक्ष रखकर देखा जाता है।" (10)

एच०एम० पॉसनेट ने 1886 ई० में अपनी एक पुस्तक का नाम 'कम्पैरेटिव लिटरेचर' रख इस ज्ञानानुशासन को स्थायित्व प्रदान करने का प्रयास किया। इसके बाद सन् 1901 ई० में कॉन्टेपीरटी रिव्यू में 'द साइंस ऑफ कम्पैरेटिव लिटरेचर' नामक उनका एक लेख भी प्रकाशित हुआ। इस तरह उनके प्रयास स्वरूप बीसवीं शती के आरम्भ में ही 'कम्पैरेटिव लिटरेचर' पद का प्रयोग शुरू हो गया।

भारत में तुलनात्मक अध्ययन का इतिहास एवं परम्परा—

उन्नीसवीं शताब्दी के युग में साहित्य में अपूर्णता का बोध यूरोप में ही नहीं भारत में भी प्रारम्भ हुआ था। यूरोपीय विद्वानों ने संस्कृत का पहला परिचय जो पाया उसके कारण तुलनात्मक भाषा विज्ञान के विकास को बड़ी प्रेरणा मिली। आगे तुलनात्मक धर्म एवं पुराण विद्या का भी विकास हो सका। एन० ई. विश्वनाथ अय्यर तुलनात्मक अध्ययन के इतिहास पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं—

“सन् 1784 में कलकत्ता की एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगला के अपने विख्यात उद्घाटन भाषण में सर विलियम जॉस ने ग्रीक व लैटिन से संस्कृत की समानता का उल्लेख किया। उससे भी आठ वर्ष पूर्व उनके मित्र एन० बी० हैड संस्कृत से फारसी, अरबी ग्रीक और लैटिन में समता देख आश्चर्य में पड़ गये थे। ऐसे अनुभवों ने प्राच्यविद्या विशारद मनीषियों को कुछ अखिल विश्व तत्त्वों, संस्कृति के कुछ आदि प्रारूपों को देखने का उत्साह दिलाया। इसी से यहाँ तुलनात्मक साहित्य के विकास का अनुकूल वातावरण बन सका।” (तुलनात्मक साहित्य 46)

भारतीय तुलनात्मक अध्ययन के इतिहास के बारे में जानकारी देते हुए पासनेट ने इस प्रकार कहा है—

“भारतीय तुलनात्मक साहित्य की नींव सर्वप्रथम यूरोपीय विद्वानों ने रखी। तुलनात्मक व्याकरण सर्वप्रथम रोबर्ट कैल्डवेल ने लिखा फिर अल्बर्ट, मैक्समूलर आदि ने भी तुलनात्मक साहित्य में अपना योगदान दिया। भारतीय मनीषियों में सर्वप्रथम सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने सन् 1936 में आक्सफोर्ड में 'इस्टर्न रिलीजेंस एन्ड वेस्टर्न थाट' विषय पर भाषण देकर तुलनात्मक दर्शन

व धर्म के प्रति आसक्ति दिखाई।”(तुलनात्मक अध्ययन स्वरूप व समस्याएं 36)

भारतीय तुलनात्मक अध्ययन के क्रम वार होने वाले विकास के बारे में एन० ई० विश्वनाथ अय्यर ने अपने विचार इस प्रकार दिये हैं—“रवीन्द्र नाथ टैगोर ने तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन का समर्थन अकादमिक शिक्षा विषय के रूप में किया। सन् 1907 में रवीन्द्र नाथ ने बंगला में इसे विश्व साहित्य का नाम दिया। टैगोर के इस भाषण के समय यूरोप व अमेरिका में तुलनात्मक अध्ययन बचपन में था।”(तुलनात्मक साहित्य 48)वे आगे लिखते हैं

“बीसवीं सदी के दूसरे दशाब्द में सन् 1919 में सर आशुतोष मुखर्जी ने आधुनिक भारतीय भाषाओं का पहला विभाग कलकत्ता विश्वविद्यालय में खोला। उन्होंने उसी वर्ष ‘हाबड़ा बंगीय साहित्य सम्मेलन’ में बंगला विद्वानों को बंगाली के अलावा अन्य भारतीय साहित्यों का अध्ययन करने का आह्वान किया। यह सिलसिला यूं ही चलता रहा सन् 1970 में शिमला स्थित भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस स्टडी) की तरफ से सिफारिश की गई कि भारतीय साहित्य का सामान्य घटक एक यथार्थ है, उसे स्वीकार करने पर विभिन्न भारतीय भाषाओं और साहित्यों के अध्ययन का एक विशाल आधार और स्वस्थ नवीनीकरण मिलेगा। इसके पश्चात् सन् 1974 में आधुनिक भारतीय भाषाओं के विभाग में कंपेरेटिव इंडियन लिटरेचर’ के नाम से भारतीय साहित्य में एम०ए० पाठ्यक्रम शुरू किया गया इससे देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में यह शब्द लोक प्रिय हो गया।”(तुलनात्मक साहित्य 49)

अतः कहा जा सकता है कि तुलनात्मक अध्ययन का इतिहास अत्यंत प्राचीन है क्योंकि तुलना करने की प्रवृत्ति मनुष्य के अन्तर्मन में जन्म से विद्यमान रहती है। यह अध्ययन प्रणाली दिन-प्रतिदिन विकास की ओर अग्रसर हो रही है। वर्तमान भारत के प्रत्येक विश्वविद्यालयों में प्रत्येक भाषाओं में अनेक विषयों पर तुलनात्मक अध्ययन करवाये जा रहे हैं।

1.3.4 तुलनात्मक अध्ययन के तत्व—

तुलनात्मक शोध के अन्तर्गत विषय के सर्वांगीण अध्ययन तथा निरीक्षण एवं परीक्षण के सन्दर्भ में शोध कर्ता को अधोलिखित तत्वों के प्रति ध्यान देना नितांत आवश्यक है। ताकि प्रस्तुत विषय और तुलनीय विषय के सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति हो जाए। एस. गुलाम रसुल अधोलिखित चार तत्व स्वीकार करते हैं।

1. समता

2. अभेद

3. पार्थक्य

4. विषमता

1. समता— समता तुलनात्मक अध्ययन का एक महत्वपूर्ण एवं अत्यंत आवश्यक तत्व है। समकालीन दो कवियों, दो साहित्यकारों, दो नाटककारों, दो एकांकीकारों, दो उपन्यासकारों के जीवन में बहुत सी समानताएं दृष्टिगोचर होती हैं। दो व्यक्ति यदि एक ही काल के न हो फिर भी यह देखने को मिल जाता है कि उनकी कृतियों में या उनके जीवन में समानता पाई जाती है। जिस प्रकार बालक की क्रीड़ाएं, नारी पुरुष के प्रेम सम्बन्ध इत्यादि भावनाओं में समानता होने की संभावना है। समानता के आधार पर किसी भी कृति का मूल्यांकन करना तथा निष्कर्ष तक पहुँचना बहुत ही आसान हो जाता है जो कि तुलनात्मक साहित्य की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि सम्पूर्ण संसार में मानवीय भाव स्थायी रूप से वही रहते हैं, अन्तर केवल उनके रूप में पड़ जाता है। स्वभावतः जहाँ मानव भावों का वर्णन होगा विभिन्न साहित्यकारों के साहित्य में समता आ ही जाएगी।

2. अभेद— तुलनात्मक अध्ययन का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व अभेद है। जो दो कवियों की कृतियों, दो लेखकों की कृतियों का वर्णन करते समय उनके निजी व्यक्तित्व को तटस्थ रखा जाना चाहिए क्योंकि प्रत्येक कवि, लेखक या साहित्यकार अपनी रचनाओं में अपनी प्रतिभा का उत्कृष्ट रूप प्रस्तुत करता है जिसमें उसका व्यक्तिगत जीवन न के बराबर होता है। जिस प्रकार एक कवि में अभेद पाया जाता है। उसी

प्रकार दूसरे लेखक या कवि में भी इस तत्व का पाया जाना अत्यंत आवश्यक है। कवि या लेखक अपनी रचनाओं की तुलना में उस गहराई में उतर जाता है जिससे वह अपनी तुलनात्मक कृति को सर्वोत्कृष्ट सिद्ध कर सके। यही कारण है कि प्रत्येक तुलनाकार कवि के व्यक्तित्व या लेखक के व्यक्तित्व एवं रचनाओं के प्रत्येक पक्षों का अवलोकन करता है।

3. पार्थक्य—पार्थक्य भी तुलनात्मक अध्ययन का महत्वपूर्ण तत्व है। जिसका अभिप्राय है अलग होने का भाव। रचनाकारों में जहाँ एक ओर समता पाई जाती है, वहीं पर दूसरी ओर पार्थक्य के बिन्दु भी दृष्टिगोचर होते हैं। पार्थक्य के यह बिंदु उन परिस्थितियों व मानसिक धरातलों, उन अनुभवों पर निर्भर करते हैं जिन अनुभवों को उन दो लेखकों ने एक ही परिस्थिति या भिन्न परिस्थितियों में रहते हुए विभिन्न पारिवारिक, जातीय, परिप्रेक्ष्यों में अपनाया। उदाहरण के तौर पर रामचरित मानस और कदम्ब रामायण ले सकते हैं। यह भक्ति और आध्यात्मिकता आधार पर किया गया है। इस क्षेत्र में दो साहित्यकारों, दो क्षेत्रों के लोकगीतों, लोक देवता, लोक रूढ़ियों, दो कवियों के कृतित्वों इत्यादि पर बहुत अधिक काम हुआ है।

4. विषमता— समता, अभेद, पार्थक्य के साथ-साथ विषमता भी तुलनात्मक अध्ययन का चौथा महत्वपूर्ण अंग है। तुलना करते समय समानता के साथ-साथ विषमता भी प्रमुख स्थान रखती है। इसके माध्यम से ही किसी कृति, वस्तु, व्यक्ति या स्थान का उच्चकोटि का तुलनात्मक अध्ययन सम्भव है। इसके अन्तर्गत उन अनुभवों एवं अभिव्यक्तियों, विचारधाराओं को रेखांकित कर सकते हैं जो एक रचनाकार अथवा साहित्यकार के साहित्य या कृति में उपलब्ध पर दूसरे रचनाकारों या कृति में वह विरोधाभास के रूप में विद्यमान हो। तुलना में इस प्रकार से दो भिन्न साहित्यिक व्यक्तित्वों, साहित्यिक कृतियों की विरोधमूलकता अभिनव निष्कर्ष देने वाली होती है तथा नवीन तथ्यों को सामने लाने में सहायक होती है। जो कि अन्वेषकों के लिए अत्यंत लाभदायक सिद्ध होती है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि समता, अभेद, पार्थक्य और विषमता इन चारों तत्वों के आधार पर यदि अध्ययन कर्ता या शोधार्थी अध्ययन करता है तो

तुलनात्मक अध्ययन सर्वश्रेष्ठ एवं उच्चकोटि का हो जाता है। इनके माध्यम से साहित्य के प्रत्येक पक्षों का उद्घाटन करना आसान हो जाता है तथा स्वतः ही सारे तथ्य सामने आ जाते हैं। विश्व के विभिन्न भाषाओं का आपसी तुलनात्मक अध्ययन करके विश्व मानव को एकता के सूत्र में बांधा जा सकता है। इतना ही नहीं तुलनात्मक अध्ययन यदि उपरोक्त तत्वों को ध्यान में रखकर किया जाता है तो यह अध्येता की योग्यता के विकास का अवसर प्रदान करता है। वह दो साहित्यों से जुड़ी हुई समस्याओं का विश्लेषण करता है। तुलनात्मक पद्धति से अन्वेषक की दृष्टि सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होकर अतल गहराई में स्थित विषय की अन्तरात्मा का स्पर्श कर लेती है। इसके अलावा किसी विषय का एकांगी अध्ययन की अपेक्षा तुलनात्मक अध्ययन करने से ज्ञान की अनन्त वृद्धि भी होती है।

1.2.5 तुलनात्मक अध्ययन का विकास—

तुलना करना या किसी एक की तुलना में अन्य को श्रेष्ठ मानना पुरानी प्रक्रिया है। तुलनात्मक साहित्य जर्मन, फ्रांसीसी अथवा अंग्रेजी साहित्य के स्वतंत्र अध्ययन के बाद विकसित हुआ है जो भारतीय साहित्य से निश्चित ही पहले का है। तुलनात्मक साहित्य को लेकर भी विद्वानों में विवाद रहा है। वसवेल ने इसका तुलनात्मक व्युत्पत्ति नामकरण किया तो फ्लेचर (जर्मनी) ने साहित्य का तुलनात्मक विज्ञान शब्द का प्रयोग किया। पासलेट और प्रो. लेन कूपर ने तुलनात्मक साहित्य शब्द को ही स्थायित्व प्रदान किया। तुलनात्मक अध्ययन को लेकर पाश्चात्य साहित्य को तीन क्षेत्रों में विभक्त किया जा सकता है।

1. अमरीकी स्कूल
2. पेरिस जर्मन स्कूल
3. रूसी स्कूल

1. अमरीकी स्कूल—

अमरीकी स्कूल के विद्वान् तुलनात्मक साहित्य के अंतर्गत ज्ञान के विविध क्षेत्रों के बीच साहित्य के संबंधों को स्वीकार करने के साथ-साथ साहित्यालोचन

को भी तुलनात्मक अध्ययन का महत्त्वपूर्ण अंग मानते हैं। सन् 1886 में एच. एम. पोजनेट ने अपने 'कम्पेरेटिव लिटरेचर ग्रंथ में यह स्पष्ट किया कि तुलना करना मनीषी और समीक्षक का परंपरागत कार्य रहा है। 1910 में प्रख्यात अमरीकी तुलनाशास्त्री एफ. डब्ल्यू. चैडलर ने सिनसिन्नाट विश्वविद्यालय में तुलनात्मक साहित्य के प्रोफेसर नियुक्त हो जाने के बाद अपने पहले ही भाषण में तुलनात्मक साहित्य का पूर्ववृत्त प्रस्तुत किया।

अमरीकी तुलनावाद का स्वरूप निर्धारण रेने वेलेक, हेरी लेविन और डेविड मेलोन जैसे विद्वानों द्वारा किया गया है, इसलिए वह शैलीगत तत्त्वों, काव्य विधाओं, आंदोलनों और परंपराओं समानताओं, मूल अभिप्रायों, के तुलनात्मक अन्वेषण को प्रोत्साहन देता हुआ इस प्रक्रिया में साहित्यिक रचना के कलात्मक वैशिष्ट्य का उद्घाटन करता है। रेने वेलेक के अनुसार साहित्य का इतिहास के लिए तथ्यों का चयन भी अपने आप में एक आलोचनात्मक क्रिया है, वह मूल्यांकनपरक भी है। 1908 में स्पिगार्न ने 'इंगलिश क्रिटीकल एसेज ऑफ द सेवटींथ सेंचुरी' तथा रेने वेलेक ने 'माडर्न किटिसिज्म' ग्रंथों में तुलनात्मक सामग्री प्रस्तुत की। शिक्षातंत्र में तुलनात्मक साहित्य का प्रवेश सबसे पहले अमरीका के विश्वविद्यालयों में बीसवीं शती में हुआ। सर्वप्रथम कारनेल विश्वविद्यालय में तुलनात्मक साहित्य के स्वतंत्र विभाग की स्थापना हुई। यद्यपि उसके अध्यक्ष प्रो. लेन कूपर ने इस नामकरण को स्वीकार नहीं किया। अमरीका के हार्वर्ड, येल प्रिंसटन, शिकागो, वोस्टन और फिलाडेलफिया आदि विश्वविद्यालयों ने बड़ी तत्परता दिखायी। इंगलैंड के ड्राइडन और डॉ. जानसन ने भी बहुभाषीय तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत किये हैं।

2. पेरिस जर्मन स्कूल—

पेरिस जर्मन स्कूल के अंतर्गत फ्रांसीसी विद्वान तथ्यात्मक सम्पर्कों और दस्तावेजों के विश्लेषण पर ज्यादा बल देते हैं। इस विचार का सूत्रपात गोइथे ने जर्मनी में उन्नीसवीं शती के प्रथम चरण के दौरान किया था। इसकी पहली पत्रिका 'रिव्यू द लिटरैच्यूर कंपरी' फ्रांसीसी भाषा में पेरिस विश्वविद्यालय की ओर से प्रकाशित हुई। कारे ने तुलनात्मक साहित्य को साहित्येतिहास का एक भाग कहा।

आधुनिक आलोचक पीशवाज तथा रूसो ने तुलनात्मक साहित्य के क्षेत्र में साम्य या वैषम्य मूलक तुलना तथा प्रभाव के सूत्रों के अध्ययन का प्रसार करते हुए संश्लेषणात्मक दृष्टि को स्वीकार किया। फ्रांसीसी तुलनावाद के धुरंधर विद्वान सारवोन विश्वविद्यालय के रेने एतिएम्बिल के परिवर्तित दृष्टिकोण ने इस प्रक्रिया को अधिक सुविधाजनक बनाते हुए अनछुए क्षेत्रों की ओर आकर्षित किया। वहाँ साम्य-वैषम्य की दृष्टि से प्रस्तुत अध्ययन महत्त्वपूर्ण एवं काफी सफल रहे हैं। फ्रांस के बवलो व सैत व्यूब, जर्मनी के गोइथे व श्लेगल ने भी बहुभाषीय तुलनात्मक अध्ययन किये हैं।

3. रूसी स्कूल—

तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र में रूसी स्कूल का भी महत्त्व कम नहीं है, इसलिए रूसी तुलनात्मक साहित्य का एक स्वतंत्र स्कूल ही बन गया है। इस स्कूल के विद्वानों के लिए यह तुलनात्मक साहित्य एक सार्विक साहित्यिक संवृत्ति का सार संग्रह है जो विभिन्न देशों के जनसमूह के सामाजिक जीवन के ऐतिहासिक विकास पर निर्भर है। दूसरे शब्दों में, इनके अनुसार तुलनात्मक अध्ययन के अंतर्गत साहित्यिक विधाओं, आंदोलनों, प्रकारों तथा सार्विक साहित्यिक संवृत्ति का अध्ययन होता है। विद्वान मुरमनस्की के अनुसार समाज साहित्य का आवश्यक अस्त्र है तो साहित्य संयोग से उसकी अधिरचना है। इसलिए कला और साहित्य का विकास सामाजिक ऐतिहासिक विकास के समानांतरता है। यूनान के प्रायः सभी प्रसिद्ध आलोचक अरस्तू, लौजाइनस, दिमेत्रियाद आदि आरंभ से ही कवियों, नाटककारों का तुलनात्मक अध्ययन करते रहे हैं। लातीनी भाषा के होरेस ने अपने ग्रंथ 'आर्स पोइतिका' में यूनानी व लातीनी भाषाओं का तुलनात्मक साहित्य अधिक लोकप्रिय नहीं हो सका, जबकि अध्ययन उन्नीसवीं सदी से ही आरंभ हो गया था। इन सभी संप्रदायों ने तुलनात्मक साहित्य की व्याख्या करते हुए उसकी अनेक विशेषताओं का उल्लेख किया है। इस सबसे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि तुलनात्मक साहित्य एक स्वतंत्र विषय है जिसमें विभिन्न भाषाओं में रचित साहित्यों की एक संपूर्ण इकाई के रूप में व्यापक पहचान की और अधिक संभावना बनती है। यह काम

विभिन्न भाषाओं में रचित साहित्यों की मानवीय ज्ञान और विशेष रूप से कलात्मक तथा वैचारिक क्षेत्रों के साथ तुलना से ही संभव हो सकता है।

1.2.6 साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन का महत्त्व इस प्रकार है—

1. विभिन्न साहित्यों का एक जगह व्यवस्थित तुलनात्मक ज्ञान— तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से हमें एकाधिक साहित्य विषयों की जानकारी प्राप्य होती है। जिस भाषा के साहित्य को हमने नहीं पढ़ा उसकी जानकारी भी हमें तुलनात्मक अध्ययन से मिलती है। विभिन्न राज्यों की भाषा में लिखे गये तुलनात्मक अध्ययन गंगा यमुना, कृष्ण, कावेरी आदि सरिताओं के तट पर रहने वाले अनेक प्रकार के जनसमुदाय को एक ही सूत्र में बांधता है।

2. एकत्व की व्यापक संकल्पना में सहायक— साहित्य का तुलनात्मक साहित्य अध्ययन विश्व साहित्य राष्ट्रीय साहित्य जैसी संकल्पना की प्रतिष्ठा में सहायक है। तुलनात्मक अध्ययन विश्व साहित्य की एकता का निरूपक भी है। हिन्दी और अन्य प्रादेशिक साहित्यों की समृद्धि होती है। तुलनात्मक अध्ययन का महत्त्व मानववाद और विश्वमानववाद, वसुधैव कुटुम्बकम् तथा भ्रातृत्व भावना की दृष्टि से भी है।

3. सांस्कृतिक और राष्ट्रीयता का विकास— तुलनात्मक साहित्य का अध्ययन सांस्कृतिक और राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि दो अलग-अलग साहित्यों का जन्म तुलनात्मक अध्ययन में किया जाता है तो वहाँ उन दोनों की संस्कृति और राष्ट्रीयता विषयक दृष्टिकोण भी उजागर होते हैं। तुलनात्मक अनुसंधान हमारी अनेक प्रकार की विघटनशीलता को दूर कर हमारी मूलभूत एकता की पुनः स्थापना कर सकता है। तुलनात्मक अनुसंधान के द्वारा अनेक समानता परक तथ्यों एवं सत्यों को स्थापित करके भारतीय संस्कृति की मूलभूत एकता (वसुधैव कुटुम्बकम्) की भावना को पुनः चरितार्थ किया जा सकता है।

4. समन्वय स्थापित करने की शक्ति—भारत जैसे विशाल देश में जिसमें अनेक प्रकार की भाषाएं एवं विभिन्न संस्कृतियां पाई जाती हैं। इसके बावजूद भी इसमें राष्ट्रीयता दृढीकृत होती है। तुलनात्मक साहित्यकार एवं अन्वेषक सभी में समन्वय स्थापित करते हैं। डॉ० भीमसेन निर्मल के विचारानुसार, "संसार के विभिन्न साहित्यों में

अभिव्यक्त मानव चेतना की एकता को प्रकाश में लाकर, तत्वगत न होकर मात्र प्रयोगगत पार्थक्य का निरास कर, विश्व मानव सौभातत्व की स्थापना करने का एक मात्र साधन तुलनात्मक अनुसंधान ही है। ज्ञान और अनुभूति के क्षेत्र में सर्वसम्मान्य मान्यताओं को उभारकर, एकता का सबसे अधिक सामंजस्यपूर्ण उदाहरण उपस्थित करने का कार्य तुलनात्मक अनुसंधान करता है।

5. ज्ञान क्षेत्र का विस्तार— तुलनात्मक अध्ययन हमारे सीमित ज्ञान क्षेत्र को विस्तृत करता है और अन्य साहित्य की उपलब्धियों से हमें परिचित करवाता है। उस समय मनुष्य अपने देश, भाषा, जाति और काल के बन्धनों को पार कर विश्व साहित्य के रस सिंधु में डूब जाता है। तब मनुष्य अपने प्रांत, जाति समुदाय एवं भाषागत अहं को त्याग देता है। अतः इस प्रकार दो साहित्यों का तुलनात्मक अध्ययन मानव के इस महान लक्ष्य का अंग बनकर उसी मात्रा में मानव के ज्ञान क्षेत्र के विस्तार में सहायक होता है।

6. अलग-अलग युगों का तुलनात्मक अध्ययन— तुलनात्मक साहित्य दो अलग-अलग युगों के आपसी सम्बन्ध का ज्ञान करवाता है। दो युगों में रची गई अलग-अलग कृतियां और घटित घटनाओं का तुलनात्मक अध्ययन इनकी पारस्परिकता की जानकारी देता है।

7. दो भिन्न रचनाकारों की रचनाओं का तुलनात्मक अध्ययन — तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा दो भिन्न-भिन्न रचनाकारों की कृतियों के भाव विचार दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण भाषा शैली आदि के विषय में हमारा ज्ञान बढ़ाता है, कवि या रचनाकार किसी भी देश की भाषा, रहन-सहन, वातावरण शासन, रीति रिवाज आदि में भिन्नता होते हुए भी सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त मानव समाज को मूलभूत। प्रवृत्तियों के आधार पर एकता के सूत्र में बांधता है। तुलनीय कवि और उसकी रचित कृतियां एक-दूसरे को नवीन सन्दर्भ भी प्रदान करती है।

8. सत्यान्वेषण की क्षमता — तुलनात्मक अध्ययन का महत्त्व यह भी है कि सत्य का अन्वेषण करना क्योंकि प्रत्येक अन्वेषक को तुलना करते हुए निष्कर्ष देता है। वह

सदैव निष्पक्ष होकर दूध का दूध पानी का पानी करता हुआ सबके समक्ष यथार्थ को प्रस्तुत करता है।

9. साहित्य और साहित्य के बीच प्रभाव—

1. पूर्ववर्ती साहित्य का परवर्ती साहित्य पर प्रभाव

2. समकालीन साहित्य पर पारस्परिक प्रभाव

परवर्ती रचित साहित्य किसी न किसी रूप से परवर्ती साहित्य पर कुछ न कुछ अपना प्रभाव छोड़ जाता है। यही नहीं समकालीन साहित्य भी दूसरे समकालीन साहित्य को प्रभावित करता है।

10. अन्तर पाठीय महत्त्व— तुलनात्मक अध्ययन का आधार अन्तर पाठीय अध्ययन का मार्ग प्रशस्त की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके द्वारा किसी दूसरे के कथानक से अंतःग्रहण कर कोई दूसरा साहित्यकार अपने साहित्य की रचना करता है।

11. साहित्य में समाविष्ट समाज प्रचलित—मूल्यों मर्यादाओं का उद्घाटन— जीवन दर्शन और सामाजिक मूल्यों की समझ और उसकी गतिविधि में होने वाले परिवर्तन की दृष्टि से भी इसका कम महत्व नहीं है। क्योंकि तुलनात्मक अध्ययन ही एक ऐसा अध्ययन है जो युगों में आए परिवर्तन का उद्घाटन कर सकता है।

12. सांस्कृतिक एकता— अपने देश में विभिन्न साहित्यों की तुलनात्मक अध्ययन भारतीय संस्कृति की मूल भूत एकता का उद्घाटन भी करती है।

13. पूर्वाग्रहों से मुक्ति— सम्यक रूप से किया जाने वाला तुलनात्मक अध्ययन समता और विभेदों के तटस्थ आधार पर भ्रम और पूर्वाग्रह मुक्त ज्ञान—प्रदान करवाता है।

1.2.7 तुलनात्मक अध्ययन की पद्धतियाँ—

तुलनात्मक अध्ययन की कोई निश्चित पद्धति नहीं है अनेक पद्धतियाँ का अवलंबन ले कर तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। डा मनमोहन सहगल ने कुछ प्रचलित पद्धतियों को उजागर किया है।

(1) दो भाषाएँ तथा एक विधा –

इस पद्धति में शोधार्थी अपनी मातृभाषा और किसी अन्य भाषा को लेकर अनुसंधान कर सकता है। इस विषय पर तुलनात्मक अनुसंधान करने वालों की संख्या पर्याप्त मात्रा में है। जैसे—“हिंदी और कन्नड की नई कविता : तुलनात्मक अध्ययन आदि।

(2) एक ही भाषा की दो विधाओं अथवा प्रवृत्तियों का अध्ययन – इस पद्धति में एक ही भाषा की दो प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन होता है। जैसे—“मराठी के लोकगीत और लोककथाओं का शील्पगत अध्ययन आदि।

(3) एक ही भाषा साहित्य में दो कालों की तुलना – इसमें एक ही भाषा का दो कालों को आधार बनाकर तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। जैसे—“द्विवेदी युगीन कविता और छायावाद का तुलनात्मक अध्ययन या भक्तिकाल और रीतिकाल के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन” आदि विषयों पर तुलनात्मक अध्ययन हो सकता है।

(4) एक ही भाषा साहित्य में दो लेखक या दो कृतियों – इसमें एक ही भाषा के किसी भी दो लेखक या दो कृतियों को लेकर तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है, जैसे— कबीर और जायसी के रहस्यवाद का तुलनात्मक अध्ययन आदि।

(5) दो भिन्न भाषाओं के साहित्य का काल विशेष— इस प्रकार का तुलनात्मक अध्ययन में किसी भी दो भाषाओं के साहित्य के काल विशेष को लेकर अध्ययन हो सकता है। जैसे—हिंदी और तेलगु के वैष्णव कवियों का तुलनात्मक अध्ययन। (16वीं शताब्दी) हिंदी और मराठी का निपुण संत काव्य (11 वीं शताब्दी से 15 वीं शताब्दी तक) आदि प्रकार से तुलनात्मक अध्ययन होता है।

(6) दो भाषाओं के अलग-अलग लेखक—दो भाषाओं के अलग-अलग लेखकों को लेकर अनुसंधान किया जाता है। जैसे—दशरथि और दिनकर की कविता में राष्ट्रीय गाना या विजय दलकर और सुबोध पंडित के नाटकों का तुलनात्मक अनुशीलन आदि।

(7) दो भिन्न भाषाओं की एक ही विधा पर लिखनेवाले दो लेखक—जितनी भी साहित्यिक विचार से कहानी, कविता, उपन्यास, नाटक आदि अलग-अलग विधाओं पर शोधार्थी शोध का विषय चुन सकता है। यह प्रवृत्ति काफी व्यापक और विस्तृत है। कबीर और तुकाराम, नामदेव और गुरुनानक जैसे विषयों पर इस प्रवृत्ति के अंतर्गत अनुसंधान हो सकता है।

(8) दो भिन्न भाषाओं की एक साहित्यिक प्रवृत्ति—इस प्रवृत्ति को आधार बनाकर काफी अनुसंधान हुआ है। दो भिन्न भाषा-भाषी लेखकों की प्रवृत्ति को सामने रखकर शोध जैसे—नागार्जुन और नारायण सुर्वे के काम में चित्रित प्रगतिशील चेतना का तुलनात्मक अध्ययन आदि।

(9) दो भिन्न भाषाओं के काव्यशास्त्र की तुलना— इस के अंतर्गत दो भाषाओं के काव्यशास्त्र का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। हिंदी तथा कोंकणी का तुलनात्मक अध्ययन आदि।

निष्कर्ष —

वैश्विक स्तर पर तुलनात्मक अध्ययन का महत्व बढ़ रहा है। जिस तरह मनुष्य वस्तुओं में तुलना करता है उसी प्रकार साहित्यिक क्षेत्र में भी साम्य-भेद तथा ज्येष्ठ-कनिष्ठता का मूल्यांकन किया जाता है। इस अध्ययन के द्वारा ही मनुष्य ज्ञान के व्यापक आयामों को छू सकता है। ज्ञान की परिपुष्टि तुलना के बिना संभव नहीं है। सिर्फ साहित्य ही नहीं बल्कि विज्ञान, कला, मनोरंजन उद्योग आदि विभिन्न क्षेत्रों का मूल्यांकन भी तुलनात्मक अध्ययन द्वारा किया जा सकता है।

तुलनात्मक अध्ययन के जरिए हम अनेक भाषा-भाषी राष्ट्र तथा वहाँ की संस्कृति और सभ्यता का अध्ययन कर सकते हैं। एक राज्य का साहित्य दूसरे राज्य के साहित्य से या एक राष्ट्र का साहित्य दूसरे राष्ट्र के साहित्य से साम्य रखता है या नहीं, श्रेष्ठ है या कनिष्ठ आदि बातों की जानकारी तुलनात्मक अध्ययन के मूल्यांकन के बाद होती है। साहित्य में परिवर्तन या सुधार की भावना लाने में भी तुलनात्मक अध्ययन का फायदा होता है।

3.1. अमृतलाल मदान— जीवन परिचय

अमृतलाल मदान का जन्म जिला डेरा गाजी खॉं (पाकिस्तान) के तौंसा कस्बे के एक कुलीन परिवार में श्री दयालचन्द मदान एवं श्रीमती प्रेम देवी के घर 2 अगस्त, 1941 को हुआ। मदान का बचपन का नाम अमर था। यह नाम इनके दादा ने रखा था क्योंकि वे कहा करते थे कि कौमें आती रहेंगी, मिटती रहेंगी . . . मुल्क बनते—बिगड़ते रहेंगे, लेकिन दरिया बादशाह हमेशा बहता रहेगा, अमर रहेगा। इसलिए अमृतलाल का नाम भी अमर रख दिया। अमृतलाल मदान का प्यार का नाम अमरू था। बचपन में इनके दादा तथा सभी बच्चे इनको प्यार से अमरू कहकर बुलाते थे। अमृतलाल मदान बचपन से ही शांत स्वभाव के थे। जब ये बालक ही थे मलेरिये की बीमारी के कारण दिवाली के दिन इनकी माता का देहांत हो गया था। इनकी दूसरी माता श्रीमती सुन्दरी देवी ने इनका लालन—पालन बड़े प्रेम से किया किया। ये नौ भाई—बहन हैं। मदान पिता की प्रथम संतान हैं। इनके पिता श्री दयाल चन्द मदान बहुमुखी व्यक्तित्व के धनी थे। इनके पिता जी नहरी विभाग में ओवरसियर थे। अमृतलाल मदान के पिता जी बहुत ही सज्जन व शांत स्वभाव के व्यक्ति थे। इनकी माता श्रीमती सुन्दरी देवी ने हर कदम पर अपने पति के घर—परिवार और सामाजिक दायित्व को बखूबी निभाते हुए समाज में सम्मानित दम्पति का स्थान प्राप्त किया है। अमृतलाल मदान को अपने माता—पिता का भरपूर स्नेह मिलता रहा। लेकिन विधि के विधान को कौन टाल सकता है। 16 फरवरी 2005 को इनके पिता जी का स्वर्गवास करनाल में छोटे भाई सुदर्शन के घर पर हुआ। मृत्यु से कुछ क्षण पहले पिता जी इन्हें बहुत याद कर रहे थे, तब इनको फोन किया गया तो किसी कारणवश पिता के पास पहुँचने में लेट हो गए, समय को कौन अपने वश में कर सकता है। अमृतलाल मदान जी के पिता जी के पास पहुँचने से पहले पिता जी ने इनको याद करते हुए प्राण त्याग दिए। अमृतलाल मदान का किसी कारणवश देर से पहुँचना और पिता से अन्तिम समय में न मिल पाना उन्हें सारी जिन्दगी सताता रहेगा। यदि वे कुछ क्षण पहले पहुँच जाते तो अपने पिता से जीवन के अन्तिम समय में मिल पाते। अमृतलाल मदान के दादा श्री नूतनदास जी सिंधु नदी पर पत्तन का कार्य करते थे। इनके दादाजी ज्यादातर नदी

के किनारे रहते थे। दरिया का चौड़ा पाट रेंदते हुए सामान तथा सवारियों को दूसरे किनारे पर ले जाते थे। इनके दादा जी बहुत कर्मठ और परिश्रमी थे। सब लोगों से प्यार करते थे। समाज में मिलकर रहते थे।

बचपन—

मदान जी का बचपन जहाँ जटिलताओं से व्याप्त रहा है वहीं विविधताओं से सम्पन्न भी। तीन वर्ष की आयु में अमृतलाल मदान मृत्यु से बाल-बाल बचे जब इनके मकान की कड़ियों की छत अचानक गिर गई थी। इनकी माता जी इन्हें कुछ क्षण पहले बाहर ले आई थी। दूसरी माँ ने अमृतलाल मदान का बहुत प्यार से पालन पोषण किया अतः कभी इन्हें यह महसूस नहीं हुआ कि वह उनकी सौतेली माँ है। अमृतलाल मदान की माता जी का देहान्त दीपावली के दिन हुआ था, इस कारण मदान जी के मन में दीपावली के दीपकों से जगमगाती रात में भी मन में उदासी रहती है। वे बचपन से ही पटाखे चलाने में रुचि नहीं रखते हैं। बचपन में कुछ समय अमृतलाल जिस स्कूल में पढ़े थे। उस स्कूल में उर्दू लिखने पढ़ने पर विशेष बल दिया जाता था। उस्ताद उर्दू में सुलेख कलम से लिखवाते थे अगर सुलेख अच्छा न बन पाता था तो उस्ताद दण्ड देते थे, जैसे मुर्गा बनाना, हाथ में कलम देकर हाथ भींचना, डण्डे से पिटाई करना आदि। अमृतलाल मदान के पिता जी की ड्राईंग बहुत अच्छी थी। बचपन में मदान कार, साईकल, जहाज आदि बनवाने की हठ करते थे तथा पिता जी कागज़ पर ड्राईंग बना देते थे। अमृतलालमदान कार, जहाज के कागज़ के चित्र जेब में लेकर घूमा करते थे तथा वे कहा करते थे ये सभी चीजें मेरी हैं, बड़ा होकर मैं इनमें घूमा करूँगा। इनके पिता जी ओवरसियर थे उस समय ओवरसियर को बहुत बड़ा माना जाता था। घर के नजदीक ही प्राथमिक पाठशाला थी। 1957 में चौथी श्रेणी पास की। इनके पिता जी कम अंक आने पर बहुत डाँटते थे तथा अच्छे अंक आने पर इनाम भी देते थे। बचपन में अमृतलाल मदान शाखा में भी जाते थे। स्कूल के वाचनालय में सुबह के अखबार, पत्रिकाओं को रखना, रजिस्टर में चढ़ाना तथा हिसाब किताब रखना आदि उन्होंने स्कूल में ही शुरू कर दिया था।

विवाह एवं सन्तान—

अट्ठाईस वर्ष की आयु में अमृतलाल मदान का विवाह 16 नवम्बर 1969 में रेवाड़ी निवासी श्री स्थाऊ राम की सुपुत्री राज कुमारी के साथ सम्पन्न हुआ। विवाह के समय लड़की के घर के सामने डॉ. भगवन दास निर्मोही ने एक छोटा सा कविसम्मेलन किया था। विवाह से पूर्व अमृतलाल मदान ने अपने प्रेम प्रसंगों के बारे में सब कुछ पत्र लिख कर बता दिया था, राजकुमारी ने इस कार्य को अच्छा समझा तथा अमृतलाल मदान से प्रेम किया। राज मदान अपने पति से बहुत प्यार करती हैं। वर्तमान में राज मदान जी सरकारी सेवा में गणित की अध्यापिका पद से सेवानिवृत्त हो चुकी हैं तथा एक सुशिक्षित सामाजिक महिला हैं। श्रीमती राज मदान का स्वभाव शांत, गम्भीर और मधुरता से परिपूर्ण है। आपकी तीन संतानें हैं बड़ी बेटी स्नेहा, बेटा राहुल, छोटी बेटी कविता। अमृतलाल मदान की बड़ी बेटी स्नेहा है। स्नेहा जब बी.ए. तृतीय वर्ष में अध्ययनरत थी, तो उसकी सेंट्रल बैंक में नौकरी लग गई थी। स्नेह का विवाह 1994 में सिन्धी परिवार में सम्पन्न हुआ। उनके पति का नाम श्री राजेश चिन्दानी है, जो आजकल चण्डीगढ़ में सेंट्रल बैंक के ऑफिसर रैंक में हैं। इनके दो बच्चे हैं। इनकी द्वितीय सन्तान पुत्र राहुल मदान है जो दिल्ली में बैंक प्रबन्धक के पद पर कार्यरत हैं। अमृतलाल मदान की छोटी बेटी कविता है।

विद्यार्थी जीवन का संघर्ष—

अमृतलाल मदान की प्रारम्भिक शिक्षा तौसा कस्बे में हुई। भारत-पाक विभाजन के समय जब लोग इधर से उधर जा रहे थे तो इनको बहुत समस्याओं का सामना करना पड़ा। सारा परिवार कई दिनों तक शरणार्थी शिविरों में रहा जहाँ पर हैजा फैलने की सम्भावना थी। जब मदान के माता-पिता व सम्पूर्ण परिवार भारत आ रहा था तो उस समय खूनी संघर्ष, वहशीपन से पागल कुछ दंगाईयों ने हिन्दू शरणार्थियों पर बन्दूकों से गोलियाँ चला दी। इतना सब कुछ होने के बाद भी एक ख्वाजा साहिब ने हिन्दू बच्चों को बचाने के लिए अपने प्राणों की परवाह नहीं की थी और जब कस्बे की तरफ दंगाईयों की भीड़ बढ़ी तो ख्वाजा साहिब ने उन्हें रास्ते में रोक लिया और अपनी बाहें फैलाकर बोले, खबरदार एक भी हिन्दू बच्चे का

बाल भी बांका हुआ तो, पहले मेरी लाश पर से गुजरना होगा। जनूनी दंगाईयों की इतनी हिम्मत नहीं हुई कि ख्वाजा साहिब को धकेलकर कस्बे की तरफ बढ़ सकें। इनके पिता ने इस घटना के बारे में बतलाया कि दंगाईयों ने कैसे गाडी रोक ली थी, और खेतों में छिप कर जान बचाई थी।

नया सत्र शुरू होने पर अमर को भी प्राइमरी स्कूल में दाखिल कराया गया। स्थानीय बच्चे अमर को तथा अमर जैसे अन्य शरणार्थी बच्चों को रिफ्यूजी रिफ्यूजी कहकर प्रायः चिढ़ाते रहते थे। कभी कभी स्थानीय अध्यापक भी अमर को ओए 'रिफ्यूजी के' कहकर सम्बोधित करते थे। अमर को 'रिफ्यूजी का' सम्बोधन अच्छा नहीं लगता था। प्रायः शरणार्थी लोगों के साथ स्थानीय लोग बहुत बुरा व्यवहार करते थे। रिफ्यूजी या शरणार्थियों को बाहर से आया हुआ घृणित और आश्रित व्यक्ति माना जाता था और स्थानीय लोगों को सम्मानित व्यक्ति माना जाता था। इस कारण चुनाव के समय लोकल और रिफ्यूजी का सवाल पैदा हो जाता था। इन्हें बाहर से या पाक से आया माना जाता था। यह सब अमृतलाल मदान को अपमानजनक लगता था।

आर्थिक स्थिति—

अमृतलाल मदान के पिता का परिवार बड़ा था। हर दो साल के बाद सन्तान उत्पन्न होने के कारण उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर थी। उनकी दूसरी माता की पहली सन्तान 1946 में, दूसरी सन्तान 1948, तीसरी सन्तान 1950 में, चौथी सन्तान 1952 में, पाँचवीं सन्तान 1954 में, छठी सन्तान 1957 में, सातवीं सन्तान 1959 में, आठवीं सन्तान 1961 में हुई। अमृतलाल मदान के पिता अकेले कमाने वाले थे तथा परिवार बहुत बड़ा था। इनके पिता जी की आय अधिक नहीं थी परन्तु खर्च अधिक थे। इस कारण अमृतलाल मदान ने पढ़ाई के साथ ट्यूशन पढ़ाना शुरू कर दिया। अपनी फीस के पैसे जुटाने के लिए वह ट्यूशन पढ़ाते थे। जब अमृतलाल मदान बी.एड. कर रहा था तब इनके पिता दयालचन्द को चार्जशीट देकर निलम्बित कर दिया गया। पिता जी की नौकरी जाने के कारण अमृतलाल मदान युवा अवस्था में ही संघर्षशील रहे और परिवार में आर्थिक तंगी रही। आर्थिक तंगी के कारण

अमृतलाल मदान जब इंटर साईंस कर रहे थे उस समय कॉलेज में कश्मीर का टूर बना तो मदान जा नहीं सके थे। पिता जी कहते रहे मैं रुपयों का इन्तजाम कर दूंगा परन्तु नहीं बन पाया था। आर्थिक तंगी होते हुए भी अमृतलाल तथा उनके पिता ने आदर्शवादी तथा आशावादी दृष्टिकोण अपनाए रखा तथा संघर्षशील रहे। 1963 में अमृतलाल मदान करनाल में दयानन्द हाई स्कूल में अध्यापक नियुक्त हुए।

धार्मिक भावना—

अमृतलाल मदान वामपंथी विचारों में विश्वास रखते हैं। युवावस्था में उनका ईश्वर के प्रति विश्वास नहीं था। उनके पिता जी इसे बुरा मानते थे तथा अनेक बार डाँट भी देते थे तू नास्तिक है। इनके पिता जी ओऽम के जाप तथा गायत्री मंत्र में अटूट विश्वास रखते थे। पिता जी ने ओऽम के विश्वास के कारण ही अपनी पहली पुत्री का नाम ओऽम रखा। अमृतलाल जी की पहली माता 'स्त्री आर्यसमाज' की प्रधान थी। पिता तथा माता आर्यसमाजी थे। सुबह गायत्री मंत्र का जाप करते थे। शुभ अवसरों पर घर में हवन करवाते थे। मदान जी की दूसरी माता सुन्दरी देवी सनातन धर्म में विश्वास रखती है तथा मूर्तिपूजा करती थी। अमृतलाल मदान जी के ताऊ श्री तगाराम कट्टर आर्यसमाजी थे। लोग उन्हें जन सभाओं में उपदेशक या प्रचारक के रूप में ले जाते थे। श्री तगाराम जी ने अपने निवास स्थान का नाम ही अखण्ड आर्य भवन रखा तथा सम्पूर्ण परिवार पर आर्य समाज का प्रभाव रहा। मदान वामपंथी विचारों के साथ-साथ सभी धर्मों का समान आदर करते हैं। उनका सभी धर्मों में पूर्ण विश्वास है। अमृतलाल मदान मानव धर्म को मानते हैं जो व्यक्ति को व्यक्ति से प्रेम करना सिखाता है तथा समाज में मानवता के नाते समाज के लोग एक दुसरे के सुख-दुःख में काम आते हैं। मानवता सभी वर्गों के लोगों को आपस में जोड़ती है, जाति, धर्म, भाषा आदि के भेदभावों को कम करती है। इसलिए मदान मानव धर्म को श्रेष्ठ मानते हैं, जो समाज के लोगोंको आपस में जोड़ता है तोड़ता नहीं।

लेखकीय प्रेरणा—

जब व्यक्ति कोई कार्य करता है तब उसके पीछे प्रेरणा यन्त्र के समान काम करती है। प्रेरणा की उत्पत्ति प्रत्यक्ष रूप से होती है। प्रेरणा कवि मन को सम्बोधित करती है तथा रचना के लिए उसे जागृत करती है, सचेत करती है। इस प्रकार काव्य अथवा कला रचना के क्रम में एक प्रक्रिया विशेष की स्थिति होती है। रचना के लिए प्रेरणा मूल वस्तु है। प्रो. मदान एक सधे हुए साधक, चिन्तक, विद्वान एवं मूर्धन्य साहित्यकार हैं। अमृतलाल मदान अपने कॉलेज के दिनों में कविता लिखते थे। अमृतलाल मदान को सबसे पहले लेखन के सन्दर्भ में सर्वाधिक प्रभावित करने वाले सरदार सौभा सिंह जी थे। अमृतलाल जी जब अपने जीजा के साथ अडरेटा हिमालय गए थे तब वहाँ पर सुप्रसिद्ध चित्रकार सरदार शोभा सिंह जी से भेंट हुई जो गुरु नानक देव का मिट्टी का बुत बना रहे थे। जब मदान जी शोभा सिंह से मिले तो कहा कि मैं कुछ लिखना चाहता हूँ। उन्होंने तपाक से कहा कि गुरु नानक देव पर लिखना शुरू करो। इनसे बड़ा व्यक्तित्व और कहाँ मिलेगा। उसी समय गुरु नानक देव की जन्म पञ्चशती समारोह के उपलक्ष्य में पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला ने पंजाबी, अंग्रेजी, हिन्दी में पांडुलिपियाँ माँगी थी। अमृतलाल मदान ने गुरु नानक देव पर प्रबन्ध काव्यलिखना आरम्भ किया। उदय भानु हंस ने गुरु गोबिन्द सिंह पर 1966-67 में सन्तसिपाही नामक शीर्षक से महाकाव्य लिखा था तथा उसको बहुत प्रसिद्धि मिली थी। इसी के फलस्वरूप उनसे प्रेरित होकर अमृतलाल मदान ने भी अपने प्रबन्ध काव्य का नाम सन्त महात्मा रख दिया। अमृतलाल मदान का सन्त महात्मा प्रबन्ध महाकाव्य 1969 में पंजाबी विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित कराया गया।

इस प्रकार अमृतलाल मदान द्वारा लिखित प्रथम पुस्तक 'सन्त महात्मा' को सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार मिला। यह अमृतलाल मदान के लिए बहुत गर्व का विषय था। उस समय उनकी आयु मात्र 28 वर्ष की थी। उस समय पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला के कुलपति सरदार कृपाल सिंह नारंग थे। अमृतलाल मदान जब कुलपति

सरदार कृपाल सिंह नारंग से मिले तो वे बहुत हैरान हुए कि इतनी छोटी या कम आयु में इतनी अच्छी कृति की रचना की है। उन्होंने मंदान जी से पूछा, "काका यह पुस्तक तें लिखी है। तथा आशीर्वाद दिया, उन्होंने कहा कि आपका भविष्य उज्ज्वल है आप लिखना जारी रखो।

व्यवसाय—

अमृतलाल मदान ने शिक्षा प्राप्त करने के साथ-साथ नौकरी भी की। अमृतलाल मदान ने कर्लक के पद पर पहले शाहबाद मारकण्डा फिर करनाल में कार्य किया। जुलाई 1963 से 1967 तक चार वर्ष दयानन्द मॉडल हाई स्कूल करनाल में गणित व अंग्रेजी का अध्यापन किया। सन 1967 में इनकी नियुक्ति अंग्रेजी प्राध्यापक के पद पर हुई। 31 अगस्त 2001 में 60 वर्ष की आयु में अंग्रेजी विभाग में प्राध्यापक के पद से सेवा निवृत्त हुए। सेवानिवृत्ति के बाद लेखन कार्य में लग गए। इन्होंने इंग्लिश स्पीकिंग और एम.बी.ए. आदि कक्षाओं की ट्यूशन की। जुलाई 2003 से जून 2004 तक कैथल में एक नर्सिंग कॉलेज के प्राचार्य रहे। साथ ही साथ आरके.एस.डी. कॉलेज में सांयकालीन अंग्रेजी की कक्षाओं को पढ़ाया। अमृतलाल मदान ने कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के अंग्रेजी के विभागाध्यक्ष डॉ दिनेश कुमार दधिचि के साथ मिलकर प्रेमचन्द के उपन्यास गोदान का हिन्दी से अंग्रेजी में संक्षिप्त अनुवाद किया जिसे दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक और कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय द्वारा बी.ए. प्रथम के अंग्रेजी पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है।

व्यक्तित्व—

अमृतलाल मदान एक नेक व ईमानदार इन्सान हैं। आज के महत्त्वाकांक्षी युग में चाटुकारिता, बनावटीपन, छलकपट, झूठ-फरेब आदि से ये सदैव दूर रहे हैं। हृदय की विशालता और जीवन की सादगी के कारण वे सदैव परिचितों में प्रिय रहे हैं। उनके व्यक्तित्व की यह विशेषता उन्हें सदैव गौरवान्वित करती रहती है। वे अपने निजी जीवन में सबसे पहले एक अच्छे इंसान हैं। मदान सभी धर्मों की पवित्रता में विश्वास करते हैं। मदान सभी धर्मों को मानते हैं। उनका मानना है कि

जो धर्म इन्सान को इन्सान में भेद करना सिखाए, वह धर्म नहीं, अधर्म है। सबसे बड़ा धर्म है मानव सेवा करना।

सम्मान तथा पुरस्कार—

‘सन्त महात्मा’ प्रबंध काव्य को पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला द्वारा पुरस्कृत। तलाश जारी है, जिन्दगी और नाटक, एक सिद्धार्थ और, सिन्धुपुत्र, विषगाथा तथा विराट बौना हरियाणा साहित्य अकादमी द्वारा सम्मानित।

उदयभानु वरिष्ठ साहित्यकार सम्मान, मॉरीशस में हिन्दी लेखक संगठन, आकाशवाणी एवं हरियाणा साहित्य अकादमी द्वारा बालमुकुन्द गुप्त सम्मान।

1.3.2 कृतित्व

रचनाएँ

1. सन्त महात्मा, प्रबन्ध काव्य 1972
2. तलाश जारी है, नाटक संग्रह, 1982
3. लाल धूप, उपन्यास, 1983
4. टूटता हुआ आकाश, नाटक संग्रह, 1985
5. मानुष—अमानुष काव्य, नाटक, 1987
6. अपने—अपने अँधेरे, उपन्यास, 1989
7. जिन्दगी और नाटक, नाटक संग्रह, 1989
8. तथास्तु तीन श्रेष्ठ नाटक, 1990
9. सिन्धुपुत्र उपन्यास, 1991
10. एक सिद्धार्थ और, नाटक संग्रह, 1992
11. वापसी देवदास की कहानी संग्रह, 1996

12. जय—पराजय नाटक, 1998
13. यात्रा शब्दों की, भाग एक सह सम्पादन, 1990
14. तीन यात्रा, एकांकी सम्पादित, 1992
15. यात्रा शब्दों की भाग दो, सह सम्पादन, 1994
16. गोदान, अंग्रेजी में सह अनुवाद, 1996
17. श्री स्वरूप दर्शन सार, अंग्रेजी अनुवाद, 1997
18. विषगाथा, 1998
19. अधमुण्डा सिर, चौथी टांग, दो नाटक, 2003

अमृतलाल मदान के उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय—

लालधूप— इथोपिया की राजनैतिक व सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर आधारित यह उपन्यास सामंतवादी व्यवस्था का घोर विरोधी व समाजवादी व्यवस्था का पोषक है। इस उपन्यास में दिखाया गया है कि किस प्रकार इथोपिया की जनता भूख, भ्रष्टचार, अत्याचार और अन्याय के खिलाफ सामंतवादी व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करती है। 'लाल धूप' एक क्रांति और बगावत और उस प्रभूत चेतना का प्रतीक है जो राजशाही व्यवस्था के खिलाफ आवाज उठाती है।

सिन्धुपुत्र— इस उपन्यास में 'अमर' नामक पात्र के माध्यम से मदान जी ने भारत पाक विभाजन की भयंकर त्रासदी का यथार्थ चित्रण किया है। यह त्रासदी केवल मात्र अमर की नहीं बल्कि आजाद भारत के उन सभी लोगों की त्रासदी है जो विभाजन के समय हिंदू मुस्लिम सांप्रदायिक दंगों का शिकार हुए। सिन्धुपुत्र उपन्यास आत्मकथात्मक है। लेखक ने बड़े लोगों की घटिया मानसिकता, शिक्षण संस्थाओं की दुकानदारी, चुनावी कालाबाजारी एवं षड्यंत्र सांप्रदायिक उन्माद, गली सड़ी सामाजिक रूढ़ियों, राजनीतिक महत्वकाक्षाओं पर कठोर प्रहार किया है।

अपने-अपने अंधेरे- इस उपन्यास में दांपत्य जीवन से जुड़ी समस्याओं को उकेरा गया है। इस उपन्यास में परंपरागत व्यवहारिक मर्यादाओं का अतिक्रमण, विवाहेतर यौन संबंध, पुरुष का दोहरा व्यक्तित्व, नारी का दोहरा चरित्र, दांपत्य संबंधों में उत्पन्न होने वाले तनाव और तनाव के फलस्वरूप उभरने अंतर्द्वंद्व को स्पष्ट किया गया है। उपन्यास के पात्र राजेश व प्रदीप के माध्यम से दिखाया गया है कि किस प्रकार आज का बुद्धिजीवी प्राणी प्राप्य को नकार कर अप्राप्य के लिए भटक रहा है। सामाजिक पद प्रतिष्ठा, दांपत्य सामंजस्य और अन्य स्त्री से प्रेम इस त्रिगुणात्मक एकरूपता के लिए वह मुखोटे धारण करके जीता है।

विराट बौना- उपन्यास का नाम विराट बौना इसलिए रखा गया कि वास्तव में जो बौना आकार में छोटा है। जब वह मानव सभ्यता, अस्मिता व संस्कृति विषयक मूल्यों को टूटता देखता है तो विराट रूप धारण कर लेता है। इस उपन्यास के माध्यम से मदान ने समाज में व्याप्त विषम परिस्थितियों, सांप्रदायिकता के बदलते अर्थों, धार्मिक आडम्बरताओं व संस्कृति के नाम पर द्वेष फैलाने वाले संगठनों पर कठोर प्रहार करते हुए अपने उत्तरदायित्व और नैतिक कर्तव्यों के प्रति जागरूक करने का प्रयास किया है। समाज में व्याप्त राजनीति और धर्म का झूठा चोला ओढ़ने वाले श्रेष्ठ व्यक्तित्व के धनी लोगों की बोनी हरकतों का चित्रण इस उपन्यास में किया गया है।

दूसरा अरुण- बाल साहित्य के अंतर्गत यह उपन्यास मानव के व्यर्थ के रक्तपात को आधार बनाकर लिखा गया है। इस उपन्यास में 'अरुण' नामक पात्र के माध्यम से मदान ने संदेश दिया है कि रक्त समस्त ऊर्जा का स्रोत है। स्वस्थ रक्त स्वस्थ मनुष्य देहों में ही बहता रहे। यह यदि बाहर कभी भी आए तो फिर से मनुष्य देह में ही जाने के लिए, जीवन दान देने के लिए आए। सड़कों पर, गलियों में युद्ध क्षेत्रों में, घरों में बहने के लिए नहीं।

एक अधूरी प्रेम कथा-मदान ने 'अमरनाथ' नामक पुरुष पात्र व 'सरिता' नामक स्त्री पात्र के माध्यम से एक ऐसे प्रेम का वर्णन है जो सामाजिक नैतिकता व सामाजिक नियमों के कठोर बंधन के कारण अंतिम परिणति को प्राप्त नहीं होता।

अमर प्रेम कथा— इस उपन्यास में अमर नामक युवक का सरिता नाम की युवती के साथ प्रेम प्रसंग का वर्णन मिलता है। इस प्रेम कथा उपन्यास में प्रेम को जीवन की मूल प्रेरक शक्ति के रूप में दिखाया गया है। प्रेम में रुकावट उत्पन्न करने वाले तथाकथित सामाजिक ठेकेदारों व खाप पंचायतों पर कठोर प्रहार किया गया है जिसे कारण उनका प्रेम विवाह में तब्दील नहीं हो पाता।

एक समानांतर प्रेम कथा— इस उपन्यास में भी अमर व सरिता नामक युवती के प्रेम की गाथा समानांतर रूप से चलती है।

अनंत प्रेम कथा— इस उपन्यास में अर्द्धशती पूर्व की अमर व सरिता की प्रेम कथा का वर्णन है।

इति प्रेम कथा— इस उपन्यास में 80 वर्ष के वृद्ध पात्र अमरनाथ भारती व 75 वर्ष की ब्रह्मकुमारी बनी सरिता से प्रेम प्रसंग जो युवावस्था से वृद्धावस्था तक लगातार विकसित होता दिखाया गया है।

बंद होते दरवाजे— इस उपन्यास में मध्यम परिवार से संबंध रखने वाले पात्र 'उमाकांत' के माध्यम से मानवीय मूल्यों, सामाजिक रिश्तों, परम्परागत व्यवहारों में हो रहे ह्रास पर प्रकाश डाला है। राजनीति को आश्रय देने वाले धार्मिक आश्रमों की शुचिता पर भी कठोर प्रहार किया गया है। जिस धर्म और राजनीति के दोहरे व्युहचक्र में आम जनता का दोहरा शोषण होता है।

वे अठारह दिन— इस उपन्यास में 'समरजीत' नामक पात्र के माध्यम से समाज में इंटरनेट के द्वारा फैलाई जा रही नकारात्मक मानसिकता का चित्रण किया गया है। यह उपन्यास एक और जहाँ इंटरनेट के दुष्प्रभावों को उजागर कर समाज को सावधान करता है, वहीं दूसरी ओर कुछ प्रश्न भी समाज के समक्ष प्रस्तुत करता है। समाज में कितनी काम प्रवृत्ति उचित है? और कितनी अनुचित है? क्या पोर्न पर बैन संभव और वांछनीय है?

1.4 धर्मपाल साहिल— व्यक्तित्व एवं कृतित्व

1.4.1 जीवन परिचय—

धर्मपाल साहिल पंजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य के सशक्त साहित्यकार हैं जो गैर-हिन्दी भाषी प्रदेश पंजाब में रचे जा रहे हिन्दी साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। वह एक ऐसे समर्थ व सफल लेखक हैं जिन्होंने लेखन यात्रा पर धीरे-धीरे कदम बढ़ाते हुए उत्कर्ष पर पहुँचने के सफलतम प्रयास किए। साहिल ने साहित्य की लगभग सभी विधाओं में अपनी लेखनी चलाई। चाहे वह कविता हो, कहानी हो, लघुकथा हो या उपन्यास। पंजाब के अग्रगण्य हिन्दी लेखकों की पंक्ति में उच्च स्थान पर शोभायमान धर्मपाल साहिल पंजाब के दोआबा क्षेत्र से सम्बन्ध रखते हैं। दोआबा अर्थात् दो नदियों व्यास और सतलुज की वह भूमि जिस पर मुकेरियाँ, जालन्धर, होशियारपुर, दसूहा, टांडा उड़मुड़ जैसे प्रसिद्ध नगर बसे हुए हैं। इन्हीं में से होशियारपुर साहिल का अपना शहर है।

जन्म स्थान और माता पिता—

धर्मपाल साहिल का जन्म जिला होशियारपुर के गाँव तुंग में 9 अगस्त 1958 को श्री हरबंस लाल जी के यहाँ हुआ। शकुन्तला देवी जी को ऐसे सूझवान पुत्र की माता होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। साहिल बचपन से ही बुद्धिमान एवं तेजस्वी थे।

विद्यार्थी जीवन—

धर्मपाल साहिल जी बचपन से ही होशियार छात्रों में गिने जाते थे। छोटी आयु में ही इन्हें मुंशी प्रेमचंद की रचनाओं ने अपना दीवाना कर दिया था। 'ईदगाह' कहानी इनकी मनपसंद कहानियों में से एक है। 'हामिद' में वे स्वयं को ही महसूस करते हैं। दादी-पोते के प्यार पर इन्हे फकर होता है और वे भावुक हो जाते हैं। प्रेम की श्रेष्ठ कहानियाँ आपने अनेक बार पढ़ी। इसी दिलचस्पी के कारण आपको घरवालों के सख्त मिजाज का सामना करना पड़ता। पांचवी तक की पढाई आपने गाँव तुंग में ही की। उसके बाद पिता जी का तबादला देहरादून हो जाने के कारण आपकी उच्च शिक्षा वहीं हुई। आपने डी.ए.वी. (पी.जी.) कॉलेज देहरादून से बी.एस. सी. की परीक्षा पास की, तदोपरान्त आपने बी.एड. की डिग्री भी यहीं से प्राप्त की। कम आमदनी के कारण आपके पिता जी आपको आगे नहीं पढ़ाना चाहते थे, परन्तु उच्च शिक्षा की लालसा के कारण आपने जिद्वश एम्.एस.सी.(रसायन शास्त्र) में

दाखिला ले लिया। इसी कारण आपके पिता जी साल तक आपसे नाराज़ रहे, लेकिन आपने अच्छे अंकों के साथ परीक्षा पास की। बाद में नौकरी के दौरान एम्. एड की परीक्षा हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय से पास की। धर्मपाल पी.एच.डी पास कर प्रोफेसर बनाना चाहते थे पर घर के हालात के कारण इनकी इच्छा पूरी न हो सकी और आपको स्कूल लेक्चररशिप पर ही संतोष करना पड़ा। इसी प्रकार आर्थिक तंगी और घर की जिम्मेदारियों के बावजूद आप उच्च शिक्षा हासिल करने में सफल रहे।

व्यवसाय—

सर्वप्रथम साहिल ने अपने गाँव तुंग के पास बेडिंग गाँव के सरकारी मिडल स्कूल में विज्ञान के अध्यापक नियुक्त हुए तत्पश्चात् आपने अपने गाँव तुंग के पास मन्सूरपुर गाँव में सरकारी हाई स्कूल में विज्ञान अध्यापक का कार्यभार सम्भाला। आप सरकारी सीनियर सैंकडरी स्कूल, तलवाड़ा टाऊनशिप सैक्टर-1, जिला होशियारपुर में रसायनशास्त्र प्रवक्ता के पद पर सेवारत रहे हैं और बड़ी लगन, कर्मठता और प्यार से अपने विद्यार्थियों को ज्ञान का प्रकाश बांटा। एक प्राध्यापक के रूप में जब अपने शिष्यों को रसायनशास्त्र के सूत्र तथा समीकरण समझाते हैं तब आपकी शख्सीयत का एक पहलू प्राध्यापक के रूप में सामने आता है। अब वे पदोन्नत हो कर प्रधानचार्य बने। 31 अगस्त 2018 को प्रधानाचार्य के पद से सेवानिवृत्त हुए। अब सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में काम कर रहे हैं। साहिल को साहित्य, संगीत तथा अपने परिवार से इतना लगाव है कि विज्ञान विषय के प्राध्यापक होने के बावजूद ट्यूशन जैसी महामारी से बिल्कुल दूर रहे हैं। विज्ञान के प्राध्यापक साहिल ट्यूशन के बैच लगाकर लाखों रुपये कमाने से ज्यादा समय साहित्य और परिवार को देते हैं। इस प्रकार साहिल निस्वार्थ, जागरुक और स्नेही अध्यापक, प्रबन्धक होने का दायित्व भलीभाँति निभा रहे हैं।

लिखने की प्रेरणा—

विद्यार्थी जीवन से ही लेखन कला में निपुण रहे हैं। बात तब की है जब एम. एस.सी के दौरान इनके कालेज में वार्षिक समारोह था और सभी छात्र कुछ न कुछ

लिख रहे थे। समारोह के दौरान एक नेत्रहीन लड़की को वीणावादन करते हुए देखा। साहिल उस लड़की से इतना प्रभावित हुए के उन्होंने कल्पना, भावुकता और संवेदनशीलता में बह कर उस लड़की पर रचना लिख डाली, जो कॉलेज पत्रिका में 'सुनयना' के नाम से छापी गई। यह कहानी अध्यापकों और विद्यार्थियों के दिलों को छु गई। तब हिन्दी के विभागाध्यक्ष डॉ० द्विवेदी ने इन्हें बुलाया और प्रेरित करते हुए कहा कि तुम हमेशा लिखते रहना। यही सुनयना कहानी 1977-78 ई. में 'एक सी चन्द्र' पंजाबी रूप में और पंजाब केसरी और जग्बानी में प्रकाशित हुई। एम.एस.सी के दौरान ही इनकी क्लास की छात्रा, जो यूनिवर्सिटी में प्रथम थी, हिमानी शिवपुरी ने इनको प्रेरणा देते हुए कहा था कि तुम कभी लिखना मत छोड़ना, एक दिन तुम अच्छे लेखक बनोगे।

सम्मान—

1. राष्ट्रपति डॉ.ए.पी.जे. अब्दुल कलाम द्वारा 2007 में सृजनशील अध्यापक पुरस्कार।
2. 'बायोस्कोप' उपन्यास मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अंतर्गत केन्द्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा राष्ट्रीय पुरस्कार 2008
3. 'भारत शिक्षा रत्न' ग्लोबल सोसायटी फॉर हेल्थ एंड एजुकेशनल ग्रोथ, दिल्ली 2015
4. 'समझौता एक्सप्रेस' उपन्यास को सर्वोत्तम पुस्तक पुरस्कार 2007 भाषा विभाग पंजाब द्वारा।
5. 'बेटी हूँ न' उपन्यास को सर्वोत्तम पुस्तक पुरस्कार 2009 भाषा विभाग पंजाब द्वारा।
6. वाचस्पति मानद उपाधि, विक्रमशीला विद्यापीठ, भागलपुर, बिहार 2014
7. साहित्य सभा स्कॉटलैंड द्वारा 1994 में सम्मान।
8. अन्य पुरस्कार— केवल विंग अवार्ड, निकियाँ करुंबला पुरस्कार, प्रेमशंकर पुरस्कार, राजस्थान, अमेरिकन बायोग्राफिकल इंस्टिट्यूट सहित दर्जनों पुरस्कार एवं सम्मान।

व्यक्तित्व की विशिष्टताएं—

धर्मपाल साहिल अत्यन्त सहज व्यक्तित्व के इन्सान हैं। उनका शख्सीयत का एक अन्य पहलू समाज को केन्द्र में रखते हुए को ढाढस बंधाता हुआ नजर आता है। सजग एवं जागरुकता के साथ-साथ विज्ञान के प्राध्यापक होने के कारण वह विषयों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझते और परखते हैं। प्राध्यापक तथा साहित्यकार दोनों ही रूपों में साहिल ने अपनी जिम्मेदारी बेहद ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठता के साथ निभाई है।

संवेदनशीलता, भावुकता, गाम्भीर्य, स्नेहशीलता, दृढ आत्मविश्वास, कर्मठता, साहित्य प्रेम, लोक-संस्कृति के प्रति लगाव, गरीबों, दीन दुःखियों के प्रति विशेष संवेदनाएँ हैं। विनम्र स्वभाव के मालिक धर्मपाल साहिल की भावुकता एवं दृढ विश्वास को दर्शाता एक उदाहरण इस प्रकार हैं। हिन्दी भाषी प्रदेश देहरादून में अपनी ज़िन्दगी का लम्बा समय गुजारने के कारण हिन्दी भाषा में इनकी पकड़ अधिक थी। पंजाब नौकरी करते समय उन्हें स्कूल में एक कक्षा को विज्ञान के साथ पंजाबी विषय पढ़ाने को भी कहा गया। साहिल ने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया कि नौकरी की शर्तों के अनुसार मैट्रिक पंजाबी का इम्तिहान पास करने के लिए पंजाबी लिखने की प्रैक्टिस भी हो जाएगी। एक बार ब्लैकबोर्ड पर लिखे पंजाबी वाक्य में मात्रा की कमी ढूँढकर एक अध्यापक साथी ने अन्य अध्यापकों की उपस्थिति में पंजाबी भाषा के अल्पज्ञान का मजाक उड़ाते हुए कहा आ गये यहाँ यूपी के भईये पंजाबी का बेड़ा गर्क करने। यह व्यंग्य भरा वाक्य इनके दिल में कांटे की तरह चुभ गया। उस समय तो साहिल को यह बात बहुत चुभी लेकिन मन ही मन इस चुनौती को स्वीकार कर लिया। तदनंतर इन्होंने हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखकों की रचनाओं का पंजाबी में अनुवाद प्रारम्भ कर दिया।

1.4.2 कृतित्व—

रचनाएँ

कहानी संग्रह— नीलकंठ, किसी भी शहर में।

लघु कथा संग्रह— नर्गिस, खुलती गाँटे ।

काव्य संग्रह— अहसासों की अंजुरी में, मेरे अंदर एक समंदर, पंखों पर उगती भोर, पानी के पांव ।

शोध कार्य— कंडी की सांस्कृतिक विरासत ।

कोशग्रन्थ— हिंदी पंजाबी अध्येता शब्दकोश ।

नाटक— मोरा मेरी जान ।

यात्रा संस्मरण— पर्वतों के अंग—संग ।

बाल साहित्य— अकबर बीरबल के किस्से, बेताल कहानियाँ ।

साहिल एक श्रेष्ठ साहित्यकार, नाटककार व अनुवादक भी हैं। इनकी उपन्यासों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार हैं—

1. आर्तनाद—धर्मपाल साहिल का उपन्यास 'आर्तनाद' किसी तमाचे की तरह तीखा है। धर्म की आड़ में यौन शोषण की पृष्ठभूमि पर केंद्रित इस उपन्यास में लेखक ने समाज में व्याप्त दोहरे चरित्रों के मुखौटे नोचने का सफलतम प्रयास किया है। यह उपन्यास समाज में फैली अमानवीय दरिंदगी का ज्वलंत दस्तावेज है। आर्तनाद में लेखक ने बलात्कार जैसे पाश्चिक कृत्य जैसी घटनाओं के बाद पीड़िता के व्यवहार एवं समाज के रवैये का बेहद जिम्मेदारीपूर्ण चित्रण किया है। वे किसी मनोविश्लेषक की भांति इस मानसिकता की परत दर परत खोलते चले जाते हैं और सुझाते हैं कि कैसे परिवार की सहानुभूति और सजगता से पीड़िता की मानसिक स्थिति को संभाला जा सकता है। सबसे अधिक प्रशंसा की बात तो यह है कि इतने नाजुक विषय स्पर्श करते हुए कहीं पर भी उनकी कलम तनिक भी विचलित नहीं हुई है। वास्तव में यह उपन्यास इतना प्रांसगिक है कि इसमें आपको समकालीन घटनाओं और मुद्दों की झलक देखने को मिलती है।

2. ...और कितनी?— इस उपन्यास की नायिका शिवानी है, जिसका अपने जीवन का प्रत्येक पल कष्ट में व्यतीत हो रहा है। शिवानी का दुःख भले ही निजी हैं, परन्तु

वह अपनी इन पीड़ाओं को सामाजिक परिवेश का एक चेहरा बनाकर एक नये प्रतीक के रूप में सामने आती है। मनु के रूप में पति और महिन्द्रों के रूप में सास जैसे चरित्र हमारे समाज के प्रत्येक तीसरे घर में अक्सर दिख जाते हैं। इस उपन्यास में शिवानी वह पात्र है जो अपने आप में एक पूरा समन्दर है, जिसमें मोती हैं, सीपियां हैं, जिसकी अथाह गहराइयों में जितना नीचे उतरो, उतना ही प्रकृति का रहस्य खुलता जाता है। उपन्यास में दहेज समस्या, सास या पति द्वारा किये जाने वाले उत्पीड़न की समस्या, पति द्वारा अकारण प्रदर्शित अहं की भावना जैसी अनेक समस्याओं को अपने दायें-बायें लेकर चलता है।

3. ककून—इस उपन्यास में सामाजिक रिश्तों में फैल चुकी, पराकाष्ठा का शिखर छूती स्वार्थपरकता को एक ऐसे कथानक के माध्यम से चित्रित करने प्रयास किया है, जो हमारे आस-पास घुमते आत्मीय पात्रों एवं स्वानुभूत घटनाओं पर आधारित है। यह उपन्यास विभिन्न विभागों, संस्थाओं, परिवारों यहां तक कि खून के रिश्तों में भी व्याप्त, 'सेलफिशनेस के इन्फैक्शन' का कटु यथार्थपरक प्रभाव प्रस्तुत करता है।

कथानक का आरम्भ युवा प्रिया के फौजी पति की अचानक आतंकवादियों के हाथों मृत्यु हो जाने के बाद, प्रिया के विधवा जीवन से आरम्भ होता है। दुःख का पहाड़ टूटने के बाद प्रिया के लगभग सभी सगे-सम्बंधी उसके दुःख पर मगरमच्छी आसूं बहाते हैं। प्रिया की मदद से कन्नी काट जाते हैं, ऐसे में प्रिया का एक नजदीकी रिश्तेदार विनोद, प्रिया के रुके कार्यों को अंजाम देने का बीड़ा उठाता है। वह निःस्वार्थ भाव से प्रिया के सभी रुके कार्यों को सम्पन्न करा देता है। इस समूची प्रक्रिया में उसे अपनों द्वारा ही मानसिक यंत्रणा दिये जाने पर घोर मनःपीड़ा से गुजरना पड़ता है। विपरीत परिस्थितियों से गुजर कर अन्ततः वह प्रिया को उसके पति के स्थान पर नौकरी दिलवा कर उसे आत्मनिर्भर होने में सक्षम कर देता है। ज्यों-ज्यों प्रिया के कार्य सम्पन्न होते जाते हैं, वह धीरे-धीरे विनोद से दूरी बढ़ाती जाती है दूसरी ओर वह उन्हीं सगे-सम्बन्धियों के फिर करीब होती जाती है। अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के बाद भी प्रिया की अस्वीकारोक्ति विनोद के लिए असहनीय हो जाती है और फलस्वरूप इस उपन्यास का जन्म होता है।

‘ककून’ में जीवन के सरोकारों को कई स्तरों पर चित्रित किया गया है। भारतीय समाज में विधवा स्त्री के प्रति लोगों की सोच तथा रवैया वहीं दूसरी ओर भ्रष्टाचार, चरित्रहीनता, अकर्मण्यता तथा शोषण आदि का बेबाक व सजीव चित्रण पढ़ने को मिलता है। आधुनिकता तथा बाजारवाद के प्रभाव तले प्रैक्टिकल होते रिश्ते, रिश्तों में मर रही संवेदना तथा संवेदनहीन होते समाज का दोहरा व्यक्तित्व, परत दर परत उघड़कर सामने आते कटु तथ्यों को भी उजागर करता है। लेखक ने उपन्यास में रिश्तों की जटिलता, उसमें लचक एवं दुपट्टा ओढ़ी हुई सहानुभूति तथा पल-प्रतिपल, व्यक्तिदर व्यक्ति, हालातदर हालात परिवर्तनशील मानवीय मन, सोच एवं प्रवृत्ति के सूक्ष्म धागों को पकड़ कर उपन्यास का ताना-बाना बुना है। उपन्यास में जहां नकारात्मक भूमिका वाले पात्रों की भरमार है वहीं दयालु, मानवता प्रेमी तथा ईश्वर से डरने वाले पात्र भी मतलबपरस्ती के अंधेरे में जुगनू की भांति चमकते हैं। उपन्यासकार ने पात्रों के चरित्र के साथ-साथ वातावरण का चित्रण भी इतना सजीव ढंग से किया है कि पाठक स्वयं को उसी माहौल में उपस्थित पाता है।

उपन्यास में पात्रों के संवाद तर्कसंगत, व्यंग्य भरपूर तथा स्थितिजन्य हैं। पात्र अपने मन व हृदय की अवस्था अनुसार स्वभाविक प्रतिक्रिया प्रकट करते हैं। ये जहाँ कथानक को गति देते हैं वही रोचकता एवं गतिशीलता पैदा करते हैं। लेखक ने भाषा का उपयोग पात्रों, स्थिति, कार्यों तथा उनकी योग्यतानुसार किया।

4. खिलने से पहले—डॉ. धर्मपाल साहिल का चौथा उपन्यास ‘खिलने से पहले’ किशोर अवस्था के बच्चों में बढ़ रही ‘ड्रग एण्ड नेट अडिक्शन’ जैसे अति गम्भीर विषय को आधार बना कर लिखा गया है। जिसमें सैफी, सन्नी, सुमित्रा जैसे पात्रों के माध्यम से उक्त समस्या के विभिन्न कारणों, पहलूओं तथा आयामों को प्रस्तुत करता है। उपन्यास की पात्र सुमित्रा अध्यापक वर्ग के लिए एक आदर्शमयी पात्र है। जो ऐसे भटके हुए बच्चों की पहचान करके उनका सही मार्गदर्शन करती है। यह उपन्यास किशोरों के साथ-साथ उनके अभिभावकों के लिए पढ़ना अति आवश्यक है।

5. समझौता एक्सप्रेस—यह उपन्यास मदान जी के एक और त्रासदी उपन्यास की भांति भारत पाक विभाजन पर प्रश्न उठाता है। इस उपन्यास में दो विभिन्न धर्मों से सम्बन्ध रखने वाले पात्रों के माध्यम से विभाजन की नाना यातनाओं को सहन करने के उपरांत यह सन्देश दिया गया है कि सियासत दिलों को तोड़ती है व संस्कृति दिलों को जोड़ती है। यह उपन्यास मुख्यरूप से उस युग का प्रमाणिक दस्तावेज़ है जिस युग में लोग टुकड़ों में विभाजित होने की भयानक पीड़ा से गुज़रे हैं। विभाजन के दंश से त्रसित, समूल जड़ों से उखड़े, विस्थापित देशवासियों ने न केवल मानसिक बल्कि शारीरिक यातना को भी झेला। प्रो. नंदा द्वारा अपने पौत्र गगनदीप को विभाजनोपरांत घटने वाली प्रत्येक घटना सुनाना एक सवालीया चिह्न छोड़ जाता है। उपन्यास पढ़ते-पढ़ते मन मस्तिष्क में बिजली सी कौंध जाती है कि यह विभाजन क्यों हुआ? कैसे हुआ? अगर ऐसा न होता तो आज हिन्दुस्तान एक भरा-पूरा देश होता हिन्दु, मुस्लिम और सिक्ख एक ही देश के वासी होते। किसी में धार्मिक भेदभाव तथा अलगाव न होता। लेकिन होता वही है जो भगवान को मंजूर होता है। अपनी धरती पर, अपने लोगों के बीच, अपने ही देश में विस्थापित जीवन बताने की विवशता झेलती इस उपन्यास की मुख्य पात्रा बीबी मोहम्मद उर्फ मंजीत कौर ऐसा केन्द्र बिन्दु है जो बंटवारे की घटना शुरू होते ही अपना अस्तित्व गंवा बैठती है। शिकोह मलिक उसका खावंद जिससे निकाह हुआ था। अभी उनकी शादी को छः माह भी नहीं गुजरे थे, 'बीबी मुहम्मद की हथेली की मेहंदी भी नहीं सुखी थी कि सन 1947 का दुखान्त घट गया। वह शिकोह मलिक, सरदार रंजीत सिंह, सरदार जोगेन्द्र सिंह— ये तीनों पुरुष बीबी मुहम्मद के जीवन के वे तीन मोड़ हैं, जहाँ पल भर ठहर कर उसे सोचना पड़ता है कि वह अतीत में क्या थी ? और अब क्या है? क्या थी और अब क्या है?

“खुदाया! क्या दिन थे वो। जब वे कालिज़ में पढ़ते थे, वे स्टेज से शायरी करते। कलाम सुनाते तो लड़कियाँ दिल थाम के रह जाती। उनके पास आने के लिए तरसती। चोरी छिपे रूक़े भेजतीं।” (समझौता एक्सप्रेस 75)

एक औरत जो अनचाहे सम्बन्धों को जीने को विवश है, एक औरत जिसे धर्म का चोला बिना उससे पूछे पहनाया और उतारा जाता है और फिर भी उससे उपेक्षा

की जाती है कि वह धर्म को गम्भीरता से जिए, क्योंकि वह एक औरत है। जिन परिस्थितियों से होकर वह गुजरती है उनमें देह और देश की सीमाएं उसके लिए बेमानी हो जाती हैं कोई राजनीतिज्ञ उसके पास आकर यह नहीं पूछता कि बीबी मोहम्मद तुम कहाँ रहना चाहती हो ? किसके साथ रहना चाहती हो?

विभाजन ने बेचारी एक पाक दिल रूह बीबी मोहम्मद को तोड़ कर रख दिया। उसने कभी नहीं सोचा था कि वह अपने शौहर (पति) से कभी मिल पाएगी। बीबी महोम्मद मनजीत कौर बन कर शमशेर सिंह की पत्नी बनकर उसके साथ इंग्लैंड चली जाती है। वहाँ उसके बच्चों की व शमशेर सिंह की 55 वर्ष तक पूरी सेवा करती है। प्रो. नन्दा के प्रयत्नों के फलस्वरूप उसे पता चलता है कि शिकोह मलिक जिन्दा है। इतना पता चलते ही वह तनाव का शिकार हो जाती है। साइकैट्रिक की सलाह पर शमशेर सिंह उसे परिवार सहित पंजाब ले आता है। वहाँ गाँव के युवाओं द्वारा 'सभ्याचारक मेला समझौता एक्सप्रेस' आयोजित किया जाता है। इस मेले के अन्त में प्रो, नन्दा एवं शमशेर सिंह के सहयोग से शिकोह मलिक और बीबी मोहम्मद का पुनर्मिलन कराया जाता है।

6. बायोस्कोप— फणीश्वरनाथ रेणू के मैला आँचल की भांति यह उपन्यास पंजाब के एक क्षेत्र कंडी की समस्याओं, रीती रिवाजों, लोक व्यवहारों आदि को लेकर लिखा गया है। यह उपन्यास पंजाब हिमाचल सीमा पर स्थित शिवालिक पर्वतमाला में बसे कंडी क्षेत्र की पृष्ठभूमि पर आधारित है। धर्मपाल साहिल ने इस आंचलिक क्षेत्र की भौगोलिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, आर्थिक, राजनैतिक समस्याओं को इस उपन्यास में समेटा है। इसी क्षेत्र के रस्मोरिवाज, परम्पराएँ, रहन—सहन, पहरावा, लोकगीत, शादी—विवाह, अंधविश्वास, जात—पात आदि सभी को बहुत ही सूक्ष्म ढंग से विश्लेषण किया व उभारा भी। इस उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पाठक इस का पाठ करते हुए स्वयं उस क्षेत्र, पात्रों तथा वातावरण से इस ढंग से जुड़ जाता है कि वह स्वयं को उसी पहाड़ी रमणीक क्षेत्र में घूमता हुआ महसूस करने लगता है, उन पात्रों के संग विचरने लगता है।

उपन्यास पढ़ कर भी वह शैल, भैरू बाबा, बाबा टुकटुकिया, माना तवीतां वाला, गौरी, कुक्कू, बांका, आदि पात्रों से स्वयं को अलग नहीं कर पाता है। ये पात्र अपने सहज, सरल, कठिन तथा असाधारण व्यक्तित्व के कारण विशेष बन जाते हैं। पाठक इन से मिलने व संवाद रचाने के लिए उत्सुक हो उठता है।

7. बेटी हूँ न—अमृतलाल मदान के बंद होते दरवाजे उपन्यास की भांति इस उपन्यास में भी बेटी के जन्म को लेकर समाज की सोच, भ्रूण-हत्या, परिवार व समाज का बेटियों के साथ बर्ताव विभिन्न पात्रों के माध्यम से चित्रित करने का सफलतम प्रयास किया है। हमारा समाज प्राचीन काल से ही पुरुष प्रधान समाज रहा है, इस समाज में औरत को पैर की जूती समझा जाता है। आज स्थिति कुछ हद तक बदल चुकी है। तथापि औरत के प्रति समाज का नजरिया वैसा ही है जैसे पुराने समय में था। इसलिए लोग आज भी बेटी को जन्म देने से डरते हैं। छेड़छाड़, बलात्कार, तेजाबी हमले, कत्ल, दहेज, जिन्दा जला दिया जाना इत्यादि ने समाज के चेहरे को बदनुमा बना दिया है। लेकिन इन सबसे डरकर मादा भ्रूण हत्या करना एक जघन्य अपराध है। इस उपन्यास में साहिल ने इस विषय पर बड़ी रोचक कथा के द्वारा प्रकाश डाला। भावनी इस उपन्यास की प्रमुख पात्रा है जो पति के दबाव में आकर जुड़वा जन्मी बेटियों में से दूसरी बेटी का तिरस्कार कर देती है, क्योंकि उनके परिवार को वंश चलाने के लिए बेटा चाहिए बेटी नहीं, फिर भी पत्नी की जिद्द के आगे कुंवर रुद्रप्रताप सिंह पराजित हो गये और पहली बेटी को परिवार वालों से बगावत करके अपना लिया। तिरस्कृत (दूसरी) बेटी को मिशन अस्पताल का की नर्स सिस्टर मेरी घर ले जाती है और कानूनी कारवाई के बाद 'अडाप्ट' कर लेती है। समय बीतता जाता है। इधर भावनी की बेटी वाणी बड़ी हो रही थी साथ ही डायना सिस्टर मेरी की बेटी भी बड़ी हो रही थी। दोनों एक ही स्कूल में, एक ही कक्षा में पढ़ता थी। दोनों में अच्छी मित्रता थी। उनकी दोस्ती के बहाने दोनों परिवारों के एक दूसरे से अच्छे सम्बन्ध बन गए थे। इसी बीच भावनी से मेरी को पता चलता है कि डायना भवानी और कुंवर साहब की बेटी है। समय जब अपनी चाल चलने लगता है तो रुकता नहीं आगे बढ़ता ही जाता है। दसवीं

कक्षा एक साथ पास करने के बाद दोनों अलग अलग बोर्डिंग स्कूल में पढ़ने चली जाती है।

डायना परिवार और कुंवर साहिब के बीच दूरियाँ काफी बढ़ गई थी। इसी बीच वाणी जो अब जज बन गई थी, की शादी डिप्टी कमिश्नर से बड़ी धूमधाम से हो जाती है और वाणी की शादी के दो साल बाद गायनोकोलेजिस्ट सर्जन बन कर डायना 'कल्याण अस्पताल' में नौकरी ज्वाइन कर लेती है।

वहाँ डॉ. डेविड जो डायना का सीनियर था, की दोस्ती डायना से हो जाती है। कुंवर इन दोनों की शादी रुकवाना चाहते हैं तदुपरान्त उन्होंने साजिश रच कर बदचलनी का इल्जाम लगा कर डेविड को नौकरी से निकलवा दिया। डेविड यह जान चुका था कि अस्पताल में जो 'मादा भ्रूण' हत्या हो रहीं थीं, कास्मेटिक सर्जरी के नाम पर स्टेम सैल थरेपी का प्रयोग हो रहा था वह गैरकानूनी व जघन्य अपराध है।

वक्त की मार से कोई नहीं बच पाता। राजा साहब पर केस हुआ, पैरवी हुई, सबूत दिखाए गए। मुकदमे का फैसला सुनाने वाली जज थी उनकी अपनी ही बेटी वाणी। उपन्यास के अन्त में कुंवर साहिब पश्चाताप की अग्नि में बुरी तरह जल चुके हैं उनकी आत्मा उनको धिक्कार रही है।

"मेरी अर्थी को दोनों बहनें मिलकर कंधा देना और ... और मेरी चिता का अग्नि भी तुम ही। (बेटी हूँ न 101)

रुह को कंपा देने वाला डॉ. साहिल का यह सफल प्रयास हमारे सामने अनेकों प्रश्न खड़े कर देता है कि यदि बेटियां प्रत्येक क्षेत्र में बेटों से बढ़कर हैं तो बेटियों को हीन दृष्टि से क्यों देखा जाता है ?

अतः बेटियाँ जहाँ घर की शान हैं वहीं घर से बाहर अस्मिता की परिचायक हैं। इसलिए कुदरत के नियम को तोड़कर स्वयं को भगवान मान लेना बहुत बड़ी मूर्खता है।

द्वितीय अध्यायः
आलोच्य उपन्यासों में पारिवारिक और
सामाजिक मूल्यों का तुलनात्मक
अध्ययन

आलोच्य उपन्यासों में पारिवारिक और सामाजिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

मूल्य का जीवन से घनिष्ठ संबंध है। इस पद का प्रयोग चाहे जहाँ भी जिस भी रूप में करें सार्थकता तो वह मानव जीवन से जुड़कर ही पाता है। मूल्य का अर्थ तथा अस्तित्व जीवन के संदर्भ में ही है इसलिए उसे जीवन से किसी भी प्रकार अलग करके नहीं देखा जा सकता। परंपरागत रूप से देखा जाए तो किसी वस्तु या कार्य के बदले में दी जाने वाली राशि को मूल्य कहा जाता है। जीवन से जुड़े होने के कारण मूल्य शब्द के अर्थ क्षेत्र में विस्तार होता जा रहा है। अब इस शब्द का प्रयोग सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक स्तर पर संपूर्ण मानव व्यवहार के मानदण्ड के रूप में किया जाने लगा है।

मूल्यों का निर्माण समाज द्वारा किया जाता है। नवीन तथा परिवर्तित समाज की परिस्थितियों के अनुरूप ही मूल्यों का सृजन होता है। समाज सुधारक, बौद्धिक-वर्ग व राजनीतिज्ञ समाज को नई दिशा प्रदान करने के लिए नए मूल्यों का सृजन करते हैं। मूल्यों का निर्माण, विकास एवं संक्रमण समाज में प्रदेश व काल अनुरूप होता है। धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष ये चार पुरुषार्थ भारतीय संस्कृति के पोषक व उन्नति के उद्घोषक माने गए हैं। वर्तमान में भौतिकवादी चिंतन, पूंजीवादी सोच, जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिकीकरण एवं फिल्मों के दुष्प्रभाव आदि कारणों से भारत के समृद्ध एवं गौरवशाली मूल्यों का संक्रमण तथा विघटन हो रहा है। साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है इसी दर्पण में समाज के मूल्य, उनके संक्रमण तथा विघटन के चित्र प्रतिबिंबित होते हैं। अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यासों में जो पारिवारिक व सामाजिक मूल्य-संक्रमण दर्शाया है उनका अध्ययन सुविधा के लिए तुलनात्मक रूप में प्रस्तुत करें

2.1 पारिवारिक मूल्य संक्रमण तथा विघटन

2.1.1 परिवार की परिभाषा एवं स्वरूप

समाज के प्रथम सोपान के रूप में परिवार को अंगीकार किया गया है। उसके बिना समाज की कल्पना करना सर्वथा संभावना से परे है क्योंकि परिवार, समाज को गतिशीलता और निरंतरता प्रदान करता है। परिवार का श्री गणेश विवाह के साथ ही होता है। संतान परिवार के लिए नितांत आवश्यक है। पति-पत्नी के संबंधों को दांपत्य कहा गया है, परिवार नहीं। परिवार के अर्थ को स्पष्ट करते हुए पाश्चात्य विद्वान ब्रुगेस एवं लॉक ने कहा है—

“परिवार, विवाह, रक्त-संबंध या गोद लेने के बंधनों से संबंधित व्यक्तियों का एक समूह है जो गृहस्थी का निर्माण करते हैं और एक दूसरे के साथ अंतःक्रिया और अंतर संदेश देते हुए पति-पत्नी, माता-पिता, पुत्र-पुत्री और भाई-बहन के रूप में निर्धारित सामाजिक कार्यों का वहन करते हैं। एक सामान्य संस्कृति बनाते हैं एवं उसकी रक्षा करते हैं।” (भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में चित्रित सामाजिक जीवन 96)

इस परिभाषा में पति-पत्नी के साथ संतान एवं उनकी संस्कृति तथा संबंधों को भी स्थान मिला है। परिवार के मुख्य तत्वों के रूप में यौन संबंध, प्रजनन, आर्थिक बंधन, दीर्घकालीन समूह व पालन पोषण को मान्यता दी गई है। भारतवर्ष में प्राचीन काल से ही समाज का आधार स्तंभ संयुक्त परिवार व्यवस्था रही है। संयुक्त परिवार में दादा-दादी, माता-पिता, भाई व भाईयों के परिवार की संताने एक ही छत के नीचे रह कर जीवन यापन करते थे। परिवार के सभी कार्य परिवार के मुखिया बुजुर्ग के मार्गदर्शन में ही संपन्न होते थे। वह पूरे परिवार के लिए आदरणीय होता है। इस परिवार व्यवस्था में ही परिवार जनों में स्नेह, पारस्परिक सौहार्द, सद्भावना व सहयोग की भावना दृष्टिगोचर होती थी। संयुक्त परिवार की बदौलत तात्कालिक समाज की व्यवस्था अटूट थी।

2.1.2 पारिवारिक सम्बन्ध

पारिवारिक मूल्यों में मुख्य भूमिका रिश्तो की होती है। जो परिवार को बांधने का कार्य करते हैं। जब रिश्तो में प्रेम, स्नेह, प्यार, अपनापन, सहयोग जैसे मूल्य हों तभी परिवार सुख समृद्धि को प्राप्त करता है तथा इनके अभाव में परिवार भी विघटित हो जाता है। अमृतलाल मदान और धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में मुख्यतः पति-पत्नी, अभिभावक-संतान, सास-बहू, जेठ-बहु, भाई-भाई, भाई-बहन आदि रिश्ते प्रमुख रूप से चित्रित हुए हैं तथा इन रिश्तो के माध्यम से पारिवारिक मूल्यों तथा उनके संक्रमण तथा विघटन के दर्शन होते हैं।

2.1.2.1 पति-पत्नी के सम्बन्ध

सृष्टि, समाज तथा पारिवारिक जीवन का आधार दांपत्य जीवन को माना जाता है। पारिवारिक जीवन में पति-पत्नी के संबंधों को ही दांपत्य जीवन कहा गया है। पति-पत्नी का आपसी प्रेम, स्नेह और विश्वास उनके दांपत्य जीवन में खुशहाली और आनंद लाता है। पति-पत्नी आपसी स्नेह, प्रेम और विश्वास में अपना सर्वस्व एक दूसरे को समर्पित करते हैं। उनके जीवन की कटुता व विसंगति संपूर्ण जीवन में दुख ही दुख पैदा कर देती है। डॉक्टर अर्जुन चौहान दांपत्य जीवन के विषय में लिखते हैं-

“स्त्री और पुरुष के मिलन से दांपत्य जीवन की शुरुआत होती है। सुख दांपत्य जीवन की कुंजी है। पति-पत्नी में सामंजस्य, मेल, संतुलन, सच्चा-प्रेम और एक दूसरे के प्रति समर्पण की भावना आदि के अभाव में दांपत्य जीवन अशांत और दुखी बन जाता है।”(राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन 102)

स्त्री-पुरुष परिवार रूपी रथ के दो पहिए होते हैं उनमें जितना पारस्परिक संतुलन होता है उतना ही परिवार सुखी रहता है। वर्तमान काल में पति-पत्नी के संबंधों में जो दरारें आ रही हैं उसका कारण वैचारिक समता का अभाव, समाज में अनमेल विवाह, अधिकार की भावना, स्त्री में अशिक्षा, पारस्परिक दुर्व्यवहार, पतिव्रता धर्म का आकांक्षी आदर्श आदि हैं। जब पति-पत्नी के संबंध बिगड़ने लगते हैं तो

अनेक जटिल समस्याओं को जन्म देते हैं। इन सभी बातों को धर्मपाल साहिल व अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यासों में दर्शाया है।

धर्मपाल साहिल के 'खिलने से पहले' उपन्यास में सैफी के माता-पिता प्रेम विवाह करते हैं। उसके पिता हिंदू धर्म से हैं और माता मुस्लिम धर्म से। दोनों के परिवार इस रिश्ते को स्वीकार नहीं करते। वे अपने माता-पिता से अलग रहने लगते हैं, परंतु धीरे-धीरे उनके संबंधों में मनमुटाव शुरू हो जाता है। उनकी इस अनबन से घर में जो वातावरण निर्मित होता है उसका यथार्थ वर्णन सैफी अपनी मैडम सुमित्रा से करती है "मैडम जी ! हमारे घर में तो कोई एक दूसरे से सीधे मुहँ बात ही नहीं करता, तो लोरियां कौन सुनाएगा? मम्मी-पापा तो जरा-जरा सी बात पर एक दूसरे को काट खाने को दौड़ते हैं शायद ही कोई दिन ऐसा हो जिस दिन हमारे घर क्लेश नहीं होता।" (धर्मपाल साहिल खिलने से पहले 18)

जो संस्कार माता पिता के होते हैं वही अंकुर संतति में भी पनपते हैं। सैफी अपनी मैडम को अपने माता-पिता के बारे में बताती है "एक्चुअली क्या है मैम ! हमारी फ़ैमिली में ना यह सब बातें कॉमन हैं। पापा की गर्लफ्रेंड है, मम्मी के भी बॉयफ्रेंड, हमारे यहां फ्रेंड होना नॉर्मल सी बात है।" (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 30)

पति-पत्नी दोनों पर ही पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। दोनों ही स्वयं के सुख को परम लक्ष्य मानते हुए रात तक किटी पार्टियों में आनंद लेते हैं व नशे करते हैं। सैफी की माँ एक अन्य व्यक्ति जावेद से प्रेम संबंध स्थापित करती है, जिसके कारण सैफी के माता-पिता में अक्सर लड़ाई झगड़ा होता रहता है। इस प्रकार उनका दांपत्य जीवन दिखावे तथा विश्वास के टूटने की वजह से बर्बादी की ओर जा रहा है। सैफी की माँ को प्रेम की उड़ान ने अंधा बना दिया है। वह शादीशुदा होकर भी, बच्चों की माता होते हुए भी तथा पति होते हुए जावेद नामक युवक से दैहिक संबंध बनाए रखती है। इन पति-पत्नी के संबंधों में अनैतिक प्रेम, स्त्री का स्वतंत्रता को स्वैराचार मानना, उच्छृंखलता, कामान्धता आदि कारणों से पारिवारिक मूल्यों का विघटन हुआ है।

वहीं दूसरी और 'खिलने से पहले' उपन्यास में सुमित्रा और सेवादास पति-पत्नी है। सुमित्रा सैफी की मैडम है। सुमित्रा सेवादास का दांपत्य जीवन खुशहाली और आनंद से भरा हुआ है।

"उनके घर का माहौल शांतिप्रिय है। सुमित्रा का विवाह अरेंज मैरिज थी। पति-पत्नी दोनों नौकरी करते थे दोनों एक दूसरे की मजबूरियां और सीमाएं समझते थे। घर में कोई नौकरानी भी नहीं थी। उसके पति सुबह शाम घर के काम में हाथ बटाते। दो बच्चे थे उनमें साबी बड़ी और सौरभ छोटा। दोनों बच्चे बड़े हो चुके हैं। उन्होंने दोनों को बराबर प्यार दिया एक जैसी परवरिश दे रहे थे। दोनों में कोई अंतर ना रखा जाता।" (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 23)

"समाज की बुराइयों से दूर उनका परिवार एकदम शाकाहारी। मांस, मीट, अंडा, सिगरेट, शराब तो दूर घर में लहसुन से भी परहेज किया जाता। पति-पत्नी दोनों धार्मिक स्वभाव के, सुबह-शाम समय निकालकर मंदिर जाते। बच्चे भी साथ होते, ईश्वर में पूरी आस्था, परमात्मा का खौफ खाते।" (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 23)

कभी पति-पत्नी में आपसी मनमुटाव होने पर वह घर का माहौल कभी भी खराब ना होने देते,

"मोहल्ले में शायद ही कभी किसी ने सुमित्रा और उसके पति को आपस में झगड़ना तो दूर मुहँ से बोलते भी नहीं सुना था। किसी बात पर सहमति ना होने पर भी मौन धारण कर लेते। गुस्सा चुप रहकर प्रकट किया जाता। बिना बोले एक दूसरे को एहसास कराया जाता, गलती मानने को मजबूर किया जाता। अगर कोई तीसरा घर में आता तो उसे जरा भी महसूस ना होने देते कि पति-पत्नी में किसी बात को लेकर मनमुटाव चल रहा है। गैरों के सामने यह सामान्य से व्यवहार करने लगते।" (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 24)

इस प्रकार पति-पत्नी आपसी समझ से एक खुशहाल दांपत्य जीवन जी रहे थे। यहाँ पति-पत्नी में सामंजस्य, आपसी सहयोग, परस्पर मान-सम्मान, आपसी-प्रेम, अपने दायित्वों का ईमानदारी से निर्वहन आदि परंपरागत पारिवारिक मूल्यों को दिखाया गया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'और कितनी....' में शिवानी के माता-पिता विवाह के संदर्भ में उसकी पसंद के बारे में पूछते हैं—

“शिवानी! अगर तुम्हारी कोई पसंद है, तुम्हारी कहीं ओर दिलचस्पी हो तो बता दो। पहले हम वह देख लेंगे। अब वक्त बदल गया है। लड़के-लड़कियाँ अपना जीवन साथी स्वयं चुनने लगे हैं। देखो फिर मत कहना, मम्मी-पापा ने जबरदस्ती की है।” (धर्मपाल साहिल, और कितनी.... 21)

यहाँ माता-पिता के द्वारा लड़की की पसंद के बारे में पूछना मूल्य-संक्रमण है क्योंकि भारत में लड़कियों से उनकी पसंद के बारे में नहीं पूछा जाता था। शिवानी ने अपने माता-पिता की पसंद के लड़के से शादी कर ली। शिवानी बहुत ही संस्कारी और स्वाभिमानी लड़की है परंतु शिवानी और कन्नू का दांपत्य जीवन सफल नहीं हो पाता। कन्नू विवाह से पूर्व ही किसी और लड़की को प्रेम करता था। उससे शादी करना चाहता था, परंतु घर वालों के दबाव में शिवानी से शादी कर लेता है। शिवानी अपने ससुराल के अनुभव को अपनी बेटी परी को बताती है।

“ससुराल में जाते ही कन्नू के रंग ढंग भी एक पति वाले नजर नहीं आए थे। मैं दिल जान से समर्पित हो चुकी थी अपने पति व उसके परिवार पर। अब वह घर मेरा था। धीरे-धीरे मैंने अपने मायके परिवार को भूल जाना था। मेरा प्रेम, समर्पण सब इसी परिवार के लिए था। पर पता नहीं क्यों शादी से पहले भी और शादी के बाद भी कन्नू ने मुझ में कोई खास दिलचस्पी नहीं दिखाई थी।” (धर्मपाल साहिल, और कितनी....?82)

शादी के तीसरे दिन ही उसका पति कन्नू शिवानी से कहता है—

“मेरी एक बात को ध्यान से सुन ले, तू मेरी पसंद नहीं है। मैंने शादी से एक हफ्ता पहले भी अपने मम्मी-पापा से कहा था कि मुझे यहाँ शादी नहीं करनी पर वे नहीं माने। उन्होंने जबरदस्ती शादी की है मेरी। तू उनकी पसंद है। मेरी नहीं। मैं तेरी शक्ल भी देखना नहीं चाहता दफा हो जा मेरे सामने से।”(धर्मपाल साहिल, और कितनी...? 84)

समय बीतने के साथ-साथ वह शिवानी से दहेज की मांग करता है। शिवानी को अपने पिता से बीस लाख रुपये लाने और क्लीनिक खोलकर देने के लिए कहता है। शिवानी के गर्भवती होने पर उसका पति स्वयं डॉक्टर होकर भी धोखे से लिंग जाँच करवा कर कन्या भ्रूण का पता चलने पर गर्भपात करवाने को कहता है। शिवानी इस बात का विरोध करती है, “मैं आपकी सभी बात मानती आई हूँ ... मानती रहूंगी लेकिन मैं यह पाप हरगिज नहीं करूंगी। लड़की हो या लड़का मेरे लिए समान है। मैं इसे जन्म दूंगी ही।”(धर्मपाल साहिल, और कितनी...? 127)

कन्नू के पर स्त्री प्रेम, लालच, कामान्धता, पत्नी पर अमानवीय अत्याचार व अनादर के कारण उनके दाम्पत्य जीवन की परिणति तलाक के रूप में हो जाती है। वास्तव में यह पारिवारिक मूल्यों में संक्रमण ही है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास ‘ककून’ में विनोद और रिया पति-पत्नी है। प्रिया रिया की बहन है जिसके सैनिक अधिकारी पति रमन की आतंकवादी हमले में जल जाने से मृत्यु हो जाती है। प्रिया का बना बनाया घर टूट जाता है। रमन की मौत के बाद विनोद रिया के कहने पर उसकी हर प्रकार की मदद करता है। रमन का विभाग प्रिया को नौकरी देने का इच्छुक था। विनोद की भागदौड़ रंग लाई और काफी मेहनत के बाद प्रिया को नौकरी मिल जाती है। विनोद और प्रिया के संबंधों में पवित्रता होती है। सिर्फ रिश्तेदार होने के नाते वह उसकी मदद करता है। परन्तु विनोद की पत्नी रिया उनके रिश्ते में शक करने लगती है। वह कहती है, “आपका ही होगा प्रिया से रिश्ता, मेरी कुछ नहीं लगती वह मेरे तो आप भी नहीं। आप से भी क्या संबंध है मेरा।”(धर्मपाल साहिल, ककून 114) प्रिया की मदद करते-करते विनोद का अपना दाम्पत्य जीवन संकट में पड़ गया था।

“विनोद को उस समय और भी अधिक मानसिक आघात से गुजरना पड़ता जब वह दैहिक इच्छा पूर्ति के लिए रिया के पास जाता मनाता, तो वह यह कहकर करवट बदल लेती, “जाओ उसी के पास वही है तुम्हारी सब कुछ, मैं कुछ नहीं लगती तुम्हारी.....।” विनोद मन मारकर जख्मी सर्प की भांति करवटें बदलता विष घोलता रहता।” (धर्मपाल साहिल, ककून 138)

विनोद और प्रिया के रिश्ते में शक के कारण रिया इतना मानसिक संतुलन खो बैठती है कि वह कई बार आत्महत्या करने का प्रयास भी करने लगती है। यहाँ रिया का विनोद के प्रति प्रेम, परिवार में तीसरे व्यक्ति का समावेश होने का डर दिखाई देता है। दोनों में परंपरागत पारिवारिक मूल्य हैं।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास ‘खिलने से पहले’ में पति-पत्नी के अनेक जोड़े हैं जो पारिवारिक मूल्य संक्रमण एवं विघटन को दर्शाते हैं। वर्तमान में शिक्षा एवं पाश्चात्य प्रभाव के कारण भारतीय नारी के बर्ताव में परिवर्तन आए हैं जिससे मूल्यों में संक्रमण हुआ। इस उपन्यास में ‘मैडम कुमार, और मैडम हर्षिता लिव इन रिलेशन और होमो रिश्ते को अपनाती हैं जो पाश्चात्य संस्कृति से उन्होंने अपनाया है। कुमार मैडम कहती है—

“ऑल राइट मैडम अब अपने ट्रेडिशनल मैरिज सिस्टम को ही लो बोर हो गए हैं लोग इस सिस्टम से। आप जो मर्जी कहें बट आई बिलीव इन ‘लिव इन रिलेशनशिप’। मुझे तो यह ट्रेंड बहुत जचा है। बिन फेरे हम तेरे बनकर जब तक जी चाहे रहो, जब मन भर जाए, उकता गए.. ओके बाय बाय टाटा-टाटा...” (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 111)

सुमित्रा मैडम के इस बारे में और पूछने पर वह कहती है—

“इसमें मैडम एकदम बराबरी का दर्जा है औरत’—मर्द को। एक दूसरे की रिस्पेक्ट है। एक दूसरे को खोने का डर भी है, इसलिए कोई एक दूसरे को नाराज करने का रिस्क नहीं लेता। अपनी कमाई पर अपना हक कोई दहेज नहीं, कोई लड़की लड़के की समस्या नहीं। अगर बाई चांस अलग होना भी पड़ जाए तो कोई कोर्ट कचहरी का झंझट नहीं। एक दूसरे को आराम से

कहो—भई, जितनी निभ गई ठीक, बाकी मेरा रास्ता इधर तुम्हारा उधर। तुम फ्री। आजाद जियो—आजाद मरो।”(धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 112)

मैडम कुमार अपने और हर्षिता मैडम के होमो रिश्ते को स्वीकार करते हुए कहती हैं—

“हमें क्या जरूरत है धमाका करने की मैम, वी आर ऑलरेडी इन ‘लिव इन रिलेशनशिप’ हम उनकी तरह मूर्ख नहीं हैं। मैडम कुमार ने हर्षिता के साथ अपनी होमो—रिश्ते स्वीकारते हुए स्थिति ही स्पष्ट कर दी और अपने बारे में चल रही अटकल—बाजियों को यकीन में बदल दिया था। मैडम कुमार नहीं रुकी— अब तो मैडम इंडिया में भी कानूनन मान्यता मिल गई है। हाईकोर्ट के एक फैसले ने धारा 377 को नकार दिया है। कितना हो हल्ला मचा था पिछले दिनों मिडिया में...मेरी समझ में नहीं आता कि जब दुनिया भर के एक सौ सताईस कंट्री इस रिलेशन को स्वीकार कर चुके हैं तो फिर हमारे इण्डिया में क्या प्रॉब्लम है? यहाँ सभी को अपने ढंग से जीने की आजादी होनी चाहिए।”(धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 114)

यहाँ भारतीय पारम्परिक दाम्पत्य सम्बन्धित मूल्यों का संक्रमण व विघटन हुआ है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास ‘मचान’ में जगदीश और सुनन्या पति—पत्नी है। सुनन्या एक घरेलू स्त्री है। जगदीश एक सिपाही है। वह शराबी और अय्यास किस्म का इंसान है। अपने घर पर काम करने वाली नौकरानी के साथ अनैतिक संबंध बनाता है और उसकी पत्नी द्वारा विरोध करने पर उसे नौकरानी के सामने ही मारता—पीटता है। उसकी पत्नी जब यह सब बर्दाश्त नहीं कर पाती तो वह अपने मायके चली जाती हैं परंतु रोशनी उसके मायके जाकर उसे घरेलू हिंसा एक्ट के बारे में समझाती है, जो स्त्रियों की सुरक्षा के लिए सरकार द्वारा बनाया गया है। वह सुनन्या को बताती है—

“इस एक्ट के अनुसार अदालत में यह साबित करना होगा कि जगदीश तुम को शारीरिक और मानसिक तौर पर प्रताड़ित करता है। एक बार यह साबित होने पर आपको वहीं अपने घर में या किराए पर जहाँ तुम चाहो, पति के

खर्चे पर आजाद रहने की सहूलियत मिलेगी। दूसरे उसे आपको व आपके बच्चों की परवरिश का खर्चा भी देना होगा। कानूनन अगर वह फिर भी आप पर हाथ उठाएगा या मानसिक तौर पर तंग करेगा तो उसे जेल जाना पड़ेगा।” (धर्मपाल साहिल, मचान 203)

यह सुनकर सुनन्या कहती है “कानून तो बहुत बढ़िया है’ अगर मैं उसी घर में रही, तो वह मुझे मरवा भी सकता है। सुनन्या अपने भीतर बैठे डर को प्रकट कर रही थी।” यह सुनकर रोशनी कहती है— “तो वहीं अदालत में जज को कहना कि मुझे इस आदमी से जान का खतरा है, मैं वहां नहीं रह सकती। मुझे इस के खर्चे पर किराये का मकान लेने की व्यवस्था की जाए।” (धर्मपाल साहिल, मचान 196) रोशनी के समझाने पर सुनन्या अपने पति जगदीश के खिलाफ कोर्ट में केस कर देती है।

“अपनी और बेटे की जान को जगदीश से खतरा बताकर किराए की व्यवस्था के लिए पाँच हजार की अतिरिक्त राशि की माँग की, जिसे अदालत ने देना स्वीकार कर लिया था। सुनन्या के वकील की अपील पर जगदीश की ओर से हर महीने की 10 तारीख तक बीस हजार रूपये सुनन्या के बैंक खाते में ऑनलाइन भेजने के आर्डर करवा दिए थे।” (धर्मपाल साहिल, मचान 203)

जगदीश यह सब देखकर डर गया था इसके साथ ही उस पर हत्या का मुकदमा चल रहा था। इस समय किसी ने उसका साथ ना दिया। वह मानसिक रूप से परेशान होकर आत्महत्या कर लेता है। इस प्रकार जगदीश सुनन्या का दांपत्य जीवन पति के अत्यधिक लालच, शादीशुदा व बच्चों के पिता होते हुए भी अन्य औरतों से नाजायज संबंध बनाए रखने के कारण नष्ट हो जाता है।

धर्मपाल साहिल के ‘मचान’ उपन्यास में चंचला और दिलबाग पति—पत्नी हैं। वे एक दुसरे को बहुत प्रेम करते हैं और एक दुसरे के प्रति बहुत वफादार हैं। जगदीश नामक व्यक्ति जो रिश्ते में चंचला का जेठ लगता था, वह चंचला को पाना चाहता था इसलिए उसने दिलबाग की हत्या करवा दी। इस प्रकार किसी और के

गलत इरादों की वजह से चंचला और दिलबाग का दांपत्य जीवन समाप्त हो गया। दिलबाग की मृत्यु के पश्चात चंचला को संभालने के लिए मास्टर कुंज कुमार एक कंपनी में काम दिलवा देते हैं। कुंज कुमार एक बहुत ही शरीफ और बच्चों के प्रति स्नेह भाव रखने वाले व्यक्ति थे। उनकी उम्र 50 से ऊपर थी। अभी अविवाहित थे क्योंकि जिस से वे प्रेम करते थे उसने कहीं और शादी कर ली थी। उसके बाद मास्टर कुंज कुमार ने शादी ना करने का फैसला लिया था परंतु चंचला के संपर्क में आने के पश्चात चंचला और कुंज कुमार के बीच प्रेम प्रसंग प्रारंभ होता है। यहाँ पर कुंज कुमार चंचला को 'लिव इन रिलेशन' में रहने के लिए कहता है—

“इस प्यार को प्यार ही रहने दो इसे कोई और नाम ना ही दिया जाए तो ठीक है। शादी के बाद कब्जे की भावना पैदा होती है एक दूसरे के प्रति। एक दूसरे को गुलाम बनाकर रखने का जज्बा जोर पकड़ने लगता है। फिर प्यार, प्यार नहीं रहता कब्जा हो जाता है।”(धर्मपाल साहिल, मचान 262)

फिर वह चंचलो से दोबारा कहता है—

“वैसे तो चंचलो अब मैं पूरी तरह तुम्हारी गिरपत में हूँ, पर मैं इस कब्जे की बात नहीं कर रहा हूँ। बस मुझे इतना पता है कि शादी किसी भी प्यार की मंजिल नहीं है। शादी करा कर, प्रेमी—प्रेमिका नहीं रहते, पति—पत्नी बन जाते हैं। फिर यह आकर्षण, यह प्रतीक्षा, यह चाहत ये तड़प, सब खत्म हो जाती है।”(धर्मपाल साहिल, मचान 262)

यहाँ पर पारंपरिक दांपत्य संबंधों का संक्रमण पाश्चात्य संबंधों से होता हुआ दिखाया गया है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'हे पिता!' में अमर और राज पति—पत्नी हैं। अमर और राज की शादी माता—पिता की सहमति से अरेंज मैरिज होती है। राज से विवाह करने से पूर्व अमर सरिता नामक एक युवती से प्रेम करता था। उसका यह प्रेम प्रसंग सात—आठ वर्ष तक चला परंतु आर्थिक विषमता के कारण उनकी शादी ना हो पाई। राज से शादी करने के बाद भी वह सरिता को ना भूल पाया और जब कभी भी उसको मौका मिलता, सरिता से मिलने का प्रयास करता। राज ने अपनी

तरफ से अपने दांपत्य जीवन में कभी भी कोई कमी ना आने दी। अमर ने शादी से पहले राज को अपने और सरिता के बारे में बताया था। राज ने उन्हें सहर्ष स्वीकार किया क्योंकि अमर ने राज को जो बात थी उसको ज्यों की त्यों बता दी थी। उसे लगा जो व्यक्ति अपनी मन की बात साफ तौर पर बता देता है वह बहुत अच्छा होता है परंतु फिर भी कहीं ना कहीं राज के मन में भी बाद में यह बातें आती रही कि अमर सरिता की कमी महसूस करता है। यहाँ पर पति-पत्नी के संबंध परंपरागत हैं। पति-पत्नी में तनाव व संघर्ष की स्थिति नजर नहीं आती।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'अपने-अपने अंधेरे' में राजेश और शीला पति-पत्नी हैं। दोनों ही प्राध्यापक हैं। नौकरी और घर के काम की अधिकता के कारण शीला अपने पति को अधिक समय ना दे पाती। राजेश सामाजिक पद प्रतिष्ठा, दांपत्य सामंजस्य और अन्य स्त्री से प्रेम इस त्रिकोणात्मक स्थिति में उलझा रहता है। वह विवाहेत्तर संबंध को अनिवार्य भी मानता है क्योंकि वह उसके जीवन की प्रेरक शक्ति है परंतु नैतिक संस्कार उसे द्वंद्वरत बना देते हैं। उपन्यास में संस्कारों व स्वच्छंदतावाद की टकराहट है। ऐसी परिस्थिति में बुद्धिजीवी स्वच्छन्दतावादी हो कर भी परंपरागत थोपे गये संस्कारों के मोह को न त्याग पाता और न ही व्यक्तिगत चाह को स्वीकृति दे पाता है। वह तनावग्रस्त रहता है। राजेश प्रेम संबंध और दांपत्य को अलग मानता है क्योंकि प्रेमिका अलग जीवन को आराम देती है। पत्नी प्रेमिका नहीं रह सकती। विवाह के कुछ समय बाद वह सुविधा भोगी नारी, माँ, बहन जैसी बन जाती है। पति की भटकन के लिए पत्नी उत्तरदायी है क्योंकि व्यक्ति आयु के बुढ़ापे को स्वीकार नहीं करता। अभी तो मैं जवान हूँ का भाव लिए कभी अपने घर में चोरी करता है तो कभी दूसरे घर में संध लगाता है। वह अपनी शिष्या रेखा के प्रति उन्मुख है। रेखा इस प्रेम प्रकरण में सहज है, निर्द्वंद्व है, वह प्रेम और विवाह दोनों को अलग-अलग मानती है। राजेश किसी और स्त्री के प्रति आकर्षित होने में भी वह अपनी पत्नी शीला का ही दोष मानता है वह कहता है—

“क्यों नहीं वह कभी स्कूल और घर के बेशुमार कामों से फुरसत लेती? क्यों नहीं वह अपना जीरो पीरियड छोड़ देती? कमजोर छात्रों के लिए उसका

शून्य पीरियड उसके पति को कितना संज्ञा शून्य, कितना कमजोर बनाता जा रहा है उसे क्या मालूम? उसने शीला से दो-तीन बार कहा भी कि वह काम की अधिकता से बहुत थक जाती है इसलिए शून्य पीरियड छोड़ दें, लेकिन उसने हर बार यही उत्तर दिया कि प्रबंधन समिति का आदेश है जो टाला नहीं जा सकता.....उसे अपने प्रेम से इतना सराबोर कर दे की वह किसी और के पाश में फंस ही न सके।”(अपने- अपने अंधरे 30)

‘अपने-अपने अंधरे’ उपन्यास में राजेश का मित्र प्रदीप भी विवाहित होते हुए भी अपनी सहयोगिनी मोहिनी से अनैतिक संबंध स्थापित रखता है। प्रदीप राजेश को बताता है कि मोहिनी के पति जयप्रकाश को मोहिनी और उसके अनैतिक संबंधों के विषय में पता चल गया है

“गुस्से में आग बबूला होकर मोहिनी की खूब पिटाई की उस जालिम ने और उसे धमकी दी कि अगर मैं फिर कभी उसके दरवाजे पर नजर आया तो वह मेरी टाँगे तोड़ कर रख देगा और स्कूल की प्रबंधक समिति को भी शिकायत कर देगा। अब तुम ही बताओ अपनी टाँगे तुड़वाऊं या मोहिनी से अपना संबंध तोड़ दूँ। कुछ समझ नहीं आता क्या करूँ तुम ही कोई रास्ता सुझावो मित्र।” (अमृतलाल मदान, अपने-अपने अंधरे 51)

इस उपन्यास में विवाहेत्तर सम्बन्धों के कारण दांपत्य जीवन सम्बन्धित मूल्यों पारस्परिक विश्वास, प्रेम, आत्मीयता आदि का संक्रमण तथा विघटन दर्शाया गया है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास ‘वे अठारह दिन’ में समरजीत और राधा पति-पत्नी है। वे वृद्धावस्था में हैं। समरजीत को उसका पुत्र जो बाहर दूसरे शहर में रहता है उपहार रूप में एक लैपटॉप दे देता है। समरजीत को लैपटॉप के विषय में कोई जानकारी नहीं थी। वह कंप्यूटर सेंटर लैपटॉप सिखने जाने लगता है। उसकी मुलाकात एक नौजवान युवती गायत्री से होती है, जो उसे कंप्यूटर सिखाती है। दोनों ही नेट पर चैटिंग करने लग जाते हैं। दोनों एक दूसरे को पसंद करते हैं और प्रेम करते हैं। समरजीत की पत्नी राधा को जब इस बारे में पता चलता है तो वह समरजीत से इस विषय में पूछती है तो समरजीत झूठ बोलने का प्रयास करता

है। राधा उसे वह संदेश दिखा देती है जो उसने गायत्री को भेजे होते हैं। समरजीत राधा से कहता है राधा गायत्री मेरी बेटी जैसी है। राधा कहती है, "क्या बेटियां ऐसी होती हैं छिछोरी या फिर बुझे ऐसे होते हैं, तुम जैसे भँवरे।" (अमृतलाल मदान, वे अठारह दिन 71) इस उपन्यास में दर्शाया गया है कि किस प्रकार इंटरनेट का दुष्प्रभाव एक वृद्ध के मानसिक संतुलन को भी बिगाड़ देता है कि वह अपनी बेटी की उम्र की लड़की को ही अपनी प्रेयसी रूप में देखने लगता है। यहाँ पारिवारिक मूल्यों के संक्रमण तथा विघटन को दिखाया गया है। यहाँ पति-पत्नी के बीच के नैतिक मूल्यों का संक्रमण तथा विघटन हुआ है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'एक अधूरी प्रेम कथा' में सेठ जयराम दास अपना समय परिवार की बजाय दुकान में तथा राष्ट्रीय प्रोग्रामों को अधिक देते। उसकी इतनी व्यस्तता के कारण उसकी पत्नी और बेटी उनके प्रेम और सहचर्य को तरसती रहती। इस कारण उसकी पत्नी की मानसिक स्थिति बिगड़ जाती है।

"वह शांत रहती क्योंकि वह सचमुच प्यार और पुचकार की भूखी थी। घर में सब प्रकार का वैभव था, सुख, सम्पत्ति, समृद्धि सब थे पर प्यार नहीं था, दुलार नहीं था। सेठ जी दुकान-धंधे के अलावा अपना शेष समय राष्ट्रीय संस्कृति मंच की गतिविधियों में लगाते। यह मंच केवल राष्ट्र-प्रेम को ही मान्यता देता था। अन्य सब प्रकार का प्रेम इसकी दृष्टि में हेय था, गौण था, यहाँ तक कि स्त्री-पुरुष प्रेम तथा सन्तान के प्रति प्रेम भी। तभी तो सुमी की माँ डिप्रेसन का शिकार बनी चुपचाप बैठी या छत ताकती रहती या आकाश। धरती का कोई भी आकर्षण उसे लुभा न पाता, इकलौती बेटी की ममता से भी जैसे शून्य थी वह।" (एक अधूरी प्रेम कथा 77)

यहाँ पर पति की व्यस्तता के कारण पति-पत्नी विषयक परस्पर प्रेम, साहचर्य, यौनसुख आदि पारिवारिक मूल्यों का विघटन हुआ है।

सेठ जयराम दास अपनी पुत्री सुमी की शादी राष्ट्रीय संस्कृति मंच के सदस्य से कर देता है। अतः पति की अत्यधिक व्यस्तता के कारण सुमी दाम्पत्य जीवन के

सुख के अभाव में अंत में आत्महत्या कर लेती है। उपन्यासकार ने इस घटना को पार्वती-महादेव के वार्तालाप के माध्यम से दर्शाया है-

“हाँ महादेव...यही हुआ। न उसे मायके में प्यार मिला न ससुराल में। वहाँ भी देश-प्रेम और राष्ट्र भक्ति का बोल बाला तो था पर व्यक्ति-प्रेम या दाम्पत्य प्रेम न के समान। मंच पर से तो सुमित्रा मातृशक्ति के संबोधन से बुलाई जाती रही, पर वह कभी माँ न बन सकी। वह भी अपनी माँ की तरह धीरे-धीरे डिप्रेशन की अंध-गुफा में खिसकती रही और एक दिन, अपितु एक रात जबकि उसके पति देश-प्रेम की एक बैठक में भाग लेने गये हुये थे सुमि ने तेज़ ब्लेड से अपने शरीर, अपने गले की नसें काट दी और मृत्यु से पूर्व अपने रक्त से दीवार पर लिख गयी, मैं प्यार की भूखी थी और भूखी ही रही।” (एक अधूरी प्रेम कथा 82)

सुमी और उसकी माँ दोनों को सुखी दाम्पत्य जीवन न मिल पाया इसलिए दोनों उपेक्षित महसूस करने लगी। सुमी की माँ अपना मानसिक संतुलन खो देती है और सुमी आत्महत्या कर लेती है। यहाँ दाम्पत्य जीवन संबंधित मूल्यों का विघटन हुआ है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'इति प्रेमकथा' में दिशा अपनी माँ को फोन पर अपने पति के विवाहेत्तर संबंध के बारे में अपना दुःख प्रकट करते हुए कहती है-

“मम्मी, राजन अब भी उस डायन के चंगुल में फंसा हुआ है। पता नहीं कल छुट्टी के दिन भी जाने कहाँ-कहाँ गायब रहा। जब देर रात घर आया तो मैंने पूछना चाहा.. पर मुझे पीटने लगा वह, कृति और मुन्ने के सामने ही। दोनों बच्चों ने भी गुस्से में आकर दांतों से टाँगें काट ली पापा की, पर बाद में उन्होंने भी मार खायी।”(अमृतलाल मदान, इति प्रेमकथा 45)

पति-पत्नी के मध्य पति के विवाहेत्तर संबंध के कारण दाम्पत्य जीवन से संबंधित परस्पर विश्वास, सम्मान, प्रेम, समर्पण आदि मूल्यों का विघटन हुआ है साथ ही इसका नकारात्मक प्रभाव बच्चों पर भी पड़ता दिखाया गया है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'एक अधूरी प्रेम कथा' में वन्दना और अविनाश पति-पत्नी है। विवाह के पश्चात कुछ समय तक उनका दाम्पत्य जीवन सुखमय रहा परन्तु बाद में अविनाश के विवाहेत्तर सम्बन्ध के कारण दोनों के दाम्पत्य जीवन में अलगाव, अविश्वास आ जाता है और वन्दना अपने दुःख को कविताओं और कहानियों के माध्यम से प्रकट करने लगी। यहाँ पति के विवाहेत्तर सम्बन्ध के कारण आहत उसकी पत्नी वन्दना की मनस्थिति का वर्णन किया है—

“एक दिन वंदना ने अपनी दुःख गाथा सरि को सुना ही दी थी कि कैसे उसके पति अपने ऑफिस की एक विवाहित महिला-क्लर्क से प्रेम करने लगे थे। वह खुद दो बच्चों के पिता थे और उनकी प्रेमिका एक बच्चे की माँ। जब वंदना को इस विवाहेत्तर सम्बन्ध की भनक पड़ी तो उसे गहरा मानसिक आघात लगा। झगड़ा करने की बजाय उसने कहानियाँ-कविताएँ लिख लिख कर पति को अपनी पीड़ा से अवगत कराने की कोशिश की लेकिन अविनाश और साहित्य का दूर-दूर तक कोई लेना देना नहीं।” (अमृतलाल मदान, एक अधूरी प्रेमकथा 88)

यहाँ दाम्पत्य जीवन सम्बंधित पारम्परिक मूल्यों आपसी विश्वास, स्नेह, आत्मीयता आदि का विघटन दिखाया गया है।

2.1.2.2 माता-पिता और सन्तान के सम्बन्ध

बच्चों को संस्कारी बनाने का दायित्व माता-पिता का होता है। प्राचीन भारतीय परिवारों में तो माता-पिता के प्रति संतानों का बहुत ही ज्यादा समर्पण का भाव था। माता पिता प्रयास करते थे उनकी संताने संस्कारी बने और यश प्राप्त करें। बच्चे भी अपने बड़े बुजुर्गों का व माता-पिता का बहुत आदर करते थे व उनकी आज्ञा का पालन करते थे। बड़े बुजुर्ग व माता-पिता अपनी संतानों की सुरक्षा और विकास के लिए प्रतिबद्ध होते थे। पुत्री की अपेक्षा पुत्र को अधिक महत्व दिया जाता था। वर्तमान समय में माता-पिता और संतान से संबंधित मूल्यों का जो संक्रमण व विघटन हो रहा है उसे अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यासों में दर्शाया है।

पति-पत्नी के परस्पर संबंधों का सकारात्मक व नकारात्मक प्रभाव सीधा संतति पर पड़ता है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सैफी और सनी नामक बच्चों पर उनके माता-पिता के आपसी व्यवहार के प्रभाव को दिखाया गया है। सैफी के माता-पिता उसकी तरफ कोई ध्यान नहीं देते। यही पीड़ा सैफी अपनी सुमित्रा मैडम को बताती है—

“मैडम जी! जब मम्मी ऑफिस से आती है। मैं ट्यूशन पर चली जाती हूँ, अपना होमवर्क मैं वहीं पूरा करती हूँ। मेरी स्टडी कैसी चल रही है? मैं क्या करती हूँ? कहाँ जाती हूँ? मेरे साथ क्या हो रहा है? इसके बारे में जानने का टाइम ना मम्मी के पास होता है ना पापा के पास। मम्मी की तो अक्सर किटी पार्टी होती हैं।” (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 17)

सैफी अपने माता-पिता द्वारा उसके और उसके भाई में किए जा रहे भेद-भाव को इस प्रकार व्यक्त करती है—

“मैडम जी! अगर पापा मुझे प्यार नहीं करते तो मम्मी कौन सा करती है। जब से हमारे घर में छोटा भैया आया है ना। मुझे तो मम्मी ने जैसे भुला ही दिया है। मैडम जी जब मैं अकेली होती हूँ ना तब खूब रोती हूँ। मेरा कसूर क्या है? आप ही बता दो ना।” (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 19)

सैफी का उसके माता-पिता बिल्कुल भी ध्यान नहीं रखते हैं जिसके कारण सैफी गलत संगत में पड़ जाती हैं और नेट चैटिंग करने लग जाती हैं। वह माता-पिता के प्यार से ठगी हुई अनुभव करती हुई अपनी मैडम से कहती है, “मैडम जी! हमारे घर में तो कोई एक दूसरे से सीधे मुंह बात ही नहीं करता तो लोरियां कौन सुनाएगा? मम्मी-पापा तो जरा-जरा सी बात पर एक दूसरे को काट खाने को दौड़ते हैं। शायद ही कोई दिन ऐसा हो जिस दिन हमारे घर क्लेश नहीं होता हो।” (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 18) सैफी के माता-पिता के आपसी कलह से सैफी का बचपन बर्बाद हो जाता है और उसका बलात्कार हो जाता है। इसके बावजूद भी उसके माता पिता उसकी तरफ बिल्कुल ध्यान नहीं देते। उसकी मानसिक स्थिति बिगड़ जाती है, परंतु फिर भी उसकी माँ उसके प्रति कोई प्रेम,

कोई सहानुभूति का भाव नहीं दिखाती। सुमित्रा मैडम ही उसे अपने घर ले जाती है और उसका इलाज करवाती है। यहाँ माता-पिता और संतान के संबंधों से संबंधित मूल्यों का अत्यधिक संक्रमण और विघटन दिखाया गया है।

इसके विपरीत सुमित्रा सैफी की मैडम है। सुमित्रा व उनके पति सेवादाम अपने माता-पिता होने का पूरा फर्ज निभाते हुए दिखाए गए हैं—

“बच्चों को सच्चाई, ईमानदारी और मेहनत का पाठ पढ़ाया जाता। पढ़ाई के समय अकसर सुमित्रा बच्चों के पास खुद बैठ जाती। जहाँ वह स्वयं स्कूल के लिए अपनी तैयारी करती, वहीं अपने बच्चों का होमवर्क चेक करती। स्कूल का कार्य करने में उनकी मदद करती। सुमित्रा बदलते माहौल में बच्चों में आ रहे बिगाड़ से भी डरती। वह बच्चों को पता लगे बिना कभी कभार उनके कपड़े तथा बसते-किताबें आदि भी चेक कर लिया करती। मोबाइल से उन्हें अभी दूर रखा गया था।” (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 24)

पति-पत्नी ने कभी भी लड़का और लड़की में भेद नहीं किया। उनके दो बच्चे हैं साबी और सौरभ।

“उन्होंने कभी बेटे को इस बात का अहसास नहीं होने दिया कि वह इकलौता है और वह जिद करके अपनी बात मनवाने के लिए उन्हें मजबूर करें। उन्होंने हमेशा साबी और सौरभ में समानता का एहसास बरकरार रखने की कोशिश की। ना साबी में लड़की होने के कारण हीनता और ना सौरभ में लड़का होने के कारण किसी किस्म के अहम की भावना पैदा हो सके, इसका ध्यान रखा। एक आदर्श परिवार जैसा माहौल था।” (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 24)

धर्मपाल साहिल ने सुमित्रा-सेवादाम दम्पति के माध्यम से दाम्पत्य व पारिवारिक जीवन को आनन्दमय बनाने वाले आदर, समर्पण, स्नेह, सहानुभूति आदि परंपरागत मूल्यों को प्रबलता के साथ उकेरा है

सुमित्रा और उसके पति दोनों ही धार्मिक स्वभाव के हैं। सुमित्रा का अपनी संतान पर निगरानी रखना उनके संस्कारों को पोषित करने का मुख्य कारण रहा। “साबी और सौरभ किन-किन साथियों से मिलते जुलते हैं, उनका चरित्र कैसा है? शौक क्या है? उन पर, विशेषकर सुमित्रा स्वयं निगरानी रखती। सब से बड़ी बात कि बच्चों का रोजाना टाइम टेबल निश्चित किया हुआ था। वे स्वयं और बच्चे भी, उस दिनचर्या का पालन करने की कोशिश करते।” (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 24)

धर्मपाल साहिल के ‘खिलने से पहले’ उपन्यास में लक्ष्मीनारायण एक उद्योगपति है, जिसका इकलौता पुत्र सन्नी है। धनाढ्य परिवार में होने के कारण और अधिक लाडला होने के कारण वह बिगडेल लड़का बन जाता है। विद्यार्थी जीवन में ही नशे तथा नेट एडिक्शन का शिकार हो जाता है और अंत में नशा ना मिलने पर अपने हाथ की कलाई काट लेता है। बहुत मुश्किल से डॉक्टर उसकी जान बचा पाते हैं फिर उसे नशा मुक्ति केंद्र अमेरिका में उसके माता पिता ले जाते हैं। जहाँ बहुत प्रयास के बाद वह नशा छोड़ पाता है। यहाँ पर अमीर माँ-बाप अपने बच्चों को सिर्फ सुविधाएं उपलब्ध करवाकर अपना फर्ज पूरा कर देते हैं। संस्कार देने का प्रयास नहीं करते। इसके कारण उनका बचपन छिन्न जाता है। यहाँ माता-पिता और संतान से सम्बन्धित मूल्यों में संक्रमण व विघटन दिखाया गया है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास ‘अमर प्रेम कथा’ में सरि अमर से अपने बच्चों के उनके प्रति उपेक्षित व्यवहार के विषय में कहती है—

“तुम ठीक कहते हो अमर। हर चीज़ को बाज़ार की नज़र से तौलने वाले हो गये हैं हमारे बच्चे। या फिर लाभ-हानि के पैमाने से मापने वाले हो गये हैं। जैसे जीवन की भागम-भाग में भावना की दृष्टि ही गायब हो गयी है। संस्कार रेत पर पड़े मुर्दा निशान हो गये हैं।” (अमृतलाल मदान, अमर प्रेम कथा 52)

अमर और सरि अपने बच्चों द्वारा उनके प्रति किये जा रहे उपेक्षित व्यवहार के बारे में आपस में वार्तालाप करते हुए कहते हैं—

“ऊपर—ऊपर से वे पांव छू रहे होते हैं तो अंदर ही अंदर कोस भी रहे होते हैं कि क्यों आ गये ये दो बूढ़े थैले उठाकर, हमारी दिनचर्या और बच्चों की पढ़ाई खराब करने। हाँ अमर बहुत खराब समय आ गया है वृद्ध माँ—बाप के लिए। बहुएँ तो पराये घरों से आती हैं तो परायी—सी ही रहती हैं। लेकिन बेटों के पास भी समय कहाँ हैं माँ—बाप के पास बैठने का। हाँ सरि मुझे तो यह भी लगता है कि जब हम मरेंगे तो श्मशान तक हमारी अर्थी को पहुंचाने का समय भी नहीं होगा उनके पास। या फिर चिता को बीच में जलती ही छोड़ भाग खड़े होंगे कम्पनी का कोई डील निबटाने फाईव—स्टार होटल में। और उसी शाम बच्चों को मॉल भी ले जाएंगे और शायद मल्टी—प्लेक्स भी ले जाएं। हमारी मौत के बहाने से छुट्टी तो मिल ही जाएगी उन्हें।” (अमर प्रेम कथा 52)

माता—पिता और संतान सम्बंधित पारम्परिक भारतीय मूल्यों आदर, प्रेम, समर्पण, स्नेह, सेवा, सहानुभूति, कर्तव्यपरायणता आदि का विघटन यहाँ अमर—सरि और उनके पुत्र—पुत्रवधू के आपसी व्यवहार में दर्शाया गया है। जो अपनी ऐश्वर्यपूर्ण जीवन में माता पिता को बाधक मानते हैं और उनके प्रति आदर, स्नेह, सेवा आदि भाव नहीं रखते।

अमृतलाल मदान के उपन्यास ‘इति प्रेमकथा’ में एक माँ की अपने बच्चों के दुःखों के प्रति चिंता को शीला के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। शीला का पति कहता है “अब भी परेशान हो उठती है दिशा और राजन के बिगड़ते संबंधों को देख कर। पहले अदृश्य को हाथ जोड़ कर हे गुरु महाराज कृपा करो कहती थी। अब कुछ दिनों में हे शिव बाबा कृपा करो कहने—बुडबुडाने लगी है।” (अमृतलाल मदान, इति प्रेमकथा 45) यहाँ माता—पिता और बच्चों से संबंधित मूल्यों का पारंपरिक रूप देखने को मिलता है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'मचान' में चंचला और दिलबाग के दो बच्चे होते हैं। दोनों मिलकर अपने बच्चों की अच्छी परवरिश कर रहे होते हैं। अचानक दिलबाग की मृत्यु के बाद यह जिम्मेवारी अकेले चंचला पर आ जाती है और वह अपने बच्चों को अच्छा पढ़ा लिखा कर अच्छे इन्सान बनाना चाहती है। इसके लिए वह एक कंपनी में नौकरी करती है ताकि वह अपने बच्चों की अच्छे से परवरिश कर सके। यहाँ माता-पिता और बच्चों से संबंधित मूल्यों का पारंपरिक रूप देखने को मिलता है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बेटी हूँ न' में कुंवर नारायण और भावनी की दो जुड़वा बेटियां होती हैं, परंतु कुंवर नारायण को पुत्र की इच्छा थी। वह एक पुत्री को जन्म लेते ही मिशन अस्पताल के बाहर रखा आता है। उस पुत्री को मिशन अस्पताल की नर्स सिस्टर मैरी अपने घर ले जाती है और कानूनी कारवाई के बाद गोद लेकर उसे पालने लग जाती है। वह उसका नाम डायना रखती है और उसे बहुत अच्छे संस्कार देती है। डायना बड़ी होकर डॉक्टर बनती है। दूसरी और जो पुत्री भावनी के पास होती है उसका नाम वाणी रखा जाता है, और वाणी भी पढ़ लिखकर जज बन जाती है। कुंवर नारायण ने कभी भी पुत्रियों के लिए प्यार या समर्पण नहीं दिखाया। जुड़वा बेटियों के बाद कुंवर नारायण के एक लड़का होता है जिसका नाम प्रिंस रखा जाता है। वह ज्यादा लाड-प्यार की वजह से बिगड़ जाता है। वह न तो ढंग से पढ़ाई कर पाता है बल्कि नशे और सभी गलत आदतों का शिकार हो जाता है और अंत में जेल में आत्महत्या कर लेता है।

अंत में कुंवर नारायण की आंखें खुलती है और वह पुत्र व पुत्री में किए भेदभाव पर बहुत अधिक पछताता है और कहता है, "जिस पुत्र की मुझे बहुत अधिक कामना थी। जिसे बहुत चाहता था, उसी की वजह से उसे बहुत अधिक बदनामी का सामना करना पड़ा और जिन पुत्रियों को वह देखना भी नहीं चाहता था वही आज डॉक्टर और जज बनकर उसका नाम रोशन कर रही हैं।" (धर्मपाल साहिल, बेटी हूँ ना 101) कुंवर नारायण पश्चाताप करता है तथा अपनी बेटियों को कहता है, "मेरी अर्थी को दोनों बहनें मिलकर कन्धा देना और और मेरी चिता को अग्नि भी तुम्हीं।" (धर्मपाल साहिल, बेटी हूँ ना 101)

भारतीय परंपरा में पिता का अंतिम संस्कार करने का अधिकार पुत्र को दिया गया है। कुंवर नारायण द्वारा यह अधिकार पुत्री को दिया गया, जो कि मूल्य संक्रमण तो दर्शाता है तथा पुत्र-पुत्री में समानता के मूल्य की स्थापना भी करता है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास '...और कितनी?' में शिवानी जब गर्भवती होती है तो उसका पति कन्नू जो एक डॉक्टर है, धोखे से उसका लिंग जांच करवा देता है। लड़की का पता लगने पर शिवानी पर गर्भपात करवाने के लिए जोर डालता है। कन्नू के माता-पिता की इच्छा है कि उनके घर में पहला वारिस लड़का हो परंतु शिवानी एक सच्ची माँ होने का फर्ज निभाती है। अपने पति को साफ-साफ गर्भपात करवाने से मना कर देती है। शिवानी की नजर में लड़का-लड़की समान हैं। इसी वजह से कन्नू और शिवानी के बीच से पहले से चला रहा मनमुटाव और भी बढ़ जाता है और अंत में वे तलाक ले लेते हैं। शिवानी को तलाक मंजूर था लेकिन वह अपनी बेटी को नहीं खोना चाहती थी। वह अपनी बेटी का नाम परी रखती है और उसे बहुत ही अच्छे संस्कार देती है। शिवानी अपने माता-पिता के पास ही रहती है। इस प्रकार यहाँ शिवानी माता होने का फर्ज बहुत बखूबी निभा रही है जो कि परम्परागत भारतीय मूल्य है।

2.1.2.3 सास-ससुर और बहु के सम्बन्ध-

प्राचीन काल में भारतीय संस्कृति में सास-ससुर को बहुत ही उच्च-दर्जा प्राप्त था। सास को माँ, और ससुर को पिता का दर्जा प्राप्त था। बहू के मन में अपने सास-ससुर के प्रति अपार श्रद्धा होती थी। सास-ससुर भी अपनी बहू को पुत्री की तरह मानते थे। सास-बहू का ऐसा रिश्ता आज दुर्लभ है। आमतौर पर देखा जाता है सास अपनी पुत्रवधू के साथ दुर्व्यवहार करती है और जब अगर सास के साथ ननदें भी मिल जाती हैं तो यह यातना बहू के लिए और भी कष्टकारक हो जाती है। दूसरी तरफ यह भी देखा गया है कि बदलते मूल्य ने पारिवारिक स्तर पर परंपरागत सासवाद को चुनौती देकर परिवार के बीच सास के प्रभाव को ही कम नहीं किया बल्कि सास की स्थिति को एक बाहरी प्राणी के रूप में बदलने की चेष्टा

भी की है। ऐसा देखा जाता है कि यदि सास-ससुर बहू के प्रति सद्भावना रखते हैं तो बहू के मन में भी सास-ससुर के प्रति स्नेह रहेगा ही। धर्मपाल साहिल और अमृतलाल मदान के उपन्यासों में सास-ससुर और बहू के संबंध से संबंधित मूल्यों को दर्शाने का प्रयास किया गया है।

धर्मपाल साहिल के 'मचान' उपन्यास में चंचला और उसकी सास का रिश्ता पारंपरिक पद्धति से वर्णित है। चंचला के पति और ससुर खेतों में काम करते हैं तो सास-बहू घर का काम संभालती हैं। पहले ससुर और फिर पति की मृत्यु के बाद घर में सास-बहू और दो बच्चे रह जाते हैं। सास-बहू दोनों मिलकर घर की जिम्मेदारियों को निभाने का प्रयास करती हैं। घर में कोई और आमदनी का साधन ना होने के कारण चंचला एक फैक्ट्री में नौकरी करने के लिए जाती है। वह अपनी सास से बच्चों का ध्यान रखने के लिए कहती है। उसकी सास उसे झटपट अपना सहयोग देने का वचन देते हुए नसीहत भरे शब्दों में कहती है—

“बहू चंचलो तू बच्चों की चिंता बिल्कुल मत कर, बस तू अपना ख्याल रखना। आजकल जमाना बहुत खराब है जवान और खूबसूरत विधवा पर कई गिद्ध दृष्टि रखते हैं बस उनसे बचना। खामखा बदनामी का टीका मत लगवा लेना हमारे। पहाड़ी समाज का पता ही है जीना हराम कर देगा इसे किसी की मजबूरी से कोई लेना देना नहीं होता।” (धर्मपाल साहिल, मचान 102)

यह बात सुनकर चंचलो उनको अपने बारे में आश्वस्त करते हुए कहती है “माँ आप विश्वास करें आपकी चंचलो ऐसा कोई कर्म नहीं करेगी। मुझे तो इन बच्चों की चिंता है इसीलिए यह कदम उठाया है।” (धर्मपाल साहिल, मचान 103) यहाँ सास और बहू के बीच आपसी सामंजस्य, प्रेम और सहयोग की भावना दिखाई देती है। यहाँ सास अपनी बहू को नसीहत भी देती है। बहू बहुत ही आदर से उस नसीहत का आदर भी करती है। यहां सास-बहू संबंधित आदर, समर्पण, सेवा, सहयोग, स्नेह, सहानुभूति आदि परंपरागत मूल्य दृष्टिगत होते हैं।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'और कितनी...?' में शिवानी और उसके सास-ससुर के संबंध अच्छे नहीं हैं। शिवानी अपने कर्तव्य ईमानदारी से निभाती नजर आती है। सास-ससुर उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते। सास-ससुर के साथ मिलकर दोनों ननदें भी उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं करती हैं। जब कन्नू शिवानी के साथ दुर्व्यवहार करता है तथा उसके साथ मारपीट करता है। तब शिवानी अपनी सास के पास उसकी शिकायत लेकर जाती है तो उल्टा सास ही उसे कसूरवार ठहराते हुए कहती है, "जब तक तू अपनी जुबान को लगाम नहीं लगाएगी, तेरे साथ ऐसा ही होगा। तू कन्नू से बहस कर रही थी। तेरी आवाज हमें नीचे कमरे तक सुनाई दे रही थी।" (धर्मपाल साहिल, ...और कितनी? 118) जब वह अपनी सास से कहती है कि मैं नहीं बोल रही थी बल्कि कन्नू ऊंची आवाज में बोल रहे थे तब उसकी सास बेटे कन्नू की तरफदारी करते हुए उल्टा शिवानी को ही कहती है "तूने मेरे बेटे की जिंदगी नरक बना दी है। हमारा जीना हराम कर दिया। चली जा यहाँ से।" (धर्मपाल साहिल, ...और कितनी? 118) घर में किसी की भी तरफ से शिवानी के साथ अच्छा व्यवहार ना किया गया और हर जगह उसके साथ दुर्व्यवहार और मारपीट होती रही। शिवानी और कनु का तलाक हो जाता है इसमें शिवानी का कोई कसूर नहीं होता। यहाँ सास-ससुर का बहु के प्रति दुर्व्यवहार मूल्य संक्रमण है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'बंद होते दरवाजे' में उमाकांत और रमा रीना के सास-ससुर है। उनके बेटा-बहू दिल्ली शहर में रहते हैं और वह शीलानगर में रहते हैं। मोहित उनका इकलौता बेटा है। मोहित अपने माता-पिता का मान सम्मान करता है परंतु इसके विपरीत उनकी बहू रीना उनके साथ अच्छा व्यवहार नहीं करती है। जब कभी वे शीलानगर से दिल्ली उनके पास आते हैं। वे उन्हें मान सम्मान ना देकर हर समय अपमानित करती रहती है। उनका दिल्ली आना उसे बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगता। उनके आने से उनके अपने कार्यक्रम डगमग हो जाते थे। रीना अपनी झल्लाहट बेचारी नौकरानी पर उतारते हुए वृद्धों को सुनाते हुए कहती है—

“जल्दी से आलू उबाल, टमाटर काट, सलाद बना। फिर जाकर उनके लिए बिस्तर निकाल, सोफा-कम-बैड बिछा बच्चों वाले कमरे में। दो दिन के लिए मेहमान आए हैं, उन्हें हर किस्म का आराम मिलना चाहिए वैसे भी बूढ़े हैं बेचारे।”(बंद होते दरवाजे 56)

मोहित की इच्छा होती है कि वह उसके माँ-बाप के पास बैठे उनसे हालचाल पूछे दुःख-सुख की बातें करें। बहनों की बातें करें...परंतु रीना को यह सब अच्छा नहीं लगता। वह मोहित को भी उसके माता-पिता के पास बैठने नहीं देती। जब कभी भी वह अपने माता-पिता के पास बैठता है तो “रीना टोक देती है, मोहित ऑफिस का काम पेंडिंग पड़ा है, वह नहीं करना क्या? बेचारा मोहित पुतले की तरह उठता और लैपटॉप या कोई फाइल लेकर बैठ जाता।” (अमृतलाल मदान, बंद होते दरवाजे 57) जब तक वे उनके पास रहते रीना किसी ना किसी बहाने घर में लड़ाई झगड़ा बनाए रखती। मजबूर होकर उसके सास-ससुर को वापस अपने गांव आना पड़ता। यहाँ बहू का व्यवहार अपनी सास-ससुर के प्रति सम्मानपूर्ण नहीं है। यहाँ सास-ससुर और बहू संबंधित पारंपरिक मूल्यों आदर, समर्पण, स्नेह, सहानुभूति आदि का संक्रमण और विघटन दर्शाया गया है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास ‘एक समांतर प्रेम कथा’ में देव, पत्नी तथा पुत्र-पुत्रवधू के उपेक्षित और अनादर पूर्वक व्यवहार के कारण आश्रम में साधू बनने चला जाता है। वहाँ एक साध्वी के बार-बार पूछने पर वह कहता है “पत्नी बात-बात पर झगड़ा करती है...बेटा बहू के चंगुल में फंसा हुआ है। कोई कहना नहीं मानता, न उनकी परवाह करता है। बहू को अपने मायके की चिंता ज़्यादा है। जब देखो वहीं गई रहती है...”।(एक समांतर प्रेम कथा 50)सास-ससुर के बेटा-बहू से संबंधित पारंपरिक मूल्य यहाँ संक्रमित और विघटित होते नजर आते हैं।

अमृतलाल मदान के उपन्यास ‘एक समान्तर प्रेम कथा’ में सास-ससुर द्वारा बहू से किए दुर्व्यवहार को प्रस्तुत किया गया है। दिशा और राजन अंतरजातीय विवाह करते हैं। दिशा के माता-पिता बच्चों की खुशी में ही खुश है, परन्तु राजन के माता-पिता राजन की ज़िद के कारण उनकी शादी करवाते हैं। वे उनकी शादी

से नाखुश थे इसलिए वे दिशा से दुर्व्यवहार करते हैं। वे सोचते हैं उनकी बहू ने उनके बेटे को उनसे छीना है। वे कहते हैं "आजकल की बहूँ सब एक जैसी हैं..... पति को पल्लू में बाँधा और मौज मस्ती शुरू सास ससुर जाएँ भाड़ में।" (एक समान्तर प्रेम कथा 15)

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'एक अधूरी प्रेम कथा' में अमर अपनी पत्नी से अपने और अपनी पुत्रवधू के व्यवहार की तुलना करते हुए कहता है—

"हमने तो अपने माँ बाप की सेवा भी की और जवान बच्चों की भी। सबकी भावनाओं का ख्याल रखा....लेकिन अब तो हमारी भी सेवा होनी चाहिए....बहू तो उल्टा नाक में दम किये रहती है.पापा यह कर दो....पापा वो कर दो.... अब बाज़ार से सब्जी ला दो....बच्चों को स्कूल की बस से ले आओ। खड़े रहो धूप में वहाँ।"(एक अधूरी प्रेम कथा 51)

सास—ससुर और पुत्रवधू संबंधी पारम्परिक मूल्यों आदर, सेवा, स्नेह आदि का विघटन दर्शाया गया है तथा साथ ही सास—ससुर की सेवा के स्थान उनसे ही सेवाएँ ली जाती हैं।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'विराट बौना' में मिश्रा जी अपने पिता को औपचारिकता वश पत्र में कुछ दिन उनके साथ बिताने के लिए लिख देता है और उनके पिता जी वास्तव में ही उनके घर आ जाते हैं। उनका यों अचानक आना घर में किसी को भी अच्छा नहीं लगता। "चरण—स्पर्श करने के लिए कोई भी पूरी तरह से नहीं झुका। उनके साथ सूटकेस, छतरी, थैला देखकर लग रहा था कि वे बहुत दिनों के लिए रहने के लिए आए थे।"(अमृतलाल मदान, विराट बौना 79) आज मनुष्य अपने आप में ही मग्न रहता है उसे ना किसी के दुःख से कोई दुःख होता है ना ही सुखी देखकर कोई खुशी होती है। यहाँ तक बच्चे अपने माता—पिता को देखकर भी प्रसन्न नहीं होते। अभिभावक और बच्चों से संबंधित पारंपरिक मूल्य यहाँ संक्रमित और विघटित होते नजर आते हैं।

2.1.2.4 दादा-दादी और बच्चों के सम्बन्ध

प्राचीन भारतीय परंपरा में संयुक्त परिवारों को बहुत अधिक महत्व दिया गया है। एक परिवार में दादा-दादी, माता-पिता, भाई, भाइयों के बच्चे सभी एक छत के नीचे रहते हैं। संयुक्त परिवार में आपसी सहयोग, स्नेह, सद्भावना, समानता, श्रद्धा, त्याग आदि की भावना बढ़ती थी। परिवार का मुखिया बुजुर्ग हुआ करता था। सभी उसका आदर करते थे। उस के मार्गदर्शन में सभी सदस्य कार्य करते थे। संयुक्त परिवार में व्यक्तित्व की अपेक्षा सामूहिकता की प्रमुखता रहती थी। बच्चों में अच्छे संस्कार आते थे। परंतु इन पारंपरिक परिवारों का संक्रमण हो गया और परिवार एकल परिवारों में विभक्त हो गए जिससे बच्चों में अच्छे संस्कार कम होने लगे। अमृत लाल मदान के 'विराट बौना' उपन्यास में सुरेश मिश्रा जी अपनी पत्नी और दो बच्चों के साथ रहते हैं। उनके पिताजी गाँव में रहते हैं। जब कभी भी उनके पिता जी शहर आते हैं। मिश्रा की पत्नी और उनके बच्चों को उनका आना अच्छा नहीं लगता। एकल परिवार में रहने की वजह से उन्हें दादा-दादी के प्यार का महत्त्व ही नहीं पता। वे ना तो उनका आदर करते हैं और ना ही उनके महत्त्व को जान पाते हैं। जब उनके दादा जी उनके पास आते हैं तो दोनों बच्चे आपस में बात करते हैं "जिस घर में दादा जी जैसे खूसट बूढ़े होंगे मैं तो वहाँ हरगिज शादी ना करूंगी। हैल विद इट। मैं भी डिकटेटर के साथ रहना पसंद ना करूंगा डैम इट "(अमृतलाल मदान, विराट बौना 89) यहां दादा-दादी और बच्चों के संबंधों में परंपरागत मूल्यों आदर, प्रेम, स्नेह, दयालुता आदि का विघटन दिखाया गया है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'वे अठारह दिन' में समरजीत और राधा के पोता-पोती हैं, परंतु वे उनके पास नहीं रहते। वे अपने माता-पिता के साथ दिल्ली शहर में रहते हैं। दादा-दादी का अपने पोता-पोती के साथ रहने का बहुत मन करता है। इनकी इच्छा है कि हमेशा के लिए ना सही, कभी कभार छुट्टियों में तो वे उनके पास आ जाया करें, परंतु उसके बेटा-बहू बाहर विदेश में तो घूमने के लिए टाइम निकाल लेते हैं परंतु अपने बूढ़े माता-पिता को मिलने के लिए उनके पास नहीं आते थे। बेटे द्वारा उपहार स्वरूप लैपटॉप मिलने पर समरजीत अपना दुःख प्रकट करते हुए अपनी पत्नी राधा से कहता है—

“राधा यह महज खिलौना ही नहीं, एक नई जीवनशैली भी है, अजीब सी आजकल के युग में समय गुजारने की। तुम्हारे बेटे-बहू से यह तो होता नहीं कि कम से कम छुट्टियों में ही कुछ छुट्टियां बच्चों के साथ यहाँ आकर बिता जाए। बस ले लिया यह खिलौना कि बूढ़े माँ-बाप इसी में मस्त रहें।”
(अमृतलाल मदान, वे अठारह दिन 8)

समरजीत के बेटा-बहू उन्हें समय नहीं दे पाते, परंतु टाइम पास के लिए उन्हें एक लैपटॉप उपहार के रूप में दे देते हैं ताकि वे अपना टाइम पास कर सकें। राधा स्वयं को रसोईघर के अंतहीन कामों में व्यस्त रखने का प्रयास करती, परंतु भीतर ही भीतर उसे यह भी पीड़ा सालती रहती कि

“बेटा-बहू और उनके बच्चे नहीं आते। दोनों विवाहित बेटियां फोन पर भी नियमित रूप से अपने पापा का हाल जानती रहती हैं और कभी-कभी बच्चों और पति के साथ अपनी अपनी गाड़ी में मिलने भी आती रहती हैं। परंतु दंपति का मन अपने पोते-पोती के लिए तड़पता रहता है। काश छुट्टियों में ही यदि वे आ जाते तो समर बाबू उन्हें पढ़ाते उनके साथ कभी कैरम खेलते हैं, तो कभी लूडो। बेटे बहु के साथ पिछली यादें सांझा करते। उन्हें जमाने की ऊँच-नीच समझाते, कुछ रिश्तो का महत्व समझाते। पर कहाँ। यह वृद्ध दंपति तो मानो एक भागती हुई तेज़ नदी के किनारे अकेले पड़े रहने को छोड़ दिए गए हैं। जियो या डूब मरो अपनी बला से।”(अमृतलाल मदान, वे अठारह दिन 8)

वर्तमान समय में अत्यधिक व्यस्त जीवनशैली के कारण व्यक्ति अपने आप में ही सिमट कर रह गया है। ना तो किसी दूसरे के दुख में कोई दुखी होता है और ना ही किसी को खुश देखकर किसी को खुशी होती है। यहाँ दादा-दादी चाहकर भी अपने पोता-पोती के साथ ना तो रह पाते हैं, और न ही उन्हें अपने पास ही रख पाते हैं। यहाँ दादा-दादी और बच्चों से संबंधित मूल्यों का विघटन हुआ है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास ‘एक समान्तर प्रेम कथा’ में दादा-दादी की पोते की इच्छा को दिखाया गया है साथ ही पोती की उपेक्षा को उजागर किया है—

“दिशा की दो वर्षीय बेटी अपने को उपेक्षित सी महसूसती पड़ी रोती-चिल्लाती रहती। दिशा जान बूझ कर उसकी उपेक्षा कर रही थी। जब वह उसके पेट में थी तो उसकी ससुराल वाले (जो पहले ही इस अन्तरजातीय विवाह के कारण खफा-खफा रहते थे) इस आशा के साथ अच्छा व्यवहार करने लगे थे कि शायद पहली संतान बेटा हो। अगर ऐसा हो जाता तो यह प्रेम-विवाह भी स्वीकार्य हो जाता, लेकिन पैदा हुई बेटी। जैसे उसने पैदा होकर कोई भीषण अपराध कर दिया हो।”(एक समान्तर प्रेम कथा 21) यहाँ दादा-दादी और बच्चों से संबंधित मूल्यों का विघटन हुआ है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास ‘मचान’ में चंचला और दिलबाग सिंह के दो बच्चे हैं। लड़की का नाम शालू और लड़के का नाम शौर्य है। उनके दादा-दादी उनके साथ रहते हैं। पहले उनके दादा जी और फिर कुछ समय पश्चात उनके पिता जी की मृत्यु हो जाती है। घर में उनकी माँ और दादी और वे दोनों बच्चें हैं। वे मिलजुल कर रहते हैं। बच्चे अपनी दादी का कहना मानते हैं, उनके पास रहते हैं। उनसे अच्छी बातें सीखते हैं। उनके पास कोई आमदनी का साधन नहीं था इसलिए उनकी माँ शहर में एक फैक्ट्री में नौकरी करने जाती है और पीछे से बच्चे अपने दादी के पास रहते हैं। चंचला अपनी नौकरी पर जाती है तो उसकी सास अपने पोता-पोती का पूरा ध्यान रखती है और बहू को आश्वस्त करके नौकरी पर जाने के लिए कहती है, “बहु चंचलो, तू बच्चों की चिंता बिल्कुल मत कर। बस तू अपना ख्याल रख।”(धर्मपाल साहिल, मचान 102) यहाँ दादा-दादी और बच्चों के बीच में परंपरागत मूल्य स्नेह, आदर, सेवा, समर्पण, सहानुभूति आदि दिखाई देते हैं।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास ‘खिलने से पहले’ में सैफी के माता-पिता लव मैरिज करते हैं। पिता हिंदू धर्म से हैं और माता मुस्लिम धर्म से। उनके परिवार वाले शादी को स्वीकार नहीं करते और वे अलग रहने लग जाते हैं। सैफी की दादी उन्हीं के शहर में रहती है परंतु कभी भी ना तो उसके माता-पिता उनके पास जाते हैं और ना ही दादी वहाँ आती है। सैफी के माता-पिता दोनों ही नौकरी करते हैं। सैफी को अपने घर में अकेलापन महसूस होता है। उसका बहुत मन करता है कि

वह भी अपनी दादी के साथ रहे। वह अपनी सुमित्रा मैडम को इस विषय में बताती है

“मेरा दिल करता है कि मैं दादी की गोद में सिर रखकर परियों की कहानियाँ सुनूँ, पर ऐसा मेरी किस्मत में नहीं है। मैं किसी फिल्म या सीरियल में किसी बच्चे को अपनी दादी माँ और नानी माँ से कहानी सुनते देखकर खुश हो लेती हूँ। टीवी स्क्रीन पर लोरी सुन कर सो जाती हूँ।”
(धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 18)

यहाँ दादी और पोती के मिलन के बीच माता—पिता का प्रेम विवाह आड़े आता है जिसकी वजह से दादा—दादी और बच्चों के संबंध में पारंपरिक मूल्यों का संक्रमण और विघटन हो रहा है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास ‘...और कितनी?’ में शिवानी के सास—ससुर शिवानी के गर्भवती होने पर उसकी धोखे से लिंग जांच करवा लेते हैं। जब उन्हें पता चलता है कि शिवानी के गर्भ में कन्या है तो वे उसे गर्भपात करवाने के लिए कहते हैं। दादा—दादी की चाहत पोता प्राप्त करने की है। यह भारतीय परंपरागत मूल्य हैं, जहाँ एक ओर पिता और दादा—दादी पोते की इच्छा ज्यादा रखते हैं परंतु शिवानी गर्भपात नहीं करवाती और वह उस कन्या को जन्म देती है। उसका नाम परी रखती है। इसी वजह से ससुराल वाले उसे स्वीकार नहीं करते और उसके पति के साथ उसका तलाक हो जाता है। परी के दादा—दादी कभी भी उससे मिलने का प्रयास नहीं करते। परी को जब बड़ा होने पर यह बातें पता चलती हैं तो उसे बहुत दुःख होता है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास ‘खिलने से पहले’ में सन्नी अपनी दादी और माता—पिता के साथ रहता है। जब सन्नी बिगड़ जाता है और नशे करने लगता है। उसकी दादी को बहुत चिंता होती है और वे उसे बहुत ही प्यार से समझाती है “बेटा पापा तेरे भले के लिए ही कहते हैं। तेरी जिंदगी बर्बाद ना हो जाए सभी डरते हैं। तुझे इस उम्र में अपने भले बुरे की समझ नहीं। उन्होंने दुनिया देखी है आजकल के माहौल से वाकिफ हैं वे। बस तू अपना ध्यान अपनी पढ़ाई में लगा।

हमें और कुछ नहीं चाहिए।”(साहिल खिलने से पहले 79) यहाँ दादी अपने पोते को अच्छी नसीहत देती है कि उसका पोता अच्छे मार्ग पर चले और अच्छा इंसान बने। दादी-पोते से संबंधित मूल्य परंपरागत हैं।

2.2 सामाजिक मूल्य— संक्रमण तथा विघटन

2.2.1 समाज अर्थ व परिभाषा—

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के बिना मनुष्य के जीवन का कोई महत्त्व नहीं है। व्यक्ति जो कुछ भी बनना चाहता है वह समाज के वातावरण में ही बन सकता है। दरअसल, समाज एक प्राकृतिक संस्था है, जिस पर व्यक्ति का अस्तित्व और विकास निर्भर करता है। यदि यह कहा जाए कि समाज मानव जाति की सुरक्षा और विकास का मूल आधार है तो इसमें कोई अति कथनी नहीं होगी।

2.2.1.1 वर्ण और जाति व्यवस्था—

प्राचीन समय में भारतीय समाज में जाति व्यवस्था के कारण व्यवसाय चुनने की स्वतंत्रता नहीं थी और ना ही स्वेच्छा से लड़का-लड़की को विवाह करने की स्वतंत्रता थी। एक जाति के अपने आदर्श मूल्य होते थे जिससे सामाजिक एकता और बंधुत्व की भावना धीरे-धीरे नष्ट होती जा रही थी। इसी के कारण समाज में अशुभता, ऊँच-नीच तथा विषमता का उदय हुआ। वर्तमान समय में पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव, आधुनिक शिक्षा, औद्योगीकरण, महानगरीकरण, पूंजीवादी-व्यवस्था के कारण वर्ण-व्यवस्था और जाति-व्यवस्था से संबंधित मूल्यों में संक्रमण और विघटन हुआ। वर्तमान समय में वर्ण, जाति-संबंधी पारंपरिक मूल्य मान्यताएं टूटने लगी हैं और नए मूल्यों ने उनकी जगह ले ली है। अमृतलाल मदान एवं धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यासों में इसे दर्शाया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सैफी के माता-पिता का प्रेम विवाह है। सैफी के पिता का हिंदू धर्म तथा माता का मुस्लिम धर्म है। यहाँ पर विवाह संबंधित उस मूल्य को टूटते दिखाया गया है जहां एक ही धर्म में शादी माननीय मानी जाती थी।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'बंद होते दरवाजे' में उमाकांत और रमा के तीन बच्चे हैं। ऋचा और शिल्पा उनकी दो पुत्रियां हैं। उमाकांत की दोनों पुत्रियाँ अपने लिए लड़के पसंद कर लेती हैं। वे उनकी जाति के नहीं होते। उमाकांत और रमा यहाँ पर किसी भी प्रकार का एतराज नहीं जताते और अपनी दोनों पुत्रियों की शादी गैर-जाति में करवा देते हैं। यहाँ विवाह संबंधी प्राचीन मूल्य टूटते और उनके स्थान पर नवीन मूल्यों का आविर्भाव दिखाया गया है। जहाँ अब माता-पिता भी अपने बच्चों के अंतरजातीय विवाह में प्रसन्न दिखाई दे रहे हैं।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'दूसरा अरुण' में अरुण के पिता जी एक कॉलेज में क्लर्क हैं और उनकी माता एक प्राइवेट स्कूल में अध्यापिका है। वह अपनी कक्षा में पढ़ने वाली लड़की की ओर आकर्षित हो जाता है। उसका नाम रमा है और वह दलित संप्रदाय से है, परंतु उसकी माता दलितों को बिल्कुल भी पसंद नहीं करती। जब अपने स्कूल में बच्चों को पढ़ा रही होती है तो सोनिया की कॉपी की जिल्द मैली और फटी हुई देखकर वह उसे कहती है—

“तुम लोग ना तो अपनी हालत ठीक रख सकते हो ना अपनी किताबों-कॉपियों की, कहकर शीला मैडम ने सोनिया के सिर पर कॉपी मार कर जिल्द को और ज्यादा फाड़ दिया।..... शीला ने आव देखा ना ताव सोनिया के कानों में उठकर तड़ातड़ा जोरदार थप्पड़ जड़ दिए। साथ में जातिसूचक अपशब्द भी गुस्से में उसके मुँह से निकल गए। सोनिया दलित लड़की थी।” (अमृतलाल मदान, दूसरा अरुण 98)

यहाँ जाति विशेष के कारण उसका बचपन छिन जाता है। संवैधानिक समानता मिलने के बावजूद भी वर्तमान में भी इस प्रकार के अपवाद देखने को मिलते हैं।

2.2.1.2 विवाह

भारतीय समाज और संस्कृति में विवाह को पवित्र बंधन माना जाता है। विवाह को दांपत्य जीवन का आधार माना गया है। विवाहित पति-पत्नी द्वारा एक दूसरे के प्रति एक निष्ठा की अपेक्षा की जाती है। पति-पत्नी के बीच में

आत्मीयता, त्याग, लगाव, समर्पण की भावना, परस्पर सम्मान, आदर, कर्तव्यपरायणता संतानोत्पत्ति, पारिवारिक संबंधों का सम्मान आदि विवाह से संबंधित मूल्य माने जाते हैं। भारतीय संस्कृति के अंतर्गत माता-पिता की पसंद और अनुमति से लड़का-लड़की की शादी की जाती थी। वर्तमान समय में विवाह के अनेक रूप दिखाई देते हैं जैसे आयोजित विवाह, प्रेम-विवाह, अंतरजातीय विवाह, बाल विवाह आदि। भारत में विवाह पद्धति के भी अनेक रूप हैं जैसे अग्नि परिक्रमा, वचन संकल्प, देव साक्षी, कोर्ट मैरिज, लिव इन रिलेशनशिप आदि। प्राचीन भारत में विवाह परंपरा, धर्म और भाग्य से जुड़ा हुआ था परन्तु अब उस दृष्टिकोण में बदलाव आने लगे हैं। डॉक्टर हेमेंद्र पानेरी के अनुसार—

“वैवाहिक जीवन की रूढ़िगत मान्यताएं बदल चुकी हैं। विवाह के परंपरागत बंधन शिथिल हो गए हैं। अब विवाह को आत्माओं का पुनीत मिलन या जन्म जन्मांतर का संबंध स्वीकार ना किया जाकर मात्र समझौता या मैत्री संबंध माना जाने लगा है। वैवाहिक जीवन में तलाक की स्वीकृति से परंपरागत गृहस्थ जीवन संबंधी मूल्यों को आघात लगा है। प्रेम-विवाह, अंतरजातीय विवाह, विधवा-विवाह आदि को स्वीकृति मिलने लगी है। आज जब बिना विवाह किए ही वैवाहिक जीवन की स्वच्छन्दताओं का उपभोग किया जा सकता है। तो फिर विवाह की आवश्यकता ही क्या है? यह विचारणा तीव्र गति से बढ़ती जा रही है।” (स्वाधीनता कालीन हिंदी साहित्य के जीवन मूल्य 56)

अमृतलाल मदान के उपन्यास ‘बंद होते दरवाजे’ में उमाकांत और रमा के तीन बच्चे हैं दो बेटे और एक बेटा। बेटे शिल्पा और ऋचा अपने लिए स्वयं ही लड़का पसंद कर लेती हैं। वे उनकी जाति से संबंधित नहीं होते परंतु यहाँ उमाकांत और रमा बिना किसी विवाद के ही उन्हें विवाह की सहमति दे देते हैं और उन दोनों बहनों की शादी उनकी पसंद के अंतरजातीय लड़कों से करवा दी जाती है। यहाँ भारतीय परंपरा से जुड़े विवाह संबंधी मूल्यों में संक्रमण एवं विघटन दिखाई देता है। जहाँ पहले माता-पिता अंतरजातीय विवाह के लिए कभी तैयार

नहीं होते थे। वहाँ आज उमाकांत रमा अपनी दोनों पुत्रियों की अंतरजातीय शादी करवा कर अपनी सहमति दिखाते हैं।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'मचान' में महावीर नामक पहलवान ऐलान करता है कि छिंज मेले में कुश्ती में जो पहलवान जीतेगा उसे इनाम देने के साथ-साथ वह अपनी पुत्री का विवाह उसके साथ कर देगा। कुश्ती में दिलबाग नामक पहलवान जीत जाता है और महावीर अपनी लड़की चंचलो की शादी दिलबाग से करा देता है। वे बहुत ही अच्छा दांपत्य जीवन जीते हैं। एक दूसरे से संबंधित सभी जिम्मेदारियों का निर्वहन बहुत अच्छी तरह से करते हैं। उनके दो बच्चे होते हैं। उनकी गृहस्थी बहुत अच्छे से चल रही होती है परंतु अचानक दिलबाग की हत्या कर दी जाती है। चंचलो विधवा हो जाती है। गरीबी के कारण उसे अपना घर संभालना मुश्किल हो जाता है। मास्टर कुंज कुमार उसे एक फैक्ट्री में नौकरी दिलवा देते हैं। धीरे-धीरे कुंज कुमार और चंचलो में प्रेम प्रसंग बढ़ जाता है। चंचला मास्टर कुंज कुमार से शादी करना चाहती है परंतु कुंज कुमार शादी ना करके लिव इन रिलेशन में रहने की बात करता है क्योंकि वह मानता है कि शादी एक बंधन होती है, पर चंचलो इस बात के लिए राजी हो जाती है। यहाँ परंपरागत भारतीय वैवाहिक मूल्यों का संक्रमण तथा विघटन दिखाया गया है। भारतीय परंपरा में ना तो विधवा विवाह और न ही लिव-इन-रिलेशन संबंधित मूल्य थे। इन्हें आज के वर्तमान समय में भारतीय समाज द्वारा अपना लिया गया है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'एक अधूरी प्रेम कथा' में अमरनाथ और रमा पति-पत्नी हैं। उनकी यह अरेंज मैरिज होती है परंतु अमरनाथ विवाह पूर्व सरिता नाम की एक युवती को चाहता था और दोनों आपस में भी विवाह करना चाहते थे परंतु आर्थिक विसंगति के कारण दोनों की शादी नहीं हो पाती। अमरनाथ शादी के बाद भी उस युवती से संबंध बनाए रखता है। अमरनाथ सरिता से मिलने का कोई भी मौका चुकने नहीं देता। यहाँ तक कि वह 70 वर्ष की वृद्धावस्था में भी अपनी प्रेमिका सरिता से मिलने के लिए जाता है। यहाँ भारतीय पारंपरिक वैवाहिक मूल्यों का संक्रमण तथा विघटन हुआ है। भारतीय परंपरा में विवाहेतर प्रेम को मान्यता नहीं दी गई है।

मदान के उपन्यास 'अपने-अपने' अंधेरे में राजेश प्राध्यापक है। वह शादीशुदा है और उसकी पत्नी भी एक अध्यापिका है। वह विवाहेतर संबंध को अनिवार्य मानता है क्योंकि यह उसके जीवन की प्रेरक शक्ति है। वह प्रेम संबंधों को दांपत्य से अलग मानता है क्योंकि प्रेमिका जीवन को अलग आनंद देती है। पत्नी प्रेमिका नहीं रह सकती विवाह के कुछ समय बाद वह सुविधा भोगी नारी माँ बहन जैसी बन जाती है। राजेश अपनी शिष्या रेखा के प्रति उन्मुख है। रेखा भी इस प्रेम प्रकरण में सहमत है वह प्रेम और विवाह दोनों को अलग अलग मानती है। यहाँ भी भारतीय पारंपरिक विवाह संबंधित मूल्यों का संक्रमण तथा विघटन हुआ है। भारतीय पारंपरिक वैवाहिक मूल्य में गुरु और शिष्य का विवाह वर्जित है क्योंकि गुरु को माता-पिता का दर्जा दिया गया है। विवाहेतर प्रेम भी अनैतिक माना गया है परंतु इस उपन्यास में राजेश और रेखा गुरु-शिष्या होते हुए भी प्रेम करते हैं और राजेश विवाहित होते हुए भी विवाहेतर प्रेम को सही मानता है, यह दर्शाता है कि वर्तमान समय में भारतीय वैवाहिक मूल्य बदलते जा रहे हैं।

2.2.1.3 अंधविश्वास व रूढिगत परम्पराएँ—

भारत देश की संस्कृति काफी पुरानी है इसलिए उसमें अनेक प्रकार के अंधविश्वास भी हैं। हमारे यहाँ उपासना, प्रार्थना से लेकर जीवन के छोटे-छोटे क्रियाकलापों में अंधविश्वास दिखाई देता है। भारतीय समाज में परंपरा और धर्म से जुड़े हुए अनेक अंधविश्वास हैं। उनमें से कुछ को अशुभ तो कुछ को शुभ माना जाता है। उदाहरण स्वरूप काली बिल्ली के द्वारा रास्ता काटना, खाली घड़ा लेकर औरत का जाना अशुभ माना जाता है तथा घर से निकलते ही पानी से भरा घड़ा लेकर औरत के द्वारा रास्ता काटना, बाएं हाथ में खुजली होना आदि शुभ माना जाता है। भूत-प्रेत, तंत्र-मंत्र, जादू-टोने, धागा-ताबीज आदि को लेकर कई अंधविश्वास समाज में हैं। वर्तमान युग वैज्ञानिक है। अंधविश्वास और रूढ़ियाँ कम होती जा रही हैं, फिर भी पुरानी पीढ़ियों और पिछड़े हुए लोगों में कहीं ना कहीं इसका प्रभाव आज भी दिखाई देता है। धर्मपाल साहिल और अमृतलाल मदान ने अंधविश्वासों तथा रूढिगत परम्पराओं को अपनी कृतियों में उजागर करने का प्रयास किया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बेटी हूँ न' में भावनी सिस्टर मैरी को अपने ससुराल वालों के अंधविश्वास के बारे में बताती है—

“जब मैं गर्भवती हुई तो मुझे लड़का पैदा होने की दवाईयां लाकर खिलाई गईं। कई पीरों—फकीरों, साधु—संतों का आशीर्वाद और ताबीज लाकर बाँधे गए। उन दिनों टेस्ट करवाने का रिवाज नहीं था। शरीर के लक्षणों से ही अंदाजा लगाया जाता कि होने वाला बच्चा लड़का होगा या लड़की। मेरे शरीर में आ रहे परिवर्तनों से सभी को सौ फीसदी यकीन था कि लड़का ही होगा। मुझे जमीन पर पाव ना धरने देते। बहुत सेवा की जा रही थी।” (धर्मपाल साहिल, बेटी हूँ न28)

परंतु भावनी दो जुड़वा बेटियों को जन्म देती है यहाँ अंधविश्वासों को टूटते दिखाया गया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास '...और कितनी?' में शिवानी शादी के दौ महीने बाद जब गर्भवती होती है, तब सास—ससुर और पति और उसकी बहने सिर्फ एक ही रट लगाए रखती है कि अब हमें घर का वारिस चाहिए। शिवानी अपनी बेटी परी को बताती है—

“पहले तो मैं उनकी इस बात को हल्के में लेती रही तथा बच्चा लड़का हो या लड़की यह कौन सा मेरे हाथ में है, जो होगा ठीक ही होगा। लेकिन सास—ससुर की गंभीरता उस समय प्रकट हुई जब ससुर बोदी वाले ने मुझे देसी घी के साथ शर्तिया लड़का पैदा होने की दवाई देना शुरू कर दी। वह बड़े गर्व से कहता लड़का होगा इस दवाई से, यह मेरा आजमाया हुआ नुस्खा है। सैकड़ों लोगों ने मुझसे यह दवाई लेकर इस्तेमाल की है और उनके घरों में लड़के आए। कईयों के यहाँ तो जोड़े लड़के भी हुए हैं।” (धर्मपाल साहिल, ...और कितनी? 125)

अल्ट्रासाउंड के बहाने कन्नु अपनी पत्नी के पेट में पल रहे बच्चे की लिंग जांच करवा लेता है। जब उसे पता चलता है कि उसके गर्भ में कन्या है तो वह उसको गर्भपात करवाने के लिए कहता है, तो इस पर शिवानी कहती है, “तुम एक

डॉक्टर हो, सब कुछ जानते हुए भी मुझे गलत काम के लिए मजबूर कर रहे हो। अपने अनपढ़, अंधविश्वासी माता-पिता की खातिर... तुम्हें अपनी पत्नी की इच्छा की कोई परवाह नहीं है।” (धर्मपाल साहिल, ...और कितनी? 128) शिवानी गर्भपात करवाने से इनकार कर देती है और इसी वजह से कन्नू और शिवानी में तलाक हो जाता है। शिवानी अपने मायके जाकर अपनी पुत्री को जन्म देती है। उसका नाम परी रखती हैं। यहाँ अनपढ़ माता-पिता के साथ पढ़ा-लिखा डॉक्टर बेटा भी अंधविश्वासी नजर आ रहा है इसके कारण वह अपनी गृहस्थी नष्ट कर लेता है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास ‘मचान’ में मास्टर कुंज कुमार पर जगदीश के द्वारा दलित कन्या के शोषण का झूठा मुकदमा चलाया जाता है, तब चंचला अपने कुल-गुरु से मास्टर जी के लिए मन्नत मांगती है कि वे संकट से निकलकर दोबारा से स्कूल में आ जाए, तो वह मास्टर जी को लेकर कुल-गुरु के मंदिर भदाडी भरने जाएगी। यहाँ चंचलो का अंधविश्वास दिखाई देता है। कुंज कुमार मुकदमा जीत जाता है और उसकी दोबारा उसी स्कूल में पोस्टिंग कर दी जाती है, तो वह कुंज कुमार और रोशनी से कहती है कि वह उसके साथ भदाडी भरने चले तब रोशनी उसे कहती है—

“डियर चंचलो, माफ करना। मैं तो इन मन्नतों-सन्नतों पर विश्वास नहीं करती। मैं तो किसी की भी तन-मन-धन से मदद करने में यकीन रखती हूँ। जो टाइम मैंने माथा टेकने या मन्नतें मांगने में लगाना है, वह टाइम में किसी जरूरतमंद, मजबूर, लाचार के लिए कुछ कर पाना ज्यादा बेहतर समझती हूँ। इसलिए तुम और भाई-जान जाओ। मैं आप के कुल गुरु से यहीं से माफी मांग लेती हूँ। रोशनी की हाँ में हाँ मिलाते कुंज कुमार भी बोला था— चंचलो जी मेरे विचार भी रोशनी से मेल खाते हैं। दरअसल हम ना तो आस्तिक हैं, न नास्तिक। बल्कि पूरी तरह वास्तविक हैं। हम प्रैक्टिकल बातों पर ज्यादा ध्यान देते हैं।” (धर्मपाल साहिल, मचान 253)

रोशनी और मास्टर कुंज कुमार पात्रों के माध्यम से लोगो के बदलते दृष्टिकोण को दिखाया गया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बेटी हूं न' में भावनी मैरी को अपने ससुराल की परंपराओं के बारे में बताती है—

“दरअसल मैं जिस खानदान में ब्याही गई हूं ना उस खानदान में रिवाज है कि हर हाल में पहला बच्चा लड़का ही होना चाहिए। लड़का पैदा करके वंश का वारिस दि

ए बिना औरत इस खानदान में बस ही नहीं सकती। अगर भगवान जी की कृपा से पहला बच्चा लड़का हो गया तो ठीक है वरना लड़की को तो पैदा होते ही खत्म कर दिया जाता है। यह सिलसिला तब तक चलता रहता है जब तक वह औरत लड़का नहीं जनती। लड़की को मारने का इनके यहाँ रिवाज बन चुका है। एक रस्म जिसे परिवार का मुखिया निभाता है, बिना किसी झिझक, डर, शर्म—संकोच के....।” (बेटी हूं न 27)

भावनी सिस्टर मैरी को आगे बताती है, “सिस्टर इनके खानदान में लड़की को पैदा होते ही अफीम चटाकर, गला दबाकर, काली जीरी गले में डालकर नहीं बल्कि एक दिल कंपा देने वाले ढंग से मारने की परंपरा है।” (बेटी हूं न 27) यह सुनकर मैरी बहुत ज्यादा हैरान होती है और वह भावनी से उस ढंग के बारे में पूछती है। भावनी बताती है—

“सिस्टर जैसे ही खानदानी दाई पहली लड़की पैदा होने की खबर देती है, जच्चा को बिना बताए लड़की को अलग कर लिया जाता है। फिर परिवार का बुजुर्गवार बुलाया जाता। एक खुले मुँह वाले मिट्टी के बर्तन (तौड़ी) में कुछ उपल्लों के टुकड़े रखे जाते। उस पर नमक छिड़क दिया जाता। फिर नव जन्मी बच्ची को कपड़े में लपेटकर उस तौड़ी में रख दिया जाता। परिवार का बुजुर्ग उस बच्ची की बंद मुट्टियों में से एक में गुड़ का टुकड़ा और दूसरी में रुई की पूनी फसाता। फिर तौड़ी के मुँह पर ढक्कन रखकर उसे लीप दिया जाता। फिर किसी सुनसान जगह में लोगों की नजरों से बचाकर तौड़ी को जमीन में गाड़ दिया जाता। ऐसा करते समय बुजुर्ग कहता—

गुड़ खाई, पूनी कत्ती

आप ना आई, वीर नो घत्ती

(अर्थात् गुड़ खाना, पूनी कातना, आप मत आना, भाई को भेजना) जच्चा को बाद में कहा जाता है कि बच्चा मरा हुआ पैदा हुआ था।“(धर्मपाल साहिल, बेटी हूं न28)

भावनी सिस्टर मैरी को बताती है कि उसके ससुराल में रिवाज है कि अगर पहला बच्चा लड़की होती है तो उसे मार दिया जाता है और

“पहला बेटा पैदा होते ही आतिशबाजी चलाई जाती। बंदूक से फायर किए जाते। ढोल नगाड़े बजाए जाते ताकि सारे इलाके को पता चल जाए कि किसी राजपूत के यहाँ वारिस पैदा हुआ है। कई-कई दिन शराब के दौर चलते, भूखों-गरीबों को खाना खिलाया जाता। जी खोलकर दान दिया जाता। घर में उत्सव जैसा माहौल बन जाता। पहला लड़का पैदा करने वाली बहू की कद्र रातों-रात आसमान छूने लगती।“(धर्मपाल साहिल, बेटी हूं न 29)

लडके और लड़की के जन्म संबंधी अन्धविश्वास को उजागर किया गया है जो वर्तमान समय में कम होता जा रहा है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास ‘इति प्रेम कथा’ में सरिता अपनी नातिन काव्या की शादी अमर के नाती अरुण से करना चाहती थी जोकि आपस में प्रेम करते थे। परन्तु इससे पहले की सरिता घर जाकर घरवालों से बात करती उसके पति देव मल्होत्रा की एक्सिडेंट में मृत्यु हो जाती है। समाज में विधवा द्वारा कोई शुभ कार्य का प्रारम्भ अपशगुन माना जाता है। इस विषय पर अमर कहता है, “इसके बाद विधवा हुई सरिता ने काव्या और अरुण के रिश्ते में माऊँट आबू रहते हुए कोई रुचि नहीं ली, शायद इसे अपशकुन समझ कर। शीघ्र ही काव्या की ट्रांसफर हो गयी और अरुण चेन्नई चला गया।“(अमृतलाल मदान, इति प्रेम कथा 152) उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज में व्याप्त अन्धविश्वास व

रूढिगत परम्पराओं को उजागर करने के साथ-साथ समाज की बदलती सोच को भी दिखाया है जो मूल्य संक्रमण को दर्शाता है।

2.3 तुलनात्मक निष्कर्ष

2.3.1 साम्य—

प्रथम— धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में पारंपरिक दांपत्य जीवन का निर्वहन करने वाले पति-पत्नी सुमित्रा-सेवादास, चंचल-दिलबाग, रिया-विनोद, प्रेमपाल व उसकी पत्नी, भावनी-कुंवर नारायण हैं, जिनकी समानता अमृतलाल मदान के उपन्यास में सरस्वती-विमल, माया-मिश्रा, रिया-उमाकांत, शीला-मोहनलाल से है। उक्त पति-पत्नियों में परस्पर प्रेम, सहयोग, सद्भाव, विश्वास, शारीरिक पवित्रता जैसे पारम्परिक मूल्य विद्यमान हैं। उनके संबंध टूटते नहीं। वे सब सुखी जीवन जीते हुए अपने दायित्वों का सही ढंग से निर्वहन करते हैं। यहाँ पर पारंपरिक दांपत्य जीवन मूल्यों को दर्शाया गया है।

द्वितीय— धर्मपाल साहिल के उपन्यास में विवाहेतर प्रेम संबंध रखने वाले पत्नी-पत्नी हैं। उपन्यास '...और कितनी?' में शिवानी का पति कन्नू, 'मचान' उपन्यास में रोशनी का पति, 'खिलने से पहले' उपन्यास में सैफी की माँ, सुनन्या का पति जगदीश विवाहेतर संबंध स्थापित करते हैं। जिनकी समानता अमृतलाल मदान के उपन्यास 'अपने-अपने अंधेरे' में शीला के पति राजेश, 'अनन्त प्रेम कथा' उपन्यास में शीला के पति अमर, 'वे अठारह दिन' उपन्यास में राधा के पति समरजीत, 'इति प्रेम कथा' उपन्यास में शीला के पति अमर और 'सामानांतर प्रेम कथा' उपन्यास में दिशा के पति राजन से है। कामान्धता, वहशीपन, शारीरिक भूख शांत न होने से पति-पत्नी विषयक प्रेम, सौहार्द, सद्भावना व शारीरिक पवित्रता जैसे मूल्य विघटित हुए हैं।

तृतीय— दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में अंतरजतीय विवाह संबंधों को दर्शाया गया है। अमृतलाल मदान के उपन्यास 'बंद होते दरवाजे' में ऋचा-विवेक व शिल्पा-वैभव की समानता धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बेटी हूँ ना' के पात्र डेविड व डायना से है। उक्त दोनों पति-पत्नी के जोड़े माता-पिता की सहमति के साथ अंतरजतीय विवाह संपन्न करते हैं जो एक नवीन मूल्य की स्थापना है।

चतुर्थ— दोनों ही उपन्यासकारों ने इंटरनेट के दुष्प्रभाव से नैतिक मूल्यों के विघटन को दर्शाया है। अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'वे अठारह दिन' में समरजीत पात्र के माध्यम से इंटरनेट के दुष्प्रभाव को दर्शाया है, जो वृद्ध व्यक्ति समरजीत की मानसिकता को भी पंगु बना देता है। वहीं धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'खिलने से पहले' में दो नाबालिग प्रेमी सैफी व सन्नी पर इंटरनेट के दुष्प्रभाव को दर्शाया है जिससे उनकी जिंदगी बर्बाद हो जाती है। सैफी का बलात्कार व सन्नी का नशे का आदी होना नैतिक मूल्यों का विघटन हैं।

पंचम— सामाजिक मूल्यों में वर्ण एवं जाति प्रथा के बारे में अमृतलाल मदान और धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में दो गुट हैं। एक वर्ग जाति को मानने वाला है दूसरा वर्ग जाति को न मानने वाला। प्रथम वर्ग में धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में सैफी की दादी, कन्नू की माँ, कुंवर नारायण हैं और अमृतलाल मदान के उपन्यासों में ऋचा की सास, अरुण की माँ हैं, वहीं दूसरे वर्ग में धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में डायना, मैडम कुमार, मैडम हर्षिता हैं और अमृतलाल मदान के उपन्यासों में ऋचा, अरुण, उमाकांत, शिल्पा, रमा हैं। यहाँ प्रथम वर्ग तो अंधविश्वास, रूढ़ियों, परंपराओं, तथा जातिगत भिन्ता का पालन करता है और दूसरा वर्ग इन बातों पर कोई विश्वास नहीं रखता।

2.3.2 वैषम्य—

प्रथम— वैश्वीकरण के प्रभाव ने भारतीय पारंपरिक वैवाहिक मूल्यों को भी प्रभावित किया है। इसका उदाहरण धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में मैडम कुमार व मैडम हर्षिता हैं, जो समलैंगिक विवाह को अंजाम देती हैं। आज वैश्वीकरण के कारण यह मूल्य भारत सहित 127 देशों में न्यायिक मान्यता प्राप्त कर चुका है। अमृतलाल मदान के उपन्यासों में समलैंगिक विवाह का कोई उदाहरण देखने को नहीं मिलता है।

द्वितीय— धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'मचान' में मास्टर कुंज कुमार व ग्रामीण क्षेत्र की चंचलो के मध्य 'लिव इन रिलेशनशिप' को अपनाने की ओर बस संकेत किया गया है, जबकि अमृतलाल मदान के उपन्यासों इति प्रेम कथा में 'लिव इन

रिलेशनशिप' को अपनाने के साथ बिन विवाह के एक साध्वी सरलाबाई द्वारा गर्भ धारण कर नवीन मूल्य की स्थापना की गयी है।

तृतीय— धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बेटी हूँ न' में कुंवर नारायण द्वारा अपनी बेटियों वाणी व डायना को उसकी अर्थी को कंधा देने व चिता को अग्नि देने का जो अधिकार दिया है, यह बेटा-बेटी की समता का पोषक एक नवीन मूल्य है। अमृत लाल मैदान के उपन्यासों में अंतिम संस्कार विषयक ऐसा नूतन मूल्य दिखाई नहीं देता।

चतुर्थ— अमृतलाल मदान के उपन्यास 'विराट बौना' में मिश्रा के परिवार में दादा-दादी के प्रति पोता-पोती के व्यवहार में अनादर, उपेक्षा का भाव है जिसका कारण एकल परिवार है। बच्चे अपने दादा-दादी को अपनी स्वतंत्रता में बाधक मानते हैं, यह भी एक नैतिक अवमूल्यन है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'मचान' में चंचलो-दिलबाग के बच्चे अपने दादा-दादी के साथ संयुक्त परिवार में रहते हैं। इस परिवार में आपसी प्रेम, स्नेह, सौहार्द, मान-सम्मान, सेवाभाव आदि पारिवारिक मूल्य अवलोकित होते हैं।

पंचम— धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में पत्नी नारियां अपने अस्तित्व, स्वतंत्रता, समानता व सम्मान के लिए लड़ती हैं अतः अपने पति के शराबीपन, विवाहेतर-प्रेम, उत्पीड़न आदि के कारण संबंध विच्छेद कर लेती हैं। उपन्यास '..और कितनी?' में कन्नू का किसी और से प्रेम करने के कारण, दहेज के लालच, घरेलू हिंसा के कारण शिवानी, उपन्यास 'मचान' में जगदीश का अपनी नौकरानी के साथ संबंध रखने के कारण सुनन्या और रोशनी अपने पति के शराबीपन व व्यभिचार के कारण अपने पतियों से संबंध विच्छेद कर लेती हैं। यहाँ पर शिक्षित नारियां अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हैं व अपने जीवन सम्बन्धी निर्णय स्वयं लेती हैं। अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए स्वयं ही अपने पतियों से सम्बन्ध-विच्छेद कर लेती हैं जो आधुनिक नवीन जीवन मूल्य है। अमृतलाल मदान के उपन्यासों में विवाहेतर संबंधों को दर्शाया गया है परन्तु संबंध विच्छेद नहीं दर्शाया गया है।

आलोच्य उपन्यासों में पारम्परिक व नूतन जीवन मूल्यों के मध्य संघर्ष को दिखाया गया है। पारम्परिक मूल्य वैयक्तिकता की अपेक्षा सार्वभौमिक कल्याण को महत्त्व देते हैं वहीं नवीन मूल्यों का आधार बहुधा वैयक्तिगत वर्चस्व है। दोनों लेखकों ने प्रगतिशील समाज के हितकर अंतरजतीय विवाह, नारी-समानता, स्वतंत्रता, साम्प्रदायिक सद्भाव जैसे नवीन मूल्यों की स्थापना की है वहीं परस्पर प्रेम, सहयोग, सेवाभावना जैसे पारम्परिक मूल्यों का पोषण भी किया है। वे पारम्परिक व नवीन मूल्य जो समाज की प्रगति के अवरोधक हैं, उनका खंडन भी किया गया है।

तृतीय अध्यायः
आलोच्य उपन्यासों में सांस्कृतिक
मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

तृतीय अध्याय

आलोच्य उपन्यासों में सांस्कृतिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

हमारे भारत की वास्तविक पहचान हमारी संस्कृति से है। हमारी राष्ट्रीय जीवनधारा निरन्तर प्रवाहमान है। यहाँ अनेक नामों से, अनेक विचारधाराएँ हो सकती हैं, परन्तु हमारे देश की एक संस्कृति है, जो चिरन्तन जीवनशैली में अभिव्यक्त होती है। हमारे प्राचीन साहित्य का पूरा विश्व ऋणी है। विश्व में अपसंस्कृति का बुरा दौर क्यों न आ जाये, उसकी गरिमा कम न होगी और उसकी उपादेयता बढ़ती चली जायेगी, क्योंकि उसमें जीवन के चिरन्तन मूल्यों का समावेश है। इस सनातन वाङ्मय के कारण ही हमारी सनातन संस्कृति है और हमारे देश की अखंडता को अक्षुण्ण बनाये रखने वाला हमारा सनातन धर्म है, जिसमें किसी धर्म, सम्प्रदाय, वर्ग से विरोध नहीं है। विद्वानों ने भारतीय संस्कृति की अनेक रूपों में प्रशंसा की है।

“भारतीय संस्कृति स्वाभाविक रूप से शुद्ध है जिसमें प्यार, सम्मान, दूसरों की भावनाओं का मान-सम्मान और संस्कार अन्तर्निहित है। भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्वों, जीवन मूल्यों और वचन पद्धति में एक ऐसी निरन्तरता रही है, कि आज भी करोड़ों भारतीय स्वयं को उन मूल्यों एवं चिन्तन प्रणाली से जुड़ा हुआ महसूस करते हैं और इससे प्रेरणा प्राप्त करते हैं।”(गगनांचल, मार्च-अगस्त, 2018,28)

यहाँ की संस्कृति किसी के मस्तिष्क की उपज नहीं, किसी किताब की देन नहीं, वह तो धरती की चेतना है, जिसे उस के पुत्रों ने कठोर संघातों के परिणामस्वरूप अपने जीवन में पाया है और वह अन्तश्चेतना बन प्रत्येक घटक से धड़कती है। हमारी संस्कृति है, जो व्यक्ति के व्यवहार में बोलती है, समाज के प्रभाव में प्रकट होती है, राष्ट्र के जीवन में व्यक्त होती है। इस प्रकार मानव जीवन के लिए जो भी श्रेयस्कर है, वही संस्कृति है। भारत की संस्कृति आचरण की संस्कृति है, बनावट या दिखावे की नहीं। इसका सम्बन्ध मानव के आध्यात्मिक संस्कारों और नैतिक मूल्यों से है। यह सिखाने की नहीं, अनुभूति की और तादात्म्य भाव की संस्कृति है।

3.1 संस्कृति का अर्थ व स्वरूप

किसी भी राष्ट्र की संस्कृति वहां के लोगों के जीवन मूल्यों के अनुकूल होती है। लोगों की जीवनशैली जिसमें रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा तीज-त्यौहार आदि का समावेश है। ये सब संस्कृति को दर्शाते हैं। लोगों के उदात्त जीवन मूल्यों का प्रभाव संस्कृति पर स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। एक देश विशेष के लोगों के जीवन मूल्य जितने उदात्त होंगे उतनी ही श्रेष्ठ उनकी संस्कृति भी होगी। पुरातन काल से जितनी सामाजिक लोक परंपराएं, मान्यताएं, प्रथाएं व व्यवहार चले आ रहे हैं जिन से मनुष्य का मानसिक, शारीरिक और आध्यात्मिक स्तर पर विकास हुआ वही संस्कृति कहलाई। जैसे-जैसे मानव लगातार विकास की ओर उन्मुख होता गया उसकी लोक परंपराएं, मान्यताएं, प्रथाएं, व्यवहार और जीवनशैली परिवर्तित होती गई। उसकी विचारधारा तथा बाहरी संस्कृति के प्रभाव के कारण संस्कृति को विकसित होने में हजारों वर्ष लग जाते हैं। इस दौरान व्यक्ति को जितने अनुभव अच्छे लगते हैं अर्थात् जो चीजें उसे आपसी प्यार-प्रेम के बंधन में बांधती हैं और एकजुटता देती हैं उन्हें वह ग्रहण कर लेता है इसके विपरीत उपेक्षित कर देता है। समय की परिवर्तनशीलता के साथ प्रत्येक स्थिति में कहीं न कहीं अवश्य बदलाव होता है। संस्कृति मानव मात्र के व्यवहार एवं सोच के कारण अपने स्वरूप में परिवर्तन करती है। संस्कृति में नये मूल्यों का सम्मिलित होना और पुराने मूल्यों का ढीला पड़ जाना यह सब समय की देन है।

संस्कृति का शाब्दिक अर्थ

संस्कृति शब्द संस्कृत की 'कृ' धातु के साथ 'सम्' उपसर्ग पूर्वक 'सूट्' का आगमन करके क्तिन् प्रत्यय लगने से बना है। जिसका अर्थ है समयक कृति, दूसरे शब्दों में संस्कृति का अर्थ है संस्करण, परिमार्जन या शोधन। संस्कृत का अंग्रेजी रूपांतरण कल्टीवेशन भी 'कल्ट' से ही बना है जिसका अर्थ होता है- भूमि को जोतकर सुधारना जिससे उपज की मात्रा, गुणावस्था में वृद्धि हो। एग्रीकल्चर में सुधार और विकास की सही भावना निहित है। बैजनाथ सिंहल के अनुसार "इस प्रकार संस्कृति शब्द समाज सुधार को व्यंजित करता है। अपनी दैनिक

आवश्यकताओं से बाहर मनुष्य जिस रूप में वैचारिक स्तर पर जीवन को संस्कृत करता है उसका वह रूप संस्कृति युक्त होता है।”(नई कविता:मूल्य मीमांसा, 108)

संस्कृति के विषय में भारतीय विद्वानों के मत—

धीरेंद्र वर्मा का मानना है— “देश की संस्कृति से हम मानव जीवन तथा व्यक्तित्व के उन रूपों को समझ सकते हैं, जिन्हें देश विशेष के लिए महत्वपूर्ण अर्थात् मूल्यों का अधिष्ठान समझा जाता है।”(हिंदी साहित्य कोश 802)

संतोष कुमार चतुर्वेदी कहते हैं— “संस्कृति वह सामाजिक विरासत है जिसमें कला—कौशल, विचार, व्यवहार, आदतें, नैतिक मूल्य आदि समावेशित हो जाते हैं।”(भारतीय संस्कृति 7)

रामधारी सिंह दिनकर के मतानुसार—

“संस्कृति एक ऐसा गुण है जो हमारे जीवन में छाया हुआ है। यह एक आत्मिक गुण है, जो मनुष्य स्वभाव में उसी प्रकार व्याप्त है जिस प्रकार फूलों में सुगंध और दूध में मक्खन। इसका निर्माण एक या दो दिन में नहीं बल्कि युग—युगांतर में होता है। जिस प्रकार संस्कृति जन्य गुणों का निर्माण कठिन है, उसी प्रकार इन का नष्ट होना भी।”(संस्कृति के चार अध्याय 545)

पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार—

एफ.जे. ब्राउन के अनुसार—

“संस्कृति मानव के संपूर्ण व्यवहार का ढांचा है जो अंशतः भौतिक पर्यावरण से प्रभावित होता है। यह पर्यावरण प्राकृतिक एवं मानव निर्मित दोनों प्रकार का हो सकता है। किंतु प्रमुख रूप से यह ढांचा सुनिश्चित विचारधाराओं, प्रवृत्तियों, मूल्यों तथा आदतों द्वारा प्रभावित होता है जिसका विकास समूह द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जा सकता है।”(एजुकेशन सोसियोलोजी 63)

गौरी शंकर भट्ट की पुस्तक में लेस लेइट ने संस्कृति को "क्रियाओं, पदार्थों, विचारों तथा भावनाओं का वह जटिल संगठन माना है जिसका अस्तित्व प्रतीकों में निहित रहता है और यह प्रतिपादित करने का प्रयास किया है कि संस्कृति एक प्रकार की प्रतीकात्मक, अखंड, संचयी और प्रगतिशील प्रक्रिया है।" (भारतीय संस्कृति एक समाजशास्त्रीय समीक्षा 14)

गौरी शंकर भट्ट की पुस्तक में लोबी व लिंटन ने "संस्कृति को सामाजिक आनुवांशिकता या विरासत कहा है।" (भारतीय संस्कृति एक समाजशास्त्रीय समीक्षा 14)

भारतीय व पाश्चात्य दृष्टिकोणों के मूल्यांकन के उपरांत यह स्पष्ट होता है कि संस्कृति मानव जन्म के साथ प्राप्त होने वाली वह धरोहर है जो जीवन भर मानव मात्र का मार्गदर्शन करती है। मानव द्वारा अपने समाज से प्राप्त संस्कार जो समाज में बेहतर जीवन यापन और समाज के साथ सामंजस्य बनाने में प्रभावी होते हैं वह संस्कृति के आधार हैं। उपन्यासकार अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'अधूरी प्रेम कथा' में संस्कृति के भाव को स्पष्ट किया है।

"राष्ट्रीय संस्कृति का प्रचार—प्रसार एक विशेष बहुसंख्यक धर्म पर आधारित कोई संस्था बनाने तथा उसके सदस्य बढ़ाने से न होगा। मेरे विचार से तो किसी भी महान राष्ट्र की संस्कृति सैकड़ों, हजारों वर्षों में इवॉल्व होती है। वह जन मानस में भाषा व बोली के, तीज त्यौहारों व मेलों के रूप में, गीतों—लोकगीतों के रूप में, परस्पर संबंधों की मिठास के रूप में तथा अन्य कई रूपों में सहज स्वाभाविक तौर से रची बसी होती है...." (एक अधूरी प्रेमकथा 77)

उपन्यासकार ने संस्कृति को परिभाषित करने का प्रयास किया है।

3.1.1 धर्म और संस्कृति—

भारतीय संस्कृति में आश्रम—व्यवस्था के साथ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जैसे चार पुरुषार्थों का विशिष्ट स्थान रहा है। वस्तुतः इन पुरुषार्थों ने ही भारतीय संस्कृति में आध्यात्मिकता के साथ भौतिकता का एक अद्भुत समन्वय कर दिया।

“हमारी संस्कृति में जीवन के ऐहिक और पारलौकिक दोनों पहलुओं से धर्म को सम्बद्ध किया गया था। धर्म उन सिद्धान्तों, तत्त्वों और जीवन प्रणाली को कहते हैं, जिससे मानव जाति परमात्मा प्रदत्त शक्तियों के विकास से अपना लौकिक जीवन सुखी बना सके तथा मृत्यु के पश्चात जीवात्मा शान्ति का अनुभव कर सके। शरीर नश्वर है, आत्मा अमर है, यह अमरता मोक्ष से जुड़ी हुई है और यह मोक्ष पाने के लिए अर्थ और काम के पुरुषार्थ करना भी जरूरी है। इस प्रकार भारतीय संस्कृति में धर्म और मोक्ष, आध्यात्मिक सन्देश एवं अर्थ और काम की भौतिक अनिवार्यता परस्पर सम्बद्ध है।” (गगनांचल 23)

सभी धर्मों में एक अच्छे मनुष्य बनने की प्रेरणा दी गई है। धर्म कर्मवाद पर आधारित हैं। उसका लक्ष्य व्यक्ति हित न हो कर समष्टि हित है। वह अध्यात्मवाद पर जोर इसलिए दे रहा है कि मनुष्य अपनी संवेदनाओं का गुलाम है उनकी यह जैविक विशेषता उसे अनैतिक कर्मों की ओर प्रेरित करती है। वह ईश्वरीय न्याय की बात पर विश्वास कर अपने काम, क्रोध, लोभ, मोह की प्रवृत्ति पर विजय हासिल कर सके, यही धार्मिक अध्यात्मवाद की प्रमुख प्रवृत्ति है।

धर्म को यहाँ इस सुविधा से जोड़ने की वजह कर्म से जोड़ा गया है। व्यक्ति किसी भी जाति का हो, किसी भी समुदाय और संप्रदाय का हो, किसी वर्ग विशेष का हो, उसके जीवन का सही दिशा निर्देश ही धर्म का प्रयोजन है। ईसाइयत और मुसलमान धर्म भी इसी प्रयोजन को आगे ले जाने वाले हैं। धर्म तो वही है जो शील, सदाचार, आत्म—संतोष आदि की कसौटी पर खरा उतरे और जो विवेक पर खरा नहीं उतरता तो धर्म की सही पहचान नहीं हो सकती। यही वर्तमान समय की सबसे बड़ी त्रासदी है। सांस्कृतिक जीवन मूल्यों पर वैश्वीकरण, भौतिकवादी चिंतन,

आधुनिक शिक्षा, विज्ञान का प्रभाव, औद्योगिकरण, पाश्चात्य संस्कृति व फिल्मों के दुष्प्रभाव से समाज के रहन-पहन में आमूल परिवर्तन हुए हैं। आलोच्य उपन्यासों में भी वे परिवर्तन व उनके दुष्प्रभाव उजागर हुए हैं।

अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'विराट बौना' में पात्र विमल के माध्यम से संस्कृति की कट्टरता को अनुचित ठहराया है क्योंकि भारतीय संस्कृति में सहिष्णु का गुण विद्यमान है वह समस्त संस्कृतियों का आदर करती है, कट्टरता की पोषण कदापि नहीं करती।

"सांयकाल को फिर साइकिल उठा कर वे चल पड़ते। प्रातः और सांय भारतीय संस्कृति संगम के कार्यकर्ता भी उन्हें बुलाने आने लगे और साथ ले जाने लगे। मैं प्रायः सोचता कि विमल जी जैसे शुष्क व्यक्ति संस्कृति संगम की गतिविधियों में क्या योगदान दे पाते होंगे। पर अब लगता था कि संस्कृति संगम ही दूषित हो चला था, सांस्कृतिक समन्वय का लक्ष्य भूल कर कट्टरपंथी हो चला था। देश में हवा ही कुछ ऐसी चलने लगी थी।" (विराट बौना 11)

3.1.2 रहन-सहन खान-पान सम्बन्धी संस्कृतिक मूल्य-

शब्दकोश के अनुसार अर्थ- रहन शब्द का अर्थ है, "रहने की क्रिया या भाव। आचार। व्यवहार।" और रहन-सहन का अर्थ है- "जीवन बिताने और काम करने का ढंग" (नालंदा विशाल शब्द सागर 36)

आलोच्य उपन्यासों में रहन-सहन में काफी भिन्नता नजर आती है। अमृतलाल मदान के उपन्यास बंद होते दरवाजे में मोहित की माँ अपनी बहू के बारे में कहती है-

"खाक हुई वह एडजस्ट हमारे साथ। हमारे घर आती तो, सौ नखरे करती हैं यहाँ बिजली गुल रहती है, ना ए.सी. है, न कार है। इस नगर में कोई ढंग का बाजार भी नहीं जहाँ मैं शॉपिंग कर सकूँ ... न ढंग का बॉब कट करने वाला सैलून... जब हम वहाँ जाते हैं तो शिकायतें होती उनके कारण हमारे

प्रोग्राम डिस्टर्ब हो जाते हैं। न मॉल जा सकते हैं, न मल्टीकोम्प्लेक्स, ये ऐसे खाते हैं, ऐसा नहीं खाते और फिर आते हैं, तो बच्चों को लाड-प्यार करके बिगाड़ जाते हैं। हफ्तों लग जाते हैं उन्हें सुधारने में... मुग्धा तो इनकी वजह से पढ़ ही नहीं पाती”(बंद होते दरवाजे 69)

यहाँ पर सेवा भावना, कर्तव्यपरायणता, आतिथ्य सत्कार आदि परम्परागत सांस्कृतिक मूल्यों का विघटन हुआ है। लेखक ने भौतिकतावाद के प्रति आकर्षण दिखाया है, जिससे उनके जीवन स्तर में सुधार तो हुआ है परन्तु उनकी मानसिकता भौतिकवादी और उपभोगवादी हो गई है, जो रिश्तो से अधिक अपने ऐश्वर्य आराम को महत्व देने लगे हैं।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'बंद होते दरवाजे' में मोहित की माँ अपनी बहू के बारे अपने पति से कहती है,

“अब क्या बताएं पड़ोसियों को हमारे जाने से बहु ज्यादा डिस्टर्ब होती है, क्योंकि वह अपने कंप्यूटर पर जब बैठ जाती है तो घर में रहते हुए भी घर की नहीं रहती बाजार की हो जाती है। तब वह शेयर मार्केट का सर्वे करती रहती है और पति से फोन पर सलाह लेती रहती है उसे तब यह फिक्र होती है कि पैसा कहाँ से हटाना है, कहाँ निवेश करना है। सास-ससुर जाए भाड़ में। ससुरे बिना काम भी आए रहते हैं। उनके लिए समय पर नाश्ता और लंच बने, चाय बने, उनके साथ बैठकर घर परिवार की बातें करें। परिवार की क्या समस्याएं हैं? स्वास्थ्य की क्या समस्याएं हैं? उनसे निपटने के क्या उपाय हैं, इन पर चर्चा करें, कुछ तसल्ली दे प्यार दे। यह सब बातें उनके मानसिक कम्प्यूटर में नहीं आती क्योंकि उसमें ऐसा कुछ संस्कार फीड ही नहीं किया गया। फीड किया गया तो बस मेरा घर, मेरा पति, मेरे बच्चे।”(बंद होते दरवाजे पृष्ठ 67)

यहाँ पर लेखक ने हमारी संस्कृति पर भूमंडलीकरण के सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रभावों को उजागर किया है। वैश्वीकरण के इस दौर में शिक्षित महिला घर बैठे तकनीकी के कारण शेयर मार्केट से धन कमा रही है। यहाँ महिला

को आत्मनिर्भर बनाने में वैश्वीकरण व शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। परन्तु इस धनलोलुपता ने एक और जीवनस्तर को सुधारा है वहीं रिश्तों के महत्त्व को फीका कर दिया है। यहाँ वृद्धों के प्रति आदरभाव, सेवाभाव, समर्पण व कर्तव्य आदि हमारी संस्कृति के अभिन्न अंगभूत सांस्कृतिक मूल्यों का विघटन दिखाई देता है।

धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'खिलने से पहले' में सुमित्रा-सेवादास के परिवार के माध्यम से एक आदर्श परिवार को प्रस्तुत किया है। लेखक स्वयं इस परिवार का जिक्र करते हुए कहते हैं—

“न तो पति-पत्नी और न ही बच्चें ज्यादा फैशनेबल थे। न जमाने से आगे और न पीछे। क्या मोहल्ले वाले और क्या रिश्तेदार सभी के सुख-दुःख में शामिल होते। सामर्थ्य के अनुसार उनका सहयोग करने की कोशिश करते। लड़ाकू तथा ज्यादा राजनीति खेलने वाले लोगों से दूरी बनाए रखते। उनके घर उनके जैसे विचारों और सोच वाले व्यक्तियों का आना जाना होता। बच्चों को सच्चाई, ईमानदारी और मेहनत का पाठ पढ़ाया जाता।”(खिलने से पहले 24)

आलोच्य उपन्यास में पारंपरिक सांस्कृतिक मूल्य सच्चाई, ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, सहयोग, सौहार्द, सेवाभाव, सहानुभूति, वात्सल्य आदि सांस्कृतिक मूल्यों का पोषण दिखाया गया है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'दूसरा अरुण' में अरुण के पिता जब गबन के आरोप में पकड़े जाते हैं तो वह अपनी पत्नी को दोषी ठहराते हुए कहते हैं—

“तुम ही तो कहती थी कि सोना महंगा हो रहा है। अरुण की दुल्हन के लिए खरीद रखो। कभी कहती फलां चीज ला दो, कभी यह ला दो” शीला सिर झुकाए खड़ी थी। अरुण खड़ा सोच रहा था पता नहीं मम्मी पापा दोनों के रक्त में लालच के कीटाणु कहाँ से घुस आए दादा जी तो ऐसे न थे।”(दूसरा अरुण 79)

उपन्यासकार ने यह प्रदर्शित करने का प्रयास किया है कि हम अपने परम्परागत संस्कारों सादगी, सहजता, सरल व शांत जीवन शैली को छोड़कर किस प्रकार पदार्थवादी सोच को अपना रहे हैं, जो भावी सन्तति के लिए सदाचरण का मार्ग प्रशस्त नहीं करती।

वेशभूषा रहन-सहन की तरह पाश्चात्य प्रभाव खानपान पर भी पड़ा। लोग दाल, चावल, सब्जी, रोटी, की बजाय फास्ट फूड स्नैक्स, पिज्जा, बर्गर, चाऊमिन, जैसी चीजें खाना अत्यधिक पसंद करने लगे हैं। लोग दूध पीने के स्थान पर शराब और बियर पीना ज्यादा पसंद करने लगे हैं। बड़े तो बड़े बच्चे भी इसका अनुकरण कर रहे हैं।

जो संस्कार माता-पिता के होते हैं, उनका अनुकरण ही बच्चों द्वारा किया जाता है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सैफी अपनी मैडम को अपने माता-पिता के बारे में बताती है, कि उसकी माँ के बॉयफ्रेंड और पापा की गर्लफ्रेंड हैं। ये सब उनकी फैमिली में कॉमन बातें हैं। इसलिए मैंने भी सन्नी को अपना बॉयफ्रेंड बनाया है।

दोनों ही पति-पत्नी पर पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। दोनों ही स्वयं के सुख को परम लक्ष्य मानते हुए रात तक किटी पार्टियों में आनंद लेते हैं व नशे करते हैं। सैफी की माँ एक अन्य व्यक्ति जावेद से प्रेम संबंध स्थापित करती है जिसके कारण सैफी के माता-पिता में अक्सर लड़ाई झगड़ा होता रहता है। इस प्रकार उनका दांपत्य जीवन दिखावे तथा विश्वास के टूटने की वजह से बर्बादी की ओर जा रहा है। सैफी की माँ को प्रेम की उड़ान ने अंधा बना दिया है। वह बच्चों की माता होकर भी, पति होते हुए जावेद नामक युवक से दैहिक संबंध बनाए रखती है। इन पति-पत्नी के संबंधों में विवाहेत्तर प्रेम, उच्छृंखलता, कामान्धता आदि कारणों से पारिवारिक मूल्यों का विघटन हुआ है।

वहीं दूसरी ओर 'खिलने से पहले' उपन्यास में सुमित्रा और सेवादास पति-पत्नी है। सुमित्रा सैफी की मैडम है। सुमित्रा सेवादास का दांपत्य जीवन खुशहाली और आनंद से भरा हुआ है।

“उनके घर का माहौल शांतिप्रिय है। सुमित्रा का विवाह अरेंज मैरिज थी। पति-पत्नी दोनों नौकरी करते थे दोनों एक दूसरे की मजबूरियां और सीमाएं समझते थे। घर में कोई नौकरानी भी नहीं थी। उसके पति सुबह शाम घर के काम में हाथ बटाते। दो बच्चे थे, उनमें साबी बड़ी और सौरभ छोटा। दोनों बच्चे बड़े हो चुके हैं, उन्होंने दोनों को बराबर प्यार दिया एक जैसी परवरिस दे रहे थे। दोनों में कोई अंतर ना रखा जाता।” (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 23)

“समाज की बुराइयों से दूर उनका परिवार एकदम शाकाहारी। मांस, मीट, अंडा, सिगरेट, शराब तो दूर घर में लहसुन से भी परहेज किया जाता।” (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 23)

कभी पति-पत्नी में आपसी मनमुटाव होने पर वह घर का माहौल कभी भी खराब ना होने देते।

“बिना बोले एक दूसरे को गलती का एहसास कराया जाता। गलती मानने को मजबूर किया जाता। अगर कोई तीसरा घर में आता, तो उसे जरा भी महसूस ना होने देते कि पति-पत्नी में किसी बात को लेकर मनमुटाव चल रहा है। गैरों के सामने यह सामान्य से व्यवहार करने लगते।” (धर्मपाल साहिल खिलने से पहले 24)

सेवादास और सुमित्रा के माध्यम से उपन्यासकार ने पति-पत्नी में परस्पर विश्वास, प्रेम, समानता, सहयोग, सम्मान आदि मूल्यों को उजागर करने का प्रयास किया है।

3.1.3 मेले व त्यौहार विषयक सांस्कृतिक मूल्य-

त्यौहार और मेले भारतीय संस्कृति के मुख्य तत्व हैं। वर्ष भर कोई न कोई पर्व या मेला कहीं न कहीं आयोजित हो रहा होता है। इन्हें बड़े उत्साह से मनाया जाता है। भौतिकतावाद और वैश्वीकरण की आपाधापी भरे युग में बड़ी संख्या में लोगों का इन त्यौहारों में शामिल होना आश्चर्य पैदा करने वाला है। राष्ट्रीय व

स्थानीय स्तर पर मनाए जाने वाले इन पर्वों की प्रतीक्षा की जाती है और पूरी तैयारी के साथ इन्हें मनाया जाता है। संसार के अन्य देशों में भी ऐसे आयोजन होते रहते हैं, किंतु भारतीय आयोजनों का अंतर समझने से भारतीय संस्कृति की विशिष्टता उभर कर सामने आती है। यह विशिष्टता देश की एकता और भाईचारे की भावना को दृढ़ आधार प्रदान करने वाली और मूल्यों को संरक्षित करने वाली है। प्रमुख बात यह है कि मेलों, त्यौहारों को व्यक्तिगत रूप से नहीं पारिवारिक स्तर पर मनाया जाता है। मुख्य त्यौहारों पर दूर-दराज रहने वाले परिवार के सदस्य भी घर आने को उत्सुक रहते हैं ताकि एक साथ पर्व का आनंद ले सकें। यह भावना जिस आनंद की जननी है, वह पाश्चात्य देशों की आनंद की अवधारणा से मूलतः भिन्न है। दशहरा, दीपावली, होली और ईद आदि को मनाने के लिये मोहल्ले तथा नगर स्तर पर समितियां बनाकर सहयोग और आनंद को और अधिक विस्तार दे दिया जाता है। आलोच्य उपन्यासों में मेले और त्यौहारों को वसुधैव कुटुम्बकम्, सत्य, धर्म, अहिंसा, अपरिग्रह, एकता, परस्पर सहयोग, समपर्ण व सांझी संस्कृति के पोषक के रूप में दिखाया गया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'मचान' में हिमाचल में आयोजित किए जाने वाले छिंज मेले का अपना सांस्कृतिक महत्व है।

"हिमाचल की सीमा के निकट होने के कारण इस छिंज मेले में पंजाब के साथ-साथ, बहुत बड़ी संख्या में हिमाचल वासी भी बड़े उत्साह से पहुंचते। निरंतर चार दिन तक चलने वाले इस भव्य छिंज मेले में भाग लेने के लिए भी दूर-दूर से नामी पहलवान अपनी किस्मत आजमाने आते। वास्तव में ऐसा मेला पंजाब हिमाचल विभाजन से पहले सदियों से आयोजित होता आ रहा था। बेशक प्रशासनिक तौर पर दो राज्यों के बीच बंटवारे की लकीर खींच दी गई थी, लेकिन इस लकीर के आर-पार बसे लोगों के रीति-रिवाज, परंपराएं, मान्यताएं, त्योहार-मेले, देवी-देवता सांझे थे। अभी भी पंजाब की तरफ गांव के लोग अपने बेटे-बेटियों के रिश्ते हिमाचल की ओर कर देते थे।" (मचान 15)

आलोच्य उपन्यास में छिज मेला लोगों में परस्पर सौहार्द, लोकमंगल व सांस्कृतिक एकता का संचार करता हुआ प्रशासनिक तौर पर अलग हुए दो राज्यों की समरसता का सूत्रधार है।

ये मेले और त्यौहार मात्र मनोरंजन का साधन ही नहीं होते अपितु समाज व संस्कृति को जोड़ने का कार्य भी करते हैं। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'समझौता एक्सप्रेस' में भारत-पाक विभाजन के समय अपनी पत्नी बीबी मोहमद से बिछुड़ा शिकोह मालिक पंजाब में आयोजित सभ्याचारक मेले के माध्यम से ही पचपन वर्ष बाद अपनी पत्नी खोजने में सफल हो पता है। इस घटना से स्पष्ट है कि मेले जोड़ने का कार्य करते हैं न कि तोड़ने का। प्रोफेसर नंदा इस विषय में कहते हैं।

“जनाब शिकोह मालिक और बीबी मोहमद पाकिस्तान में हिंदुस्तान के प्रतीक बन गए हैं, इन्हें मिलाना दो मुल्कों, दो संस्कृतियों का फिर से मिल जाना है। दोस्तों, सियासत तोड़ती है। संस्कृति जोड़ती है। हमारे सभ्याचारक मेलों का उद्देश्य भी यही है, जो आज सार्थक हो गया। इसलिए हमने आज के इस कार्यक्रम का नाम भी समझौता एक्सप्रेस सभ्याचारक मेला रखा है।” (समझौता एक्सप्रेस 142)

उपन्यासकार ने भारतीय मेलों के माध्यम से सहयोग, आपसी भाईचारा, प्रेम, सद्भावना आदि मूल्यों को उजागर किया है।

3.1.4 क्लब व पार्टी सम्बन्धी सांस्कृतिक मूल्य—

महानगरों में उच्च वर्ग और उच्च मध्य वर्ग के लोग अक्सर क्लबों में जाते हैं और पार्टियों का आयोजन करते हैं। वहाँ पर जो व्यवहार होते हैं, उनसे नैतिक मूल्यों का विघटन होता है। पार्टी में मतलबी दोस्त होते हैं, शराब और शबाब का माहौल होता है। लोगों का मिलना बातें करना ऊपरी होता है। उसमें भी स्वार्थ पर आधारित दिखावा होता है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सुमित्रा मैडम को कुमार मैडम रेव पार्टी के विषय में बताती हैं—

“मैडम बस पूछो मत... ऐसी पार्टियां होती है, जहां जिंदगी का लुत्फ आ जाता है। क्या टीनएजर, क्या कॉलेज गोइंग स्टूडेंट्स, क्या टीचर, प्रोफ़ेसर, क्या सरकारी गैर-सरकारी, क्या देशी-विदेशी, मल्टीनेशनल कंपनियों के स्टाफ़ मेंबर सभी दीवाने हैं, पागल हैं। यहाँ हर कोई चीज आसानी से मिल जाती है जो बाहर ढूँढने से भी नहीं मिलती। शराब, शबाब, हर तरह का नशा, हॉट संगीत, नेकेड डांस, हर एक ऐज का सेक्स, बस आपकी जेब में पैसे होने चाहिए। कुमार मैडम चटकारे लेकर यह सब बता रही थी। जैसे वह स्कूल की लाइब्रेरी में न होकर किसी रेव पार्टी में घूम रही हो।”(खिलने से पहले 116)

कुमार मैडम सुमित्रा मैडम को डेजीचेन पार्टी के विषय में बताती है—

“ये डेजीचेन पार्टी रेव पार्टी से कुछ ज्यादा डिफरेंट नहीं होती। रेव में जहाँ नशा ही नशा, डांस ही डांस ज्यादा होता है। वहीं डेजी चेन में मैरिड, अनमैरिड कपल इकट्ठे होते हैं, नशा करते हैं, डांस करते हैं, फिर अपनी मर्जी, अपनी खुशी और पसंद से अपने बेड पार्टनर एक्सचेंज करके सेक्स एंजॉय करते हैं। है न इंटरेस्टिंग, कभी किया ऐसा, नहीं किया तो करके देख लो। चलो हमारे साथ फिर ना कहना हमें यह चांस नहीं मिला। इस क्लब की मेंबरशिप जरा ज्यादा होती है और कुछ नहीं।”(खिलने से पहले 117)

सुमित्रा मैडम पर भारतीय संस्कृति का पूर्ण प्रभाव है वह भारतीय संस्कृति के विषय में कुमार मैडम को बताती है—

“मेरी तो समझ में नहीं आता, ये लड़कियां जो टीन एज में ही सेक्स में इवाल्व हो रही है, इन्हें मैरिज के समय डर नहीं लगता। अगर उस समय यह भेद खुलेगा, तो इन सब पर क्या बीतेगी? हमारे समय में तो किसी भी लड़की की अग्निपरीक्षा हुआ करती थी। शादी तक अपना सतीत्व संभाल कर रखना होता था। अपने कुंवारेपन को प्रमाणित करना पड़ता था। आज की लड़कियों को इस बात का जरा भी भय नहीं।”(खिलने से पहले 117)

धर्मपाल साहिल ने पाश्चात्य संस्कृति के भारतीयों पर पड़े प्रभावो को अपने उपन्यास 'खिलने से पहले' में वर्णित किया है। तीज त्योहारों को मनाने तथा खुशियों को घर के सदस्यों के साथ घर में मनाने के स्थान पर लोग व्यक्तिवादी सुख के लिए होटलों और क्लबों में रेव तथा डेजीचेन जैसी पार्टियों में जाते हैं। भारतीय संस्कृति में इस प्रकार के आचरण को उचित नहीं माना गया है। भारतीय संस्कृति में पति-पत्नी के अन्य किसी से दैहिक सम्बन्ध को अनैतिक माना गया है, जबकि पाश्चात्य संस्कृति में इसे अनुचित नहीं माना जाता। यहाँ भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों पर पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव को उजागर किया गया है।

अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'एक और त्रासदी' में गुरुद्वारे की लंगर प्रथा के विषय में बदलते विचारों को मोहित की पत्नी रिया के माध्यम से उद्घाटित किया है। "मम्मी लंगर क्या होता है बेटी ने पूछा। लंगर....जिसमें हाथ में रोटियाँ लेकर नीचे बैठकर खाते है। बाल्टी में दाल सब्जी डालकर बाँटते हैं। छी: गंदा लंगर! हम तो रेस्त्रा में खाएंगे। या मॉल में। चलो मम्मी भूख लगी है। हर्षित कह रहा था।"(एक और त्रासदी 77)

बहू की इस बात को सुनकर ससुर अमर को बहुत दुःख होता है और वह अपनी पुत्रवधु से कहता है—

"बहू तुम्हारे परिवार में तो पंजाबी रिश्तेदार भी हैं। गुरुद्वारे भी गयी होगी उनके साथ। फिर भी तुम लंगर का महत्व नहीं जानती। बालकटी बहू को ससुर का यह प्रश्न अच्छा नहीं लगा, निजी जीवन में दखल देता लगा। न उसे इधर-उधर आते-जाते सफाचट संन्यासी अच्छे लग रहे थे। उसने मुँह फेर लिया। हे बोधि वृक्ष, हमारी आज की पीढ़ी को परंपरा का बोध भी कराओ। अमरनाथ ने फिर विनय की। हाँ-हाँ आज की पीढ़ी तो आकाश की सीढ़ी चढ़ना जानती हैं। जबकि परंपरा धरती की जड़ों में दबी हुई है।"(एक और त्रासदी 77)

भारतीय संस्कृति में परम्पराओं का बहुत महत्व रहा है जो आपसी प्रेम, सद्भावना, परोपकार, सेवाभाव आदि की पोषक रही है। ये इंसान को समाज में उचित आचरण करने में सहयोगी होती है, परन्तु आज वे अपनी परम्पराओं के महत्व को भूलते जा रहे हैं जिस कारण उनमें आपसी प्रेम, सद्भावना, परोपकार, सेवाभाव आदि मूल्यों का विघटन होता जा रहा। आज वे केवल व्यक्तिगत सुख को ही परम लक्ष्य मानते हैं और उसी की पूर्ति के लिए प्रयासरत रहते हैं।

3.1.5 रीति-रिवाज व परम्परा विषयक सांस्कृतिक मूल्य-

रीति रिवाज व परम्पराएं वे संस्कार हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी मानव जातियों में चलते आ रहे हैं। इनका संबंध दैनिकचर्या या जीवन की प्रमुख घटनाओं से होता है। भारतीय संस्कृति में रीति-रिवाज और परम्पराओं का वैज्ञानिक महत्व है। जैसे हमारे बुजुर्ग प्रातः उठकर अपने दोनों हाथों को देखते हैं और उसमें ईश्वर का दर्शन करते हैं। धरती पर पैर रखने से पहले धरती माँ को प्रणाम करते हैं क्योंकि धरती माँ धन-धान्य से परिपूर्ण करती है। हमारा पालन-पोषण करती है, उसी पर हम पैर रखते हैं। इसीलिए धरती पर पैर रखने से पहले उसे प्रणाम कर उससे माफ़ी मांगते हैं। अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में ऐसा प्रसंग है।

सूर्य ग्रहण के समय घर से बाहर न निकलने की परंपरा के पीछे वैज्ञानिक तथ्य छिपा हुआ है। दरअसल सूर्य ग्रहण के समय सूर्य से बहुत ही हानिकारक किरणें निकलती हैं, जो हमें नुकसान पहुंचाती हैं। इसी तरह कहा जाता है कि हमें सूर्योदय से पहले उठना चाहिए क्योंकि ब्रह्म मुहूर्त में उठने से हम दिनों-दिन तरोताजा रहते हैं और आलस हमारे पास भी नहीं फटकता।

हमारे वेद पुराणों में प्रकृति को माता और इसके हर रूप को देवी-देवताओं का रूप दिया गया है। हमने कुछ पेड़ों को जैसे-बरगद, पीपल को देवताओं और तुलसी, नदियों को देवी का रूप दिया है। यह कोई अन्धविश्वास नहीं है बल्कि इसके पीछे बहुत बड़ा तथ्य छुपा हुआ है। हमारे पूर्वजों ने इन्हें देवी-देवताओं का दर्जा इसलिए दिया क्योंकि कोई व्यक्ति किसी की पूजा करता है तो वह कभी भी उसको नुकसान नहीं पहुंचा सकता।

घर में पूजा पाठ करते समय धूप, अगरबती, ज्योति जलाते हैं तथा शंख बजाते हैं। इन सबके पीछे वैज्ञानिक तथ्य छुपा हुआ है। ऐसा माना जाता है कि शंख बजाने से शंख-ध्वनि जहाँ तक जाती है वहाँ तक की वायु से जीवाणु-कीटाणु सभी नष्ट हो जाते हैं। हमारे यहाँ चारो धाम घूमने की परंपरा है इस परंपरा के पालन करने से हमें देश के भूगोल का ज्ञान होता है। पर्यावरण के सौंदर्य का बोध होता है और साथ में ये यात्राएं हमारे स्वास्थ्य के लिए भी लाभकारी हैं क्योंकि इससे हमारा मन प्रसन्न रहता है। हमारे सभी रीति-रिवाज़ और त्यौहार हमारे संबंधों को मजबूत करते हैं जैसे-रक्षाबंधन भाई-बहन के प्रेम को बढ़ाता है। करवाचौथ दाम्पत्य जीवन में मधुरता लाता है। ऐसे ही छठ में माँ अपने बच्चे की लम्बी उम्र के लिए व्रत करती है।

विदेशी लोग भारत आकर यहाँ की संस्कृति, रीति-रिवाज़ों और परम्पराओं को देख रहे हैं और अपना रहे हैं। भारतीय संस्कृति से प्रभावित विदेशी पर्यटक मन की शांति के लिए भारत आते हैं और यहाँ आने पर उन्हें एक अजीब से सुकून का अनुभव होता है।

हमारी भारतीय संस्कृति में माता-पिता और गुरु के पैर छूने की परंपरा है। माता-पिता और बड़ों को अभिवादन करने से मनुष्य की चार चीजें आयु, यश, विद्या और बल बढ़ते हैं। सज्जन और श्रेष्ठ लोगों का अपना एक प्रभा मंडल होता है और जब हम अपने गुरु और अपने से बड़ों के पैर छूते हैं तो उसकी कुछ अच्छाईयां हमारे अंदर भी आ जाती हैं। आलोच्य उपन्यासों में भी ऐसे अनेक रीति रिवाज हैं जिनका अनुसरण आज भी संसार ने किया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास '.....और कितनी?' में बच्चे द्वारा पहला दांत निकालने पर निभाई जाने वाली खीरपू रस्म के बारे में बताया गया है। शिवानी अपनी पुत्री परी को बताती है-

"बच्चे को अन्न देना शुरू किया जाता है विशेष तौर पर खीर बनाकर बच्चे को खिलाई जाती है। उस दिन के बाद उसे दूध के साथ साथ, अन्य अन्न जैसे रोटी, दाल, सब्जियां आदि शुरू कर दिए जाते हैं। उस समय ही बच्चे

के सामने कुछ सामान रख दिया जाता है। वह जिस सामान को उठाता है उससे उसके भविष्य की कल्पना की जाती है कि वह बड़ा होकर क्या बनेगा क्या करेगा। तुम्हारे इर्द गिर्द पेन कॉपी, किताब, पेशकश, नोट, मोबाइल, चिमटा, सुई-धागा, मिट्टी का ढेला आदि रखे थे। तुम उस सामान को हैरानी से देखती रही थी। फिर अचानक तुमने आगे झुक कर अपने हाथों से पैर उठा लिया था साथ ही पास पड़ी किताब उठाने की कोशिश भी की थी। हमने इस बात से अंदाजा लगा लिया था कि तुम बड़ी हो कर लिखने पढ़ने वाले किसी काम से जुडोगी।” (और कितनी 385)

भारतीय संस्कृति की इस रस्म जैसी रस्म जापान में भी देखने को मिलती है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास ‘बेटी हूँ न’ में भावनी मैरी को अपने ससुराल की परंपराओं के बारे में बताती है, “लड़का पैदा करके वंश का वारिस दिए बिना औरत इस खानदान में बस ही नहीं सकती... एक रस्म जिसे परिवार का मुखिया निभाता है, बिना किसी झिझक, डर, शर्म-संकोच के...।” (बेटी हूँ ना 27)

भावनी सिस्टर मैरी को बताती है की उनके खानदान में पहली लड़की पैदा होने पर लड़की को बहुत ही निर्दयी ढंग से मारने की परंपरा है। यह सुनकर मैरी बहुत ज्यादा दुखी होती है और वह भावनी से इस बारे में हैरान होते हुए पूछती है। भावनी बताती है, जब घरवालों को पहली लड़की पैदा होने की खबर दाई द्वारा दी जाती है और कन्या की माँ को कहा जाता है की बच्चा मरा हुआ पैदा हुआ है। फिर परिवार के बुजुर्ग को बुलाया जाता है। कुछ उपलों के टुकड़े एक खुले मुंह वाले मिट्टी के बर्तन रखे जाते हैं और उस पर नमक छिड़क दिया जाता। फिर नवजात कन्या को कपड़े में लपेटकर उस मिट्टी के बर्तन में रख दिया जाता। परिवार का बुजुर्ग उस नव जन्मी लड़की की बंद मुट्टियों में से एक में रुई की पूनी फसाता और दूसरी में गुड़ का टुकड़ा। फिर मिट्टी के बर्तन के मुँह पर ढक्कन लगाकर उसे लीप दिया जाता। फिर उसे लोगों की नजरों से बचाकर किसी सुनसान जगह में जमीन में गाड़ दिया जाता। ऐसा करते समय बुजुर्ग कहता—गुड़ खाई, पूनी कत्ती, आप ना आई, वीर नो घत्ती।

भावनी सिस्टर मैरी को बताती है कि उसके ससुराल में रिवाज है, पहला बच्चा लड़की होती है तो उसे मार दिया जाता है और पहला बेटा पैदा होते ही खुशियाँ मनाई जाती है। पहला लड़का पैदा करने वाली बहू की कद्र रातों-रात आसमान छूने लगती। कई दिनों तक शराब के दौर चलते, भूखों-गरीबों को खाना खिलाया जाता ताकि दूर-दूर तक लोगो को पता चल जाए किसी राजपूत के वरिष्ठ हुआ है।

प्रस्तुत उपन्यास में जन्म के समय ही लड़के और लड़की से किये जा रहे भेद भाव को दर्शाया गया है जोकि समानता मूल्य का विघटन है।

3.1.6 वैवाहिक सांस्कृतिक मूल्य—

भारतीय समाज और संस्कृति में विवाह को पवित्र बंधन माना जाता है। विवाह को दांपत्य जीवन का आधार माना गया है। विवाहित पति-पत्नी द्वारा एक दूसरे के प्रति एक निष्ठा की अपेक्षा की जाती है। पति-पत्नी के बीच में आत्मीयता, त्याग, लगाव, समर्पण की भावना, परस्पर विश्वास, आदर, कर्तव्यपरायणता संतानोत्पत्ति, आदि विवाह से संबंधित मूल्य माने जाते हैं। भारतीय संस्कृति के अंतर्गत लड़का लड़की की शादी माता पिता की अनुमति से की जाती थी। वर्तमान में प्रेम-विवाह, अंतरजातीय विवाह, विधवा विवाह, बाल विवाह, दूसरे धर्म में विवाह आदि अनेक रूप देखने को मिलते हैं। भारत में विवाह पद्धति के विभिन्न रूप भी नजर आते हैं जैसे वचन संकल्प, देव साक्षी, अग्नि परिक्रमा, कोर्ट मैरिज, लिव इन रिलेशनशिप आदि। प्राचीन भारत में विवाह परंपरा धर्म तथा भाग्य से जुड़ा हुआ था, परन्तु अब उस दृष्टिकोण में बदलाव आने लगे हैं।

डॉक्टर हेमेंद्र पानेरी के अनुसार—

“वैवाहिक जीवन की रूढिगत मान्यताएं बदल चुकी हैं। विवाह के परंपरागत बंधन शिथिल हो गए हैं। अब विवाह को आत्माओं का पुनीत मिलन या जन्म जन्मांतर का संबंध स्वीकार ना किया जाकर मात्र समझौता या मैत्री संबंध माना जाने लगा है। वैवाहिक जीवन में तलाक की स्वीकृति से परंपरागत गृहस्थ जीवन संबंधी मूल्यों को आघात लगा है। प्रेम-विवाह,

अंतरजाति-विवाह, विधवा-विवाह आदि को स्वीकृति मिलने लगी है। आज जब बिना विवाह किए ही वैवाहिक जीवन की स्वच्छन्दताओं का उपभोग किया जा सकता है, तो फिर विवाह की आवश्यकता ही क्या है? यह विचारणा तीव्र गति से बढ़ती जा रही है।” (स्वाधीनता कालीन हिंदी साहित्य के जीवन मूल्य 56)

अमृतलाल मैदान के ‘अपने-अपने अंधेरे’ उपन्यास में राजेश का मित्र प्रदीप भी विवाहित होते हुए भी अपनी सहयोगिनी मोहिनी से अनैतिक संबंध स्थापित रखता है। प्रदीप राजेश को बताता है मोहिनी के पति जयप्रकाश को मोहिनी और उसके अनैतिक संबंधों के विषय में पता चल गया है उसने तो “गुस्से में आग बबूला होकर मोहिनी की खूब पिटाई की उस जालिम ने और उसे धमकी दी कि अगर मैं फिर कभी उसके दरवाजे पर नजर आया, तो वह मेरी टांगे तोड़ कर रख देगा और स्कूल की प्रबंधक समिति को भी शिकायत कर देगा। अब तुम ही बताओ अपनी टांगे तुडवाऊ या मोहिनी से अपना संबंध तोड़ दूँ। कुछ समझ नहीं आता क्या करूँ। तुम ही कोई रास्ता सुझावो मित्र।” (अपने-अपने अंधेरे 51) इस उपन्यास में दांपत्य जीवन सम्बन्धित परस्पर प्रेम, विश्वास, समर्पण आदि मूल्यों के संक्रमण तथा विघटन को दर्शाया गया है।

धर्मपाल साहिल के ‘मचान’ उपन्यास में चंचला और दिलबाग पति पत्नी हैं। वे एक दुसरे को बहुत प्रेम करते हैं और एक दुसरे के प्रति बहुत वफादार हैं। जगदीश नामक व्यक्ति जो रिश्ते में चंचला का जेठ लगता था। वह चंचला को पाना चाहता था इसलिए उसने दिलबाग की हत्या करवा दी। इस प्रकार किसी और के गलत इरादों की वजह से चंचला और दिलबाग का दांपत्य जीवन समाप्त हो गया। दिलबाग की मृत्यु के पश्चात चंचला को संभालने के लिए मास्टर कुंज कुमार एक कंपनी में काम दिलवा देते हैं। कुंज कुमार एक बहुत ही शरीफ और बच्चों के प्रति स्नेह भाव रखने वाले व्यक्ति थे उनकी उम्र 50 से ऊपर थी अभी अविवाहित थे क्योंकि जिस से वे प्रेम करते थे उसने कहीं और शादी कर ली थी। उसके बाद मास्टर कुंज कुमार ने शादी ना करने का फैसला लिया था परंतु चंचला के संपर्क

में आने के पश्चात चंचला और कुंज कुमार के बीच प्रेम प्रसंग प्रारंभ होता है। यहाँ पर कुंज कुमार चंचला को 'लिव इन रिलेशन' में रहने के लिए कहता है—

“इस प्यार को प्यार ही रहने दो इसे कोई और नाम ना ही दिया जाए तो ठीक है। शादी के बाद कब्जे की भावना पैदा होती है एक दूसरे के प्रति। एक दूसरे को गुलाम बनाकर रखने का जज्बा जोर पकड़ने लगता है। फिर प्यार, प्यार नहीं रहता कब्जा हो जाता है।” (धर्मपाल साहिल, मचान 262)

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में पति पत्नी के अनेक जोड़े हैं जो पारिवारिक मूल्य संक्रमण एवं विघटन को दर्शाते हैं। वर्तमान में शिक्षा एवं पाश्चात्य प्रभाव के कारण भारतीय नारी के बर्ताव में परिवर्तन आए हैं। जिस से मूल्यों में संक्रमण हुआ। इस उपन्यास में 'मैडम कुमार, और मैडम हर्षिता लिव इन रिलेशन और होमो रिश्तो को अपनाती हैं जो पाश्चात्य संस्कृति से उन्होंने अपनाया है। कुमार मैडम कहती है—

“ऑल राइट मैडम अब अपने ट्रेडिशनल मैरिज सिस्टम को ही लो बोर हो गए हैं लोग इस सिस्टम से। आप जो मर्जी कहें—बट आई बिलीव इन 'लिव इन रिलेशनशिप'। मुझे तो यह ट्रेंड बहुत जचा है। बिन फेरे हम तेरे बनकर जब तक जी चाहे रहो, जब मन भर जाए, उकता गए.. ओके बाय बाय टाटा—टाटा...” (धर्मपाल साहिल, खिलने से पहले 111)

सुमित्रा मैडम के इस बारे में और पूछने पर वह कहती है—

“इसमें मैडम एकदम बराबरी का दर्जा है औरत—मर्द को। एक दूसरे की रिस्पेक्ट है। एक दूसरे को खोने का डर भी है, इसलिए कोई एक दूसरे को नाराज करने का रिस्क नहीं लेता। अपनी कमाई पर अपना हक कोई दहेज नहीं, कोई लड़की—लड़के की समस्या नहीं। अगर बाई चांस अलग होना भी पड़ जाए तो कोई कोर्ट कचहरी का झंझट नहीं। एक दूसरे को आराम से कहो— भई, जितनी निभ गई ठीक, बाकी मेरा रास्ता इधर तुम्हारा उधर। तुम फ्री। आजाद जियो—आजाद मरो।” (खिलने से पहले 112)

मैडम कुमार अपने और हर्षिता मैडम के होम रिश्ते को स्वीकार करते हुए कहती हैं—

“हमें क्या जरूरत है धमाका करने कि मैम, वी आर ऑलरेडी इन ‘लिव इन रिलेशनशिप’ हम उनकी तरह मूर्ख नहीं हैं। मैडम कुमार ने हर्षिता के साथ अपनी होमो-रिश्ते स्वीकारते हुए स्थिति ही स्पष्ट कर दी और अपने बारे में चल रही अटकल-बाजियों को यकीन में बदल दिया था। मैडम कुमार नहीं रुकी— अब तो मैडम इंडिया में भी कानूनन मान्यता मिल गई है। हाईकोर्ट के एक फैसले ने धारा 377 को नकार दिया है। कितना हो हल्ला मचा था पिछले दिनों मिडिया में...मेरी समझ में नहीं आता कि जब दुनिया भर के एक सौ सताईस कंट्री इस रिलेशन को स्वीकार कर चुके हैं तो फिर हमारे इण्डिया में क्या प्रॉब्लम है? यहाँ सभी को अपने ढंग से जीने की आजादी होनी चाहिए।”(खिलने से पहले 114)

भारतीय परम्परा में स्त्री-पुरुष के वैवाहिक सम्बन्धों को मान्यता प्रदान की गई हैं संलैंगिक संबंधो को नहीं। बिना विवाह के स्त्री-पुरुष के सह-संबंधो को भी भारतीय संस्कृति में मान्यता नहीं दी गई हैं। भारतीयों द्वारा समलैंगिक संबंधो और बिन विवाह के सह-संबंधो को अपनाना भूमंडलीकरण के प्रभाव को दर्शाता हैं। यहाँ भारतीय पारम्परिक दाम्पत्य सम्बन्धित मूल्यों का संक्रमण व विघटन हुआ है।

3.1.7 शिक्षा व संस्कृति—

वैदिक काल से ही शिक्षा का उद्देश्य मानव का सर्वांगीण विकास रहा है। महान शिक्षाविदों गांधी से लेकर अरविन्द ने बार-बार इस बात पर जोर दिया है कि “मूल्यों को पढ़ाया या परीक्षा के जरिये थोपा नहीं जा सकता। मूल्यों को जीवन में, व्यवहार में उतारना होगा। चंद्र योगाभ्यास की कक्षायें, अपने आपको भारतीय संस्कृति का विशेषज्ञ समझने वाले व्यक्तियों के नैतिक उपदेशों जैसे औपचारिक प्रयासों से मूल्यों का वास्तविक बोध नहीं हो सकता।”(मूल्य विमर्श 21) आज की शिक्षा का स्तर काफी निम्न हो चुका है। गुरु शिष्य का पुरातन पवित्र सम्बन्ध भी अब धूमिल होने लगा है। पहले शिष्य अपने गुरुजनों का बहुत ही सम्मान करते थे। परन्तु

आज का बालक अधिक उदण्ड होता जा रहा है। यहाँ तक की अध्यापक उससे डरने लगा है। पहले समय में अध्यापक बच्चों को दण्ड दे देता था तो अभिभावक इसे अच्छा मानते थे। परन्तु कानूनों के प्रावधान से समाज के चाल-चलन से बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ जिसको अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'एक और त्रासदी' में दिखाया है।

“आज न तो अभिभावक यह चाहता कि उसके बालक को दण्ड मिले और छात्र भी यह समझ गया है कि अध्यापक के पास उसे दण्ड देने का अधिकार नहीं है। चाहे वह पढ़े या न पढ़े। वह कैसी भी शरारत करे, अध्यापक उसे सजा नहीं दे सकता इसलिए बच्चे की शर्म और भय दोनों निकल गए हैं। कुछ बच्चों के घरों में संस्कार अच्छे हैं और उनके बच्चे पढ़-लिखकर कामयाब होते हैं..!” (एक और त्रासदी 119)

शिष्यों का गुरुजनों के प्रति मान सम्मान का भाव कम होता जा रहा है जिसे अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास में परिलक्षित किया है तथा साथ ही शिष्यों के मूल्यों में आ रही गिरावट को दूर करने के लिए अध्यापक की भूमिका पर प्रकाश डाला है। इस उपन्यास में अध्यापक को समाज का आदर्श रूप दिखाया गया है, जिसका अनुसरण कर किसी भी समाज में मूल्यों का स्थानान्तरण व विकास होता है। आलोच्य उपन्यास में रामलुभाया पात्र के माध्यम से शिक्षक के आदर्श रूप को वर्णित किया गया है—

“सदैव मुझे यह अहसास भी बना रहता है कि एक विवाहित पुरुष के लिए एक विवाहित स्त्री के विषय में चिंतन करना, उसको चाहना सर्वथा अनैतिक है और अध्यापक के लिए तो वह और भी अधिक निन्दनीय है क्योंकि शिक्षक तो समाज का मार्गदर्शन करता है और नई पीढ़ी का निर्माण करता है यदि वही अनैतिकता में फंस जाएगा तो समाज के सामने कौन आदर्श प्रस्तुत करेगा।” (एक और त्रासदी 27)

समाज में मूल्यों की स्थापना में शिक्षक की अहम भूमिका को इस उपन्यास में रामलुभाया अध्यापक पात्र के माध्यम से उजागर किया गया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सुमित्रा मैडम के माध्यम से शिक्षक के आदर्श रूप को दिखाया गया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'मचान' में मास्टर कुंज कुमार के माध्यम से शिक्षक के आदर्श रूप को प्रस्तुत किया गया है।

3.1.8 धर्म का बाजारीकरण—

प्राचीनता की दृष्टि से हमारी भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों की सिरमौर है। यद्यपि समय-समय पर अन्य संस्कृतियों के आगमन से इसके कलेवर में भी थोड़ा परिवर्तन देखने में आया किन्तु अन्य देशों की संस्कृति की तुलना में भारतीय संस्कृति की कुछ परम्पराएं, मूल्य, आदर्श, सांस्कृतिक विरासत के धरोहर स्वरूप आज भी देखे जा सकते हैं। भारत की संस्कृति व परम्पराओं का मुख्य आधार वैदिक संस्कृति मानी जाती है। हमारी संस्कृति प्रारम्भ से ही धर्म प्रधान व अध्यात्म प्रधान रही, अपनी जिन विशेषताओं के कारण यह आज भी जीवित है, वह उसमें व्याप्त आध्यात्मिकता है। भारत में सदा से ही धर्म को ऊँचा स्थान प्राप्त रहा है। भारतीय संस्कृति में धर्म का अभिप्राय है, धारण करने योग्य, जो उपासना, पूजा-पाठ आदि पद्धति से भिन्न है। हमारे धर्म ग्रंथों में भी धर्म को कर्तव्य बताया गया है अर्थात् जिस मार्ग का अनुसरण कर व्यक्ति कर्तव्य की ओर अग्रसित हो, वही धर्म है, धर्म की इस व्यवस्था ने आध्यात्मिकता को बढ़ावा दिया। परन्तु आज के समय में धर्म का व्यवसायीकरण हो रहा है अधिकतर बाबा लोग धर्म का चोला पहनकर अपने व्यापार को फ़ैलाने में लगे हुए हैं।

अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'इति प्रेम कथा' में अमर पात्र के माध्यम से एक आश्रम के बाजारीकरण को प्रस्तुत किया है—

"तभी एक और शंका ने भी अपना दंश उठाया। कहीं यह आत्मा-प्रदेश वास्तव में आत्मा बाज़ार तो नहीं, जहाँ आत्मा नाम के अदृश्य माल का दिन रात व्यापार चलता है किंतु उसका साध्य व साधन दृश्य-जगत की सुख-सुविधाएं हैं। ये बढ़िया-बढ़िया भवन, बड़े-बड़े सुसज्जित सभागार, ए. सी. व कालीनों से सजे कार्यालय व कक्ष, हज़ारों लोगों के लिये बढ़िया

भोजन की व्यवस्था, आधुनिकतम गैजेट्स व यंत्र, कम्प्यूटर, इंटरनेट आदि। कारों के काफ़िले, बसें, मुद्रण प्रेस, पत्रिकाएं व प्रोपेगेण्डा साहित्य, बिक्री स्थल— ये सब किसी विशाल शॉपिंग मॉल का हिस्सा तो नहीं जहाँ विदेशी भी बड़ी संख्या में खिंचे चले आते हैं। अधिकतर बाबाओं व गुरुओं के आश्रमों की तरह क्या यह आश्रम भी तो ऐय्याशी का अड्डा नहीं— आध्यात्मिक ऐय्याशी का”(इति प्रेम कथा 25)

उपन्यासकार ने धार्मिक स्थान पर भौतिकतावाद के बढ़ते प्रभाव को उजागर किया है ।

3.2 तुलनात्मक निष्कर्ष

3.2.1 साम्य—

प्रथम— दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में वर्तमान में भारतीय खान-पान व रहन-सहन पर पड़ने वाले पाश्चात्य प्रभाव का बड़ी स्पष्टता के साथ उल्लेख किया है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सैफी के माता पिता के रहन सहन की समानता अमृतलाल मदान के उपन्यास बंद होते दरवाजे के पात्र मोहित और रीना से की जा सकती है। उपन्यास में स्त्री पात्र जहाँ शराब का सेवन करती हैं वहीं सामान्य सामान लाने के लिए मॉल में जाती है।

द्वितीय— दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में शिक्षा के नारी जीवन में आये सुधारों को उजागर किया है। वर्तमान में शिक्षा तथा वैश्वीकरण के कारण भारतीय नारी के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों को धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'मचान' की पात्र रोशनी, चंचलो '...और कितनी' उपन्यास की पात्र शिवानी के माध्यम से दिखाया है जो आर्थिक तौर पर आत्मनिर्भर बनती हैं। अमृतलाल मदान के उपन्यासों में नारी के शिक्षित और आर्थिक तौर पर आत्मनिर्भरता को बंद होते दरवाजे में मोहित की पत्नी रिया, 'इति प्रेम कथा' उपन्यास में गायत्री, 'अमर प्रेमकथा' उपन्यास में दिशा पात्र के माध्यम से दिखाया गया है।

तृतीय- दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में अध्यापक के आदर्श रूप को नैतिक मूल्यों का पोषक माना है। धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास खिलने से पहले अध्यापिका सुमित्रा, मचान उपन्यास में मास्टर कुंज कुमार, ...और कितनी? उपन्यास में अध्यापक धर्मपाल और अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास एक और त्रासदी में रामलुभाया मास्टर के माध्यम से अध्यापक के आदर्श रूप को प्रस्तुत किया है।

चतुर्थ- आलोच्य उपन्यासों में दोनों उपन्यासकारों ने विवाह में स्वयं की पसंद का जीवनसाथी चुनने का समर्थन किया है जो एक नवीन मूल्य की स्थापना का पोषण है।

पंचम- अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यासों में धर्म की आड़ में होने वाले अनैतिक कृत्यों का उल्लेख किया है। धर्मपाल साहिल ने आर्तनाद उपन्यास और अमृतलाल मदान ने एक अधूरी प्रेम कथा उपन्यास में धर्म की आड़ में किये जा रहे अनैतिक कार्यों को उजागर करने का भरसक प्रयास किया गया है।

3.2.2 वैषम्य-

प्रथम- धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'समझौता एक्सप्रेस' में सभ्याचारक मेले के माध्यम से शिकोह मलिक 55 वर्ष के बाद अपनी बीवी से मिलता है। वही मचान उपन्यास में भी 'छिंज मेले' के माध्यम से पंजाब व हिमाचल के रिश्तों और रीति रिवाजों का आदान प्रदान दिखाया गया है। ऐसे मेलों से लोगों में आपसी भाईचारा, सद्भावना, एकता, जागृत होती है साथ ही संस्कृतियों का स्थानान्तरण भी होता है। अमृतलाल मदान के उपन्यासों में ऐसे मेलों के विवरण नहीं है।

द्वितीय- वर्तमान में शिक्षा तथा वैश्वीकरण के कारण भारतीय नारी के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों को धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'मचान' की पात्र रोशनी, चंचलो '...और कितनी' उपन्यास की पात्र शिवानी के माध्यम से दिखाया है। ये ऐसी नारी पात्र हैं, जो शिक्षित होने के कारण पुरुष के उत्पीड़न से बच जाती हैं और आर्थिक तौर पर आत्मनिर्भर बनती हैं। अमृतलाल मदान के उपन्यासों में नारी के शिक्षित और आर्थिक तौर पर आत्मनिर्भर होने के पक्ष तो दिखाई देते परन्तु जिस

तरह साहिल के उपन्यासों की नारी पात्र शोषण का विरोध करती और अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए स्वयं अपने निर्णय लेती है यहाँ तक की वे अपने पति के उत्पीडन से बचने के लिए सम्बन्ध विच्छेद कर लेती है। अमृतलाल मदान के उपन्यासों में ऐसे उदाहरण नहीं हैं।

तृतीय— धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'मचान' व 'समझौता एक्सप्रेस' में मेलों को सांस्कृतिक मूल्यों के पोषक के रूप में दिखाया है, जो लोगों को जोड़ने का कार्य करते हैं। अमृतलाल मदान के उपन्यासों में यह पक्ष अछूता रहा।

चतुर्थ— धर्मपाल साहिल ने अपनी उपन्यासों 'बेटी हूँ न' व '..और कितनी?' तथा 'बोयस्कोप' में जन्म व विवाह संबंधी रश्मों, रीति रिवाजों व परंपराओं का चित्रण किया है। अमृतलाल मदान के उपन्यासों में यह चित्रण देखने को नहीं मिलता।

पंचम— धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यासों में मोडर्न पार्टियों जैसे 'डेजीचेन' पार्टी, रेव पार्टी का वर्णन किया है जो भारतीयों पर वैश्वकरण के प्रभाव को परिलक्षित करती हैं। अमृतलाल मदान के उपन्यासों में इस प्रकार की पार्टियों आदि का कोई विवरण दिखाई नहीं देता।

षष्ठम— अमृतलाल मदान के 'बंद होने दरवाजे में' उमाकांत के परिवार के माध्यम से मध्यम वर्ग की मानसिकता में आए परिवर्तनों को उजागर किया गया है। औद्योगीकरण और शहरीकरण के कारण एक नवीन मध्य वर्ग का उदय हुआ जिसकी भौतिकतावादी मानसिकता ने जहाँ उनके जीवन स्तर में सुधार किया वहीं दूसरी और पारिवारिक संबंधों में अलगाव को जन्म दिया। इसके विपरीत धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'मचान' में औद्योगीकरण व शिक्षा के कारण रोशनी और चंचलों नारी पात्रों को आत्मनिर्भर होने के साथ पारम्परिक संस्कृतिक मूल्यों का निर्वहन करते हुए दिखाया गया है।

भारतीय संस्कृति अद्वितीय तथा प्रवाहमान है जिसके संरक्षण की जिम्मेदारी वर्तमान पीढ़ी पर है। इसकी उदारता तथा समन्वयवादी गुणों ने अन्य संस्कृतियों को समाहित तो किया है, किन्तु अपने अस्तित्व के मूल को सुरक्षित रखा है। एक राष्ट्र की संस्कृति उसके लोगों के दिल और आत्मा में बसती है। सर्वांगीणता,

विशालता, उदारता और सहिष्णुता की दृष्टि से अन्य संस्कृतियों की अपेक्षा भारतीय संस्कृति अग्रणी है। आधुनिकता और वैश्वीकरण के नकारात्मक और सकारात्मक प्रभावों को उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में दर्शाया है।

चतुर्थ अध्यायः
आलोच्य उपन्यासों में आर्थिक मूल्यों
का तुलनात्मक अध्ययन

चतुर्थ अध्याय

आलोच्य उपन्यासों में आर्थिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

वर्तमान युग धन प्रधान युग है। वैश्वीकरण के इस युग में धन ही सर्वस्व है। वह भी एक समय था जब भारतीय मनीषा 'वसुधैव कुटुंबकम् और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' का भाव अपने मन में रखते हुए संपूर्ण आचार संहिता में मर्यादाओं के अंतर्गत वैश्वीकरण की बात करती थी। वैसे तो आज भी वैश्वीकरण के द्वारा संपूर्ण विश्व को एक करने की चेष्टा की जा रही है परंतु आज दृष्टिकोण पूर्णता परिवर्तित हो गया है। प्राचीन दृष्टिकोण सामाजिक कल्याण को सर्वोपरी मानता था। आधुनिक दृष्टिकोण धन उपार्जन को। देश की आर्थिक विषमता बहुत बड़ी समस्या है। हमारे देश में आज अमीर और अधिक अमीर होता जा रहा है वही गरीब और अधिक गरीब। गरीब और अमीर के बीच यह दरार दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इस से समाज में आर्थिक असमानता बढ़ रही है। संसार के सभी संबंध अर्थ से बंधे हुए हैं। अर्थ के अभाव में यह प्रायः देखा जाता है कि मनुष्य बुरे से बुरा कार्य करने के लिए उतारू हो जाते हैं। यहाँ तक कि अर्थ के अभाव में आत्महत्या भी कर लेता है। भारतीय समाज में मध्यम वर्ग की स्थिति सबसे अधिक दयनीय है यह वर्ग न तो बिल्कुल श्रमिक वर्ग की भांति ही जी सकता है और न ही अमीरों की भांति। इस वर्ग से प्रायः समाज में कुछ विशेष अपेक्षाएं रखी जाती हैं जिनसे प्रायः यह भी ध्यान रखा जाता है कि इस वर्ग की आय भले ही कम हो उसका सामाजिक स्तर ऊंचा होना चाहिए। सामाजिक स्तर को ऊंचा बनाए रखने के उन्हें रिश्वत लेनी पड़ती है, झूठ बोलना पड़ता है, चोर बाजारी करनी पड़ती है। धर्मपाल साहिल और अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यासों के माध्यम से आर्थिक मूल्यों के महत्व और उनमें हो रहे विघटन को उजागर करने का प्रयास किया है।

4.1 अर्थ शब्द का तात्पर्य—

आर्थिक मूल्य कोशगत अर्थ— मनुष्य की आर्थिक आवश्यकताओं को संतुष्ट करने वाले तत्व आर्थिक मूल्य कहलाते हैं। संस्कृत हिंदी कोश के अंतर्गत अर्थ से तात्पर्य, "दौलत, धन—संपत्ति, रुपया।" (45)

लोकभारती प्रामाणिक हिंदी कोश के अनुसार— अर्थ शब्द का अर्थ है, “लोगों की स्वकीय अधिकारों और उपचारों से संबंध रखने वाला, पर आपराधिक से भिन्न।”(78)

बृहद हिंदी कोश के अनुसार अर्थ शब्द का भाव है, “शब्द का अभिप्राय, शब्द शक्ति, मानी, मतलब, प्रयोजन, अभिप्राय, काम, इष्ट, हेतु, निमिष, इंद्रियों के विषय, धन—संपत्ति।”(89)

4.2 अर्थ शब्द की परिभाषाएं

डॉ हुकुमचंद राजपाल के शब्दों में— “अर्थ का सामान्य तात्पर्य भौतिक सुखों व आवश्यकताओं की पूर्ति है। आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने अर्थ की संज्ञा उसे दी है जिसमें उपयोगिता, न्यूनता तथा विनिमय योग्यता हो, किंतु सामान्य तौर पर हम जीवन उपयोगी सभी भौतिक वस्तुओं को अर्थ की कोटि में रख सकते हैं। नीति शास्त्र के अनुसार अर्थशास्त्र ने मूल्यों का प्रयोग दो अर्थों में किया है व्यवहार के अर्थ में और विनिमय के अर्थ में। व्यवहार के अर्थ में मूल्य वस्तु की उस क्षमता को व्यक्त करता है जो मानव की आवश्यकता और इच्छाओं को संतोष देने में सहायक है। विनिमय के अर्थ में यह एक वस्तु का दूसरी वस्तु से आदान—प्रदान का सूचक है, जो वर्तमान युग में धन के रूप में किया जाता है जिसे वस्तु की कीमत या मूल्य कहते हैं। आर्थिक मूल्य मनुष्य की जीविका का साधन होते हैं जिनके द्वारा मनुष्य भौतिक आवश्यकताओं को संतुष्ट करता है तथा अपना विकास करने के लिए अन्य साधनों को जोड़ता है। आर्थिक आवश्यकताओं को संतुष्ट कर के ही मनुष्य धार्मिक सामाजिक, राजनीतिक आदि क्षेत्रों में संलग्न हो सकता है।

4.3 आर्थिक मूल्य के विषय में भारतीय चिन्तन—

भारतीय दर्शन के अनुसार मानव जीवन के चार पुरुषार्थ स्वीकार किए गए हैं, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इनकी प्राप्ति को ही मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य माना गया है। इन चार पुरुषार्थ में एक है, अर्थ, अर्थ का सामान्य अर्थ पैसा लिया जाता है। भारतीय चिंतन धारा में अर्थ को भौतिक जगत की सुख—सुविधाओं की प्राप्ति का माध्यम स्वीकार किया गया है।

“अर्थ और काम प्रवृत्ति के परिचायक हैं और धर्म तथा मोक्ष विकृति के। भारतीय मूल्य, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र हेतु सत्य को ही आधार भूमि बना कर चलते हैं अर्थात् जीवन में किसी भी क्षेत्र में कोई अनुचित काम किया ही नहीं जा सकता यही तो धर्म है। इसलिए भारतीय संस्कृति न तो अनुचित ढंग से धन कमाने की आज्ञा देती और न ही अनुपयुक्त धन से कार्य करने की।” (धर्मपाल मैनी, भारतीय मूल्य चेतना 45)

भारतीय मनीषियों का मंतव्य रहा है कि यह संसार नैतिक नियमों के अधीन है और जीवन मनुष्य को नैतिक चुनाव का ही अवसर प्रदान करता है। शायद इसीलिए उन्होंने धर्म अथवा नैतिकता को अर्थशास्त्र के मूल स्तम्भ के रूप में अंगीकार किया है, किन्तु इसका यह मंतव्य कतई नहीं है कि वे मनुष्य के जीवन में अर्थ के महत्व को स्वीकार ही नहीं करते थे। वे जिस बात पर जोर देते थे वह यह है कि यह जीवन का एक भाग है, संपूर्ण जीवन नहीं। यह चार पुरुषार्थों में से केवल एक पुरुषार्थ है। यही कारण था कि भारतीय चिंतन में अर्थ को धर्म की तुलना में द्वितीय स्थान दिया गया था। चार पुरुषार्थों के क्रम में, धर्म के बाद ही अर्थ का स्थान इस बात का प्रमाण है। महाभारत के शांतिपर्व में नकुल व सहदेव ने धन और धर्म के बीच बहुत ही सुन्दर समन्वय का प्रतिपादन करते हुए कहा है कि धर्मयुक्त धन और धनयुक्त धर्म ही संसार में अच्छे परिणाम ला सकता है। इस प्रकार भारतीय चिंतक एडम स्मिथ की तरह अर्थशास्त्र को केवल धन का विज्ञान स्वीकार नहीं करते। वैदिक काल से ही अर्थ को जीवन के मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है। आधुनिक युग में विभिन्न वाद जैसे पूंजीवाद, समाजवाद, साम्यवाद, आर्थिक समस्याओं का ही समाधान प्रस्तुत करने का प्रयत्न करते हैं उनकी मान्यता है कि आर्थिक समस्याओं के अतिरिक्त कोई समस्या नहीं है। आज के युग में आर्थिक समस्याओं का समाधान जीवन की विषमता को दूर करना माना जाता है। वैदिक काल में अर्थ को जीवन मूल्य तो स्वीकार किया गया किंतु उस युग का अर्थ संबंधी मूल्य के प्रति इस प्रकार का दृष्टिकोण नहीं था जैसा आज के युग में है। वह आर्थिक क्षेत्र को जीवन के लिए उपयोगी साधन तो मानते थे परंतु उसे जीवन का लक्ष्य नहीं मानते थे जबकि आज के युग में धन-संपत्ति को एकत्र करने की

लालसा अधिक से अधिक बढ़ती जा रही है। धन—संपत्ति ही जीवन का लक्ष्य बन गया है। मानव जीवन में इस मूल्य का निश्चित सीमा में ही उपयोग किया जाना चाहिए। अत्यधिक धन संग्रह, ईर्ष्या, द्वेष, संघर्ष, युद्ध आदि नाना मानसिक विकारों का कारण बनता है। आधुनिक समाज की सबसे बड़ी विडंबना है कि हम एक अर्थ आधारित समाज में जीने को विवश हैं। अब जीवन के नियामक और केंद्रीय शक्ति मूल्य न होकर धन हो गया है। अब का समाज मानवीय मूल्यों से दूर हो गया है। मानव मूल्यों एवं सांस्कृतिक जीवन मूल्यों पर धन हावी होने लगा है। जिसके पास धन है उसी का बोलबाला चल रहा है। मान—सम्मान, प्रतिष्ठा, अवसर सब कुछ धनी लोगों को ही प्राप्त हो रहा है। मनुष्य को जीवित रहने के लिए धन की जरूरत है क्योंकि एक स्वस्थ समाज में जनता की आवश्यक जरूरतों को पूर्ति करने के लिए धन आवश्यक है। आधुनिक युग में अर्थ व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है आज भौतिकवाद की बढ़ती प्रवृत्ति ने अर्थ को सर्वोत्तम स्थान प्रदान किया है। धन लिप्सा में अंधे लोगों को धन के अलावा कुछ दिखाई नहीं देता। यह धन चाहे वह अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए उपयोग करता है या दुनिया में शान—शौकत की जिंदगी व्यतीत करने के लिए। लेकिन पैसों की खनक परस्पर स्नेह व सौहार्द को पल भर में समाप्त कर देती है। निश्चय ही धन हमारे जीवन में विशेष भूमिका निभाता है मगर इतना भी महत्वपूर्ण नहीं है कि मानव के अपने ही संबंधों का स्थान ले ले। आज धन को प्रेम से अधिक महत्व दिया जाता है मानव पूरा दिन धन कमाने के लिए बाहर काम करता है। शाम को घर आते—आते उसमें इतनी शक्ति ही नहीं रहती कि अपने परिवार से बात कर सके उन्हें समय दे सके। लोग आधुनिकता और भौतिकवाद की दौड़ में लगे हैं। उनके पग—पग पर संबंध समय के अभाव में बिगड़ते जा रहे हैं। लोगों के पास सुख—दुःख की बात करने के लिए समय ही नहीं है। धन की चाह ने जहाँ इंसान को हैवान बना देती है वहीं पैसे की कमी भी मजबूरी में इंसान को शैतान बना देती है।

4.4 आलोच्य उपन्यासों में आर्थिक मूल्य

उपन्यासकार अपनी लेखनी से समाज के चित्रण में किसी भी पक्ष को अछूता नहीं छोड़ता और फिर जिसके बिना आज जीवन की कल्पना करना भी संभव नहीं

उसका जीवंत वर्णन कैसे दूरदर्शी उपन्यासकारों की लेखनी का विषय बनने से बच सकता है। धर्मपाल साहिल तथा अमृतलाल मदान के उपन्यासों में आर्थिक मूल्यों का संक्रमण व विघटन प्रस्तुत है।

4.4.1 श्रमनिष्ठा

भारत में प्राचीन काल से श्रम को महत्वपूर्ण माना जाता है। भारतीय समाज में श्रम को भगवान मानकर पूजा की जाती थी। हमारे पुराणों में कर्मवाद को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है इसलिए श्रम निष्ठा उच्च कोटि का आर्थिक मूल्य है। पहले लोगों की जरूरतें कम थी अतः वे संतुष्ट रह कर जीवन यापन करते थे। बढ़ती जनसंख्या, यंत्रीकरण, औद्योगिककरण, नगरीकरण व पाश्चात्यीकरण के प्रभाव से लोगों में धन की लालसा बढ़ने लगी जिस कारण भौतिक सुखों की लालसा में वृद्धि हुई। आजकल लोग धन को रिश्तों-नातों से अधिक महत्व देने लगे हैं। लोग धन कमाने के लिए शॉर्टकट का मार्ग अपनाने लगे हैं जिस से श्रमनिष्ठा का विघटन हुआ है। मानव मात्र की धन-संपत्ति को जैसे-तैसे अर्जित करने की प्रवृत्ति की परिणिति खून, चोरी, बलात्कार, भ्रूण-हत्या, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार व अनेक अमानवीय घृणित कृत्यों के रूप में होती है। अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में श्रमनिष्ठा के महत्व और उसमें हो रहे विघटन दोनों को ही चित्रित किया गया है।

अमृतलाल मैदान का उपन्यास 'सिंधु-पुत्र' श्रमनिष्ठा का प्रतिष्ठापक है। इस उपन्यास में नौजवान युवक अमर आर्थिक तंगी की चक्की में सुबह शाम पिसता है। घर की गाड़ी चलाने के लिए वह सुबह ट्यूशन पढ़ाता है, दिन में स्कूल में पढ़ाता है। उसके पास स्वयं की पढ़ाई के लिए न तो समय और न ही पैसा। फिर भी आर्थिक तंगी के चलते उच्च प्रशासनिक अधिकारी की परीक्षा की तैयारी करता है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास मचान में श्रमनिष्ठता के उदाहरण देखने को मिलते हैं। मास्टर कुंज कुमार अपने अध्यापन कार्य के प्रति बहुत ही अधिक श्रमनिष्ठ है।

“वह पहाड़ी इलाके के एक स्कूल में एकमात्र अध्यापक है जो 20 किलोमीटर दूर शहर से गाँव में पढ़ाने के लिए आता है। वह बच्चों को पढ़ाने में बेहद दिलचस्पी लेता। स्वयं गा—गा कर प्रार्थना करवाता। बच्चों को किताबों के साथ—साथ और बहुत सी शिक्षाएं देता। उसने अपनी मेहनत से स्कूल का नक्शा ही बदल दिया था। कुंज कुमार को लिखने पढ़ने का शौक भी था। उसके लेख, कहानियां, कविताएं अक्सर अखबार में छपते। गाँव की समस्याओं के बारे में भी अखबार में लिखकर लोगों की आवाज प्रशासन और सरकार तक पहुँचाता। वह स्कूल की छुट्टी के बाद भी कितनी देर रुककर स्कूल के काम करवाता रहता। खुद मिड डे मील तैयार करवाता। स्कूल की मैनेजमेंट कमेटी के साथ मिलकर विद्यार्थियों के बेहतरी के लिए कुछ ना कुछ काम चालू रखता।”(मचान 80)

गाँव वाले कुंज कुमार की सर्वत्र प्रशंसा करते और चाहते कि उनके बच्चों के अच्छे भविष्य की खातिर वह वहाँ से कभी तबादला ना करवाएं। जगदीश जैसे लालची और भ्रष्ट पुलिस वाले ने मास्टर कुंज कुमार के खिलाफ दलित लड़की से संबंधित मुकदमा करवा कर उसे नौकरी से हटाने और सजा दिलवाने के लिए साजिश रचता है। रोशनी और चंचलो की मदद से कुंज कुमार अदालत में स्वयं को बेकसूर साबित कर पाता है। कोर्ट के द्वारा कुंज कुमार की श्रमनिष्ठा की प्रशंसा की जाती है और उसे बेकसूर साबित कर पुनः उसी स्कूल में ज्वाइन करने के ऑर्डर दे दिए जाते हैं। इसके विपरीत जगदीश नामक व्यक्ति पुलिस में सिपाही के पद पर कार्यरत होता है परंतु गांव वालों को वह अपने आपको थानेदार बताता है। वह बहुत ही लालची प्रवृत्ति का इंसान है जो चंचलों को प्राप्त करने के लिए अपनी ड्यूटी का अनुचित फायदा उठा कर कैदियों को लालच दे कर उसके पति दिलावर की हत्या करवाने के पश्चात उसे हादसे का रूप दे देता है। वह सुरंजनी को नशे की हालत में स्वयं बताता है—

“तुझे अपनी जगदीश की ताकत का अंदाजा नहीं। पता है जब मेरी नाईट ड्यूटी होती है न, चौकी का इंचार्ज मैं ही होता हूँ। वे दोनों तो मुजरिम थे। हवालात में बंद थे। मैंने अपने रास्ते से एक कांटा हटाना था इन दोनों की

मदद से। मैं चोरी-चौरी इन्हें हवालात से निकाल लाया था और रातो-रात उन्हें हवालात में फिर से बंद कर दिया था। उन्हें मैंने बरी कराने का वायदा किया था।” (मचान 217)

यहाँ एक सिपाही का कर्तव्य जनता की सुरक्षा व सहयोग करना था जिसके विपरीत जगदीश ने अपने पद का दुरुपयोग करते हुए अपनी कर्तव्य-निष्ठा को तार-तार कर दिया।

उपन्यास की महिला पात्र रोशनी दवाइयों वाली फैक्ट्री में पूरी ईमानदारी से नौकरी करती है। फैक्ट्री का मालिक रोशनी पर पूरा विश्वास करता है। वह श्रमनिष्ठ और ईमानदार महिला थी। वह एक जरूरतमंद विधवा महिला चंचलो को अपनी फैक्ट्री में काम दिलवाकर उसकी मदद करती है। चंचलो पर अपने पति दिलावर सिंह की मृत्यु के पश्चात घर की सारी जिम्मेदारी आन पड़ती है। चंचलो अपने परिवार के लिए एक फैक्ट्री में काम करने लगती है। इससे उसकी श्रमनिष्ठा का पता चलता है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बेटी हूँ न' में कुंवर नारायण स्वास्थ्य मंत्री है जो मादा भ्रूण हत्या के खिलाफ सेमिनार, रैलियों आदि के माध्यम से लोगों को जागरूक करने का दिखावा करते हैं। रोजाना अखबार और मीडिया राजा जी (कुंवर नारायण) के भ्रूण हत्या के खिलाफ दिए बयानों से भरे होते हैं। दूसरी ओर उनके अपने ही अस्पताल में यह काम गुप्त ढंग से चल रहा था और आमदनी का साधन बना हुआ था। डॉक्टर डेविड ने संस्था के मालिक कुंवर नारायण पर अस्पताल में लिंग टेस्ट कर मादा भ्रूण हत्या करने का इल्जाम लगाते हुए अदालत में केस दायर कर दिया। उस केस की जज कुंवर नारायण की बेटी वाणी अपने फर्ज का पालन करती है। कुंवर नारायण स्वयं अपनी बेटी की श्रमनिष्ठा के बारे में कहते हैं—

“उसने भी जज बन कर और अपने फर्ज का पालन करते हुए अपना नाम बनाया है। मुझ पर चल रहे मुकदमे जज वाणी की अदालत में चल रहे थे। शुरू में मैंने अपनी बेटी होने के अधिकार का नाजायज फायदा उठाने की कोशिश की तो इस बेटी ने अपने रिश्ते को नहीं बल्कि अपनी निष्पक्ष ड्यूटी

को ऊपर रखा है और यहाँ तक कह दिया मुझे तो आपको अपना डैडी कहते भी शर्म आती है। बेहतर है कि आप अपने गलत कामों का साया भी मुझ पर ना पड़ने दें।”(बेटी हूँ ना 100)

प्रस्तुत उपन्यास में कुंवर नारायण अमीर होते हुए भी और अधिक धन की लालसा में गलत कार्यों को अंजाम देता है। वही डेविड और डायना ईमानदारी से अपने फर्ज को निभाते हैं। 'बेटी हूँ न' उपन्यास के पात्र डेविड और डायना दोनों ही डॉक्टर हैं। वे दोनों स्वास्थ्य मंत्री के अस्पताल में नौकरी करते हैं। जब उन्हें यह पता चलता है कि अस्पताल में लिंग टेस्ट कर मादा भ्रूण हत्या का कार्य किया जाता है, तो दोनों मिलकर उस अपराध के खिलाफ सबूत इकट्ठा कर कोर्ट में केस दर्ज कर देते हैं। डॉक्टर होने के नाते वे अपने फर्ज को अहमियत देते हुए स्वास्थ्य मंत्री से भी दुश्मनी मोल लेने के लिए तैयार हो जाते हैं—

“डॉक्टर डेविड ने उस अस्पताल के मालिक पर अस्पताल में लिंग टेस्ट कर मादा भ्रूण हत्या करने का इल्जाम लगाते हुए अदालत में केस दायर कर दिया और साथ ही मीडिया वालों की कांफ्रेंस बुलाकर डॉक्टर डायना और डॉक्टर डेविड ने यह खुलासा कर दिया कि उनके पास इन बातों के पुख्ता प्रमाण है जो वे समय पर अदालत में पेश कर देंगे।”(बेटी हूँ न 56)

प्रस्तुत उपन्यास में डॉक्टर डायना, डॉक्टर डेविड और जज वाणी के माध्यम से श्रमनिष्ठा को उजागर किया गया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास '...और कितनी' में शिवानी अपने पिता की श्रमनिष्ठा के बारे में अपनी पुत्री परी को बताती है—

“पापा एक अध्यापक थे, साथ ही एक प्रतिष्ठित लेखक भी। उन्होंने अपने आदर्शों से समाज में एक मिसाल कायम की थी। एक अनुशासन पसंद एवं समर्पित अध्यापक थे। साइंस के प्राध्यापक होते हुए भी वे ट्यूशन से कोसों दूर थे। पूरी लगन व मेहनत से विद्यार्थियों को पढ़ाते। किसी जरूरतमंद को मुफ्त गाइड करके मदद कर देते। हालांकि पापा के अन्य साथी अध्यापक ट्यूशन करते। लाखों कमाते, मम्मी कई बार गिला भी करती, पापा का

ट्यूशन न पढ़ाने पर। लेकिन पापा अपने उसूलों, आदर्शों के सामने किसी की एक ना सुनते। उन्होंने अध्यापन के अलावा स्वयं को सामाजिक कार्य में समर्पित कर रखा था।“(... और कितनी?16)

इसके विपरीत शिवानी का पति डॉक्टर कन्नु बहुत ही लालची प्रवृत्ति का इंसान है। वह चाहता है कि बिना मेहनत किए ही धन प्राप्त हो जाए। धन प्राप्ति के लिए शॉर्टकट अपनाता है। वह अपनी पत्नी को अपने घरवालों से कार लाने और क्लीनिक खोल कर देने के लिए बार-बार कहता है। एक डॉक्टर का फर्ज लोगों के स्वास्थ्य का ध्यान रखना होता है इसके विपरीत डॉक्टर कन्नु धन कमाने के लिए नशीले पदार्थ नौजवान बच्चों को गैर क़ानूनी तरीके से बेचता है। अंत तक भी वह धन कमाने के अनुचित रास्ते को नहीं छोड़ता। संक्षेप में धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में डायना, चंचलो, मास्टर कुंज कुमार, वाणी, रोशनी श्रम के प्रतिष्ठापक हैं तो सिपाही जगदीश, डॉक्टर कन्नु, बोदी वाला शॉर्टकट का मार्ग अपनाने वाले हैं। अमृतलाल मैदान के उपन्यासों में अमर श्रम का प्रतिष्ठापक है तो अरुण के पिता श्रम निष्ठा को विघटित करने वाले हैं।

4.4.2 आत्मनिर्भरता

आत्मनिर्भरता का अर्थ है मानसिक, बौद्धिक, अध्यात्मिक व आर्थिक रूप से स्वयं पर निर्भर होना ही आत्मनिर्भरता कहलाती है। वर्तमान में महिलाएं शिक्षा स्वतंत्रता व आर्थिक क्षेत्रों में स्त्रियों की आत्मनिर्भरता के पक्ष में हैं। पारम्परिक मूल्यों के अनुसार नारी मात्र घर के कार्य तक ही सीमित थी। अन्य कार्य क्षेत्रों पर मात्र पुरुषों का अधिकार था। आर्थिक रूप से परतंत्र नारी प्रत्येक छोटी से छोटी आवश्यकता के लिए भी पुरुषों की ओर ताकने पर मजबूर हो जाती थी। परंतु बदलते मूल्यों ने नारी को भी शिक्षा का अधिकार देकर पुरुषों के समान अधिकार दिए हैं। आधुनिक शिक्षित नारी जीवन के प्रत्येक पक्ष से संबंधित निर्णय स्वयं ले सकती है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'मचान' में रोशनी कामकाजी नारी है। वह एक दवाई की फैक्ट्री में अकाउंटेंट है। उसका पति शराबी और अय्याश था, इसलिए उसने उसको छोड़ दिया। उसकी सहेली चंचलों उसे कहती है—

“पर आप तो जॉब करती हैं ना, अपने पैरों पर खड़ी हैं। आपको उनके आगे पैसे—पैसे के लिए हाथ तो नहीं पसारने पड़ते न। चंचल अगर मैं जॉब पर ना होती तो भी ऐसे ही करती। लोगों के घरों में बर्तन मांज लेती, जैसे भी हो अपना गुजारा कर लेती, लेकिन उसे पास न फटकने देती। न आज तक फटकने दिया। साथ भी नहीं रहने दिया और छोड़ा भी नहीं है। अब केस कर रखा है घरेलू हिंसा का। तब तक उसकी उम्र निकल जाएगी, जब तक अदालत फ़ैसला देती है।” (मचान 148)

रोशनी एक शिक्षित स्वाभिमानी आत्मनिर्भर औरत है। नारी के पूर्व प्रचलित रूप से पूर्णता भिन्नता में जी रही है। आत्मनिर्भर होने के कारण उसे पुरुष की दया का पात्र होने की कोई आवश्यकता नहीं और उसने अपने बच्चों का पालन पोषण स्वयं किया जो कि उसकी आत्मनिर्भरता का सूचक है। चंचलो एक श्रमनिष्ठ तथा पतिव्रता स्त्री है, जो अपने पति व परिवार के प्रति पूर्णतः वफादार है। परंतु उसके पति के ही परिवार से जगदीश नाम का एक सिपाही जो उस पर बुरी नजर रखता था और उसे हर कीमत पर पाना चाहता था। वह इसके लिए उसके पति को जेल में बंद कैदियों के द्वारा रात को बुलाकर खेत में मरवा देता है और उसके एक हादसे का रूप देता है। परंतु इस विकट परिस्थिति में भी चंचलो अपनी अस्मिता को बनाए रखती है। रोशनी की मदद से दवाइयों की फ़ैक्ट्री में नौकरी पाने में समर्थ हो जाती है। चंचलो पड़ोसन ताई को बताती है—

“ताई मुझे जगदीश का किसी भी किस्म का अहसान मंजूर नहीं था। यह सबसे से चोरी छुपे मेरी मदद करके मुझ पर कब्जा करना चाहता था। जब मैंने उसे पूरी तरह से लताड़ दिया। मुझे अपने बच्चों का पेट भरने के लिए यह नौकरी करनी पड़ी।” (मचान 143)

अतः आर्थिक तौर पर आत्मनिर्भर होने के कारण एक और वह स्वयं जगदीश जैसे नीच भ्रष्ट व्यक्ति के शोषण से बच जाती है वहीं दूसरी और अपने परिवार का पालन पोषण करने में सक्षम हो जाती है। यह उसकी आत्मनिर्भरता का परिचायक है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास मचान में चंचल और रोशनी दो ऐसी नारियां हैं

जिन्होंने अपनी शिक्षा के दम पर अपनी वैयक्तिक व सामाजिक प्रतिष्ठा को स्थापित किया है और आर्थिक तौर पर आत्मनिर्भर बन पुरुषों के शोषण का शिकार होने से बच गई।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सुमित्रा एक सुशिक्षित कामकाजी नारी है। वह अपने कार्य अध्यापन के प्रति पूरी ईमानदार है। उसकी आर्थिक क्षमता उसे आत्मनिर्भर बनाती है वह अपने कार्य में तन्मयता के साथ ही अपने पारिवारिक कार्यों का कुशलता से निर्वहन करती है। जिससे घर की आर्थिक स्थिति में भी स्तंभ का कार्य करती है।

4.4.3 उचित साधनों द्वारा धनोपार्जन

धर्म के बाद द्वितीय स्थान पर अर्थ को महत्व की दृष्टि से रखा गया। ऋषि-मुनियों ने धन की जहाँ तीन गतियाँ बताकर उसके खर्च करने की बात कही, वही धर्म पूर्वक धनार्जन के लिए भी प्रेरित किया।

दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य। यो न ददाति न भुंक्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति ॥ (भर्तृहरि, नीतिशतक)

धन खर्च होने के तीन ही मार्ग हैं: दान, भोग व नाश। ये वित्त की तीन गतियाँ हैं। जो देता नहीं है तथा उसका उपभोग भी नहीं करता है, उसके वित्त की तीसरी गति अर्थात् नाश होता है। भारतीय चिंतन धन को साधन के रूप में अंगीकृत करता है साध्य के रूप में नहीं।

धन बिना संसार में कुछ काम चल सकता नहीं,

दुख के दृढ़ जाल से निर्धन निकल सकता नहीं ।

हो न सकता धर्म भी धन का बिना संग्रह किए,

नित्य वही निमित्त सब को याद करना चाहिए ॥

वैश्वीकरण के इस दौर में धन के अधिक बढ़ते महत्व के कारण मनुष्य धन को येन केन प्रकारेण अधिकाधिक अर्जित करना चाहता है। आधुनिक युग के व्यवसायिक ढांचे में धनार्जन के लिए रिश्वतखोरी बाजारीकरण, दिखावा, लालच और विलासिता धन के अनुचित संग्रह को प्रेरित करते हैं। अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में धनार्जन के दोनों ही प्रकारों उचित व अनुचित देखने को मिलते हैं। आज के युवाओं की नवीन आर्थिक चेतना नैतिकता को भी आड़े आने नहीं देती। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में स्कूल में पढ़ने वाली किशोरियां भी विलासिता पूर्ण जीवन जीने के लिए देह व्यापार का अवलंबन लेकर पैसा कमाती हैं। सैफी अपनी मैम को ऐसी लड़कियों का जिक्र करती हुई कहती हैं—

“मैम ये लड़की बहुत चलाक हैं। यह घर से ही अपनी बैग में जींस टॉप वगैरा साथ ले जाती हैं। वे किसी बस स्टैंड या रेलवे स्टेशन की लेडिज टॉयलेट में जाकर ड्रेस चेंज कर लेती हैं, फिर जल्दी से इन्हें कौन पहचान पाता है। एजेंट इन्हें कार में बैठाकर किसी होटल या दूसरी फिक्स की गई जगह पर ले जाते हैं, फिर स्कूल की छुट्टी टाइम तक फ्री होकर ड्रेस विद होकर अपने घर पहुँच जाती है। सन्नी तो यही बता रहा था कि जो स्कूल के गेट मैन है न, ये भी पैसे लेकर इन्हें स्कूल से खिसकने में हेल्प कर देते हैं।” (खिलने से पहले 46)

अमृतलाल मैदान के उपन्यास दूसरा अरुण में अरुण की माँ एक प्राइवेट स्कूल में अध्यापिका है। पिता कॉलेज में क्लर्क हैं। उसकी माँ की मूल्यवत्ता नहीं चाहती कि क्लर्क के बच्चे उन्हीं की तरह दमघोटू जीवन जीने के लिए मजबूर हो जाए। पारम्परिक व्यावसायिक मूल्यों के अंतर्गत ईमानदारी के मूल्यों का विशेष महत्व होता था परंतु बदलते आर्थिक मूल्य में ईमानदारी को एक अभिशाप बना दिया है। अरुण के पिता पर जब दलित व पिछड़े वर्ग की ग्रांट हडपने के आरोप लगते हैं, तो पति—पत्नी परस्पर उपालंभन देते हुए कहते हैं—

“अगर तुमने पहले दिन से रोका होता तो यह दिन न देखना पड़ता। झूठ बोलते है आप...मैंने तो कितनी बार झगडा भी किया आप से पर आप थे कि बढ़ते ही गए। यहाँ तक की शेयरों में भी पैसा लगाने लगे। तुम ही तो कहती थी शिला सोना महंगा हो रहा है, अरुण की दुल्हन के लिए खरीद रखो। कभी कहती फलां चीज ला दो, कभी...” (दूसरा अरुण 79)

अरुण के माता पिता की ऐश्वर्यपूर्ण जीवन जीने की चाह ने धनार्जन के उचित साधनों की अपेक्षा अनुचित साधनों का अवलंबन लिया जिसका परिणाम दुःखद रहा। उनका स्वयं का पुत्र ही उनसे नफरत करने लगा।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास मचान की पात्रा सुरंजनी ने भी तो अपना सब कुछ दांव पर लगा रखा था जगदीश को पाने के लिए। जगदीश का पहलवानी कसरती जिस्म, अच्छी जमीन का मालिक, बढ़िया घर, सरकारी नौकरी, ऊपर की कमाई के गप्फे, गाँव में पूरा पुलसिया रोबदाब। यह सब किसी भी सुरंजनी जैसी महत्वकांक्षी औरत के लिए काफी होता है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास बंद होते दरवाजे में उमाकांत और उनकी पत्नी जब कभी भी अपने पुत्र को मिलने दिल्ली जाते हैं। वहाँ पर उनकी पुत्रवधू को उनके आने पर खुश नहीं होती और वह लैपटॉप पर शेयर मार्किट में धन कमाने में ही लगी रहती है। वह अपना थोड़ा सा समय भी उनके साथ व्यतीत नहीं करती और न ही उनका मान सम्मान करती है। रीना के लिए रिश्तों से अधिक महत्व धन का है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास ककून में रमन का पोस्टमार्टम जल्दी करवाने वाले दर्जा चार का शुक्रिया करते हुए जोसेफ साहिब ने उसे सौ का नोट थमाया तो, उसने पकड़ने से इनकारी होते हुए कहा—

“साहिब, इतने में तो देशी की बोतल भी नहीं आती और देखो ना कितनी जल्दी काम निपटाया है आपका। बॉडी से ज्यादा छेड़छाड़ नहीं की। नशई आँखे वाले दर्जा चार का आशय समझ कर जोसिफ साहिब ने सौ का एक

और नोट उसके हाथ पर रख दिया। जैसे माथे से लगा शुक्रिया अदा करता वह पुनः अस्पताल के अंदर चला गया।”(ककून 74)

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'ककून' का पात्र विनोद जब अपने रिश्तेदार रमन की मृत्यु का प्रमाण पत्र लेने पुलिस थाने में जाता है तो उससे वहाँ मृत्यु प्रमाण पत्र देने के लिए भी रिश्वत ली जाती है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास मचान में सुरंजनी ने अर्थ की खातिर नारी से जुड़े लज्जा, सुशीलता व सदाचरण संबंधित मूल्यों को तार-तार कर डाला। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'ककून' में रिया अपने पति की मृत्यु के पश्चात जो कि एक सैनिक थे, उसकी जगह नौकरी मिलते ही पूर्णतः बदल गई। अपने अफसरों को हर कीमत पर खुश रखना उसके जीवन का एकमात्र उद्देश्य बन गया। उसके बदलते आर्थिक मूल्य किसी के भी प्रति ईमानदारी के मूल्यों का पालन नहीं करते हैं। वह जहाँ भी लाभ देखती है, वहीं झुक जाती है। वह किसी भी पुरुष के प्रति निष्ठा के मूल्य नहीं रखती। उसे तो मात्र नौकरी से मतलब है, न कि रिश्तों से।

4.4.4 धन का उचित उपयोग

भौतिकवादी चीजों के आकर्षण के कारण मनुष्य में धन संचय की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। अर्थ जो भौतिक आवश्यकता अर्थात् मानवीय जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन रहा है। वह वर्तमान जीवन का साध्य बनता जा रहा है। जिसके परिणामस्वरूप मानवीय संबंधों में बिखराव और अलगाव की स्थिति उत्पन्न होती जा रही है। रोजगार के क्षेत्र में स्वार्थ, भ्रष्टाचार, पक्षपात पूर्ण अनैतिक प्रवृत्तियों के उत्पन्न होने से सामाजिक मूल्य विघटित हो रहे हैं। समाज में संपत्ति, अर्थ अर्थात् धन का उत्पादन, वितरण और प्रयोग ऐसे तरीके से होना चाहिए कि मानव मात्र के लिए कल्याणकारी हो। मनुष्य के व्यक्तित्व के संपूर्ण विकास के लिए उसकी भौतिक तथा आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति अनिवार्य है। धन का अभाव मनुष्य के व्यक्तित्व को कुंठित कर देता है। वहीं धन व्यक्तित्व के निर्माण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सच तो यह है कि उचित आर्थिक व्यवस्था बौद्धिक, आध्यात्मिक, मानसिक एवं सांस्कृतिक विकास की प्रथम स्थिति है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास '...और कितनी' में शिवानी अपने पति कन्नू को विवाह के पश्चात पहले जन्म दिवस पर जब फूल देती है तो कन्नू शिवानी की भावनाओं को आहत करता है—

“उठो न देखो मैं आपके लिए क्या लाई हूँ... देखो...” सुनकर कन्नू ने अलसाई आंखें खोली। मिचमिचाती आंखों से मेरे हाथ में पकड़े बर्थडे केक और फूल की ओर देखा। ‘यह क्यों लाई.. मम्मी ने मना किया था न... मैंने समझा मेरे लिए लैपटॉप लाई हो।’ बडबडाते हुए कनु फिर आँखे बंद करके नींद में डूब गया।“(...और कितनी? 94)

यहाँ भौतिक चीजों के प्रति आकर्षित कनु अपनी पत्नी की संवेदनाओं की उपेक्षा करते हुए रिश्ते की डोर को कमजोर कर रहा है। आवश्यकता से अधिक संग्रहीत हो जाने वाला धन भी मनुष्य की चिंता का कारण बनता है। शादी के बाद घूमने जाने की इच्छा हर व्यक्ति की होती है। यही इच्छा शिवानी ने की और अपने पति कन्नू को अपने बॉस से घूमने के लिए अवकाश मांगने व घूमने का प्रबंध करने के लिए कहा। तो कन्नू अपनी इस जिम्मेदारी को टालता हुआ अपनी पत्नी की भावनाओं को नजर अंदाज करते हुए कहता है—

“नहीं—नहीं... तुम्हारी सिफारिश की जरूरत नहीं है... मैं खुद ही बात कर लूंगा... ऐसा करना कि अपनी कार मंगवा लेना... रोहित को भी कहना साथ चलें... मुझे तो ड्राइविंग आती नहीं न... जहाँ जाना है... उसे कहना, ऑनलाइन होटल की बुकिंग वगैरा करवा ले। सुनते ही मेरा माथा टनका। गाड़ी भी हमारी और पेट्रोल भी हमारा। मेरा और भी खून खोला उठा कि ड्राइविंग भी रोहित करेगा... होटल में ठहरने का खर्चा भी वही उठाएगा। खुद धेला नहीं खर्च करना चाहता... नियत नहीं है इस बंदे की।“(...और कितनी?97)

व्यक्ति धन अर्जन करता है अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, अपनी जीवन की आवश्यकताओं को संतुष्ट करने के लिए। यहाँ पर कन्नू ने अपने जीवन की आवश्यकताओं में भी धन का उपयोग करना उचित नहीं समझा, उल्टा वह

अपनी पत्नी के भाई को यह सब करने के लिए कहता है। जहाँ धन उसे स्वयं खर्च करना चाहिए था वहाँ पत्नी के भाई को खर्च करने के लिए कहता है। इससे शिवानी की भावनाएं भी आहत हुई हैं। यहाँ पर धन के उचित उपयोग विषयक आर्थिक मूल्य का विघटन हुआ है। शिवानी एक सुसंस्कृत बहू है। वह अपनी सास-ससुर का उचित मान-सम्मान व सेवा करना चाहती है। परंतु धन के नशे में अंधे हुए कन्नू के माता-पिता को कुछ भी दिखाई नहीं देता। सास महिन्द्रों अपनी बहू शिवानी के अच्छे स्वभाव और व्यवहार की उपेक्षा कर उसे दहेज के लिए उपालंबन देते हुए कहती है, तेरे माँ बाप ने मेरे बेटे की कदर नहीं की। कन्नू भी दहेज के लिय उसे उलहना देते हुए कहता है—

“तू मुझे पसंद नहीं है। तू मेरे मां-बाप की पसंद है। मुझे दहेज में कार नहीं दी। हनीमून मनाने के लिए हवाई जहाज की टिकट बुक नहीं कराई। जहाँ मैं शादी करना चाहता था वे मुझे क्लीनिक खोल कर देने वाले थे। कार लेकर देनी थी। तूने मेरी जिंदगी बर्बाद कर दी है।” (...और कितनी ? 120)

यहाँ धन के अनावश्यक संग्रह की चाहत आपसी रिश्तों में कड़वाहट का कारण बनती है व एक परिवार के सुख व शांति का अवसान कर देती है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सन्नी धनाढ्य परिवार का लाडला तथा सुविधा संपन्न लड़का है, जो धन के आकर्षण में लिप्त उसके माता-पिता के संरक्षण के अभाव में बिगड़ल हो जाता है। वह विद्यार्थी जीवन में ही नेट एडिक्शन का शिकार हो जाता है। उसका इलाज कराने लिए उसको अमेरिका ले जाया जाता है। हॉस्पिटल में उसका पिता धन का प्रभाव दिखाते हुए डॉक्टर से उसको ठीक करने के लिए कहता है। डॉक्टर सन्नी के पिता का धन की मदत का पर्दा उठाते हुए समझाता है—

“आप लोगों के साथ यही तो दिक्कत है, आप लोग हर काम पैसे के बल पर करवाना चाहते हैं। यह सब आपके पैसे का ही किया धरा है। डॉट माइंड, आपके पति पैसे के पीछे अपना परिवार भी भूल गए। पैसा बहुत कुछ हो सकता है, पैसा ही सब कुछ नहीं होता, पैसे से हर सुख नहीं खरीदा जा

सकता। सन्नी को आपके पैसे की कम, आपके प्यार और परवाह की ज्यादा जरूरत थी।”(खिलने से पहले 100)

डॉक्टर द्वारा सन्नी के माता-पिता को समझाया गया कि धन से अधिक बच्चों को माता-पिता के प्यार, परवाह और साथ की आवश्यकता होती है जो उन्हें अच्छा इंसान बनाने के लिए आवश्यक है।

आजकल धन की चाहत ने मनुष्य को इतना अंधा बना दिया है कि वह धर्म के नाम पर भी पैसा कमाने में पीछे नहीं हटता। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'आर्तनाद' में रोहित अपनी पत्नी चंदा को आश्रम के विषय में सावधान करता हुआ कहता है—

“साले खुद को भगवान का एजेंट समझते हैं, और बात-बात पर फीस वसूलते हैं। 'नाम' देने की अलग फीस, पंडाल में अलग-अलग कतारों में बैठने की अलग-अलग फीस। लूटते हैं, दोनों हाथों से ये लुटेरे। लुटे भी क्यों न। जब तुम्हारे जैसे बेवकूफ लूटने को तैयार हैं। देखो कोई कमी कहाँ है दुनिया में बस बेवकूफ बनाने वाले चाहिए।”(आर्तनाद 27)

धन की लोलुपता ने मनुष्य को इतना गिरा दिया कि वह किसी की मृत्यु पर भी पैसा कमाने का अवसर हाथ से नहीं जाने देता। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'ककून' में जब विनोद जोज़ेफ साहिब के साथ अपने रिश्तेदार रमन (जो कि एक फौजी था व एक विस्फोट में शहीद हो गया था) का पोस्टमार्टम करने के लिए डॉक्टर साहब को कहते हैं तो डाक्टर साहब मरीजों की लम्बी लाइन का हवाला देते हुए ईमानदारी प्रकट करता है यद्यपि इतनी लम्बी लाइन का कारण डाक्टर जी का भ्रष्टाचार था जो सरकारी कुर्सी पर बैठकर निजी फीस वसूल कर मरीजों को देख रहा था। अतः देश के जवान के जल्दी पोस्टमार्टम के लिए भी भ्रष्ट सरकारी डॉक्टर को भी रिश्वत अदा करनी पड़ी। डाक्टर का चपड़ासी विनोद को डाक्टर साहब की करतूत से वाकिफ करवाते हुए बताता है—

“प्राइवेट दिखाने के लिए 50 रुपए चाहिए, साहिब यहीं देख लेते हैं। घर पर जाने की जरूरत नहीं। जोज़ेफ साहिब की समझ में आ गया कि डॉक्टर

साहिब कुर्सी से उठना क्यों नहीं चाहते। मरीजों के इतने हमदर्द कैसे बन गए। उन्होंने फटाफट वहाँ खड़े मरीजों की गिनती की। पचास से गुणा किया और जेब से पाँच सौ रुपए वाली वही गढ़ी निकाली। दो नोट डॉक्टर के लिए और एक पचास का नोट चपरासी के सुपुर्द किया। चपड़ासी मरीजों को पीछे धकेलता हुआ अंदर डॉक्टर के पास गया और जल्दी ही लौट आया। साहिब कह रहे हैं, कि जल्दी से बिसरा के लिए प्लास्टिक की डिब्बियां खरीद लाओ। यही बाहर अस्पताल की कैंटीन में मिल जाएंगी। बॉडी पोस्टमार्टम रूम में रखवाओ। साहिब अभी आते हैं।”(ककून 73)

यहाँ जब विनोद व उसकी पत्नी रिया रमन का डेथ सर्टिफिकेट लेने जीवन मृत्यु रजिस्ट्रेशन ऑफिस में जाते हैं तो मुंशी कहता है कि एक्सीडेंटल केस का मृत्यु प्रमाण पत्र पुलिस स्टेशन में मिलेगा। पुलिस स्टेशन में स्थित मुंशी कहता है कि उस पुलिस स्टेशन और हॉस्पिटल से रिपोर्ट लेकर के आओ, जहाँ पहली बार मरीज को एडमिट किया गया था। जब विनोद व रिया उस एरिया के पुलिस स्टेशन में जाते हैं तो वहाँ का मुंशी बताता है कि कुछ नहीं साहब यह सब खाने-पीने के ढंग है।

“साहब, सब फिजूल होगा वहाँ हर बात पैसे से होती है, मैं तो यही कहूँगा कि वहाँ, जहाँ भी अड़चन आए, फीस ऑफर कर देना, झटपट काम हो जाएगा। वरना ऐसे ही घुमाएंगे सब हमारे जैसे नहीं हैं, बस यह मंत्र याद रखना।”(ककून 95)

आलोच्य उपन्यास में धन के लालच में ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, दयालुता, सहयोग आदि मूल्यों के विघटन को दर्शाने के साथ-साथ अर्थ सम्बन्धित मूल्यों श्रमनिष्ठा, ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, आत्मनिर्भरता आदि के महत्व को भी उजागर भी किया है।

4.5 तुलनात्मक निष्कर्ष

4.5.1 साम्य—

प्रथम— दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में श्रमनिष्ठा को एक महत्वपूर्ण मूल्य के रूप में अंगीकार किया है।

द्वितीय— आलोच्य उपन्यासों में दोनों ही उपन्यासकारों ने स्त्री की आत्मनिर्भरता को मजबूती के साथ उकेरा है।

तृतीय— दोनों ही उपन्यासकारों ने धन अर्जन के उचित और अनुचित तरीकों का वर्णन करते हुए धनार्जन के उचित तरीकों का समर्थन किया है।

चतुर्थ— दोनों उपन्यासकारों ने मूल आवश्यकताओं के लिए धन का उचित उपयोग न करने वाले व्यवहार की कठोर निंदा की है।

पंचम— दोनों उपन्यासकारों ने धर्म का चोला पहनकर आश्रम को बाजार बना देने वाले लोभियों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है।

4.5.2 वैषम्य—

प्रथम— धर्मपाल साहिल ने कन्या भ्रूण हत्या जैसे कुकृत्य के द्वारा धन अर्जन करने के तरीकों की निंदा की है। अमृतलाल मदान के उपन्यासों में इस प्रकार का विवरण नहीं है।

द्वितीय— अमृतलाल मदान ने पारिवारिक आर्थिक विषमता को प्रेम विवाह में बाधक दिखाया है। धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में ऐसा दृष्टांत नहीं मिलता।

तृतीय— धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यासों में स्त्री पात्रों द्वारा गलत तरीको से धन अर्जन को दिखाया है। अमृतलाल मदान के नारी पात्रों द्वारा उचित माध्यमों से धनार्जन को दिखाया है।

चतुर्थ— अमृतलाल मदान ने अपनी उपन्यास 'इति प्रेम कथा' में महंत के माध्यम से यह दर्शाया है कि किस प्रकार धार्मिक पत्रिका को अर्थ लाभ के लिए योग भोग का

तड़का लगा कर समाज को परोसा जाता है। धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में ऐसा चित्रण दिखाई नहीं देता।

वर्तमान युग में रिश्वतखोरी जीवन का एक अंग बन गई है। पूँजी के अति महत्व के कारण येन केन प्रकारेण पैसा इकट्ठा करने की होड़ लगी है। चपरासी से लेकर मंत्री तक सब इस प्रक्रिया में शामिल है। अमीर लोग रिश्वत देकर या उनकी पावर से अपने काम चुटकियों में कर लेते हैं। मध्यवर्ग कानून का डर दिखाकर, या रिश्वत देकर अपने काम निपटाते हैं लेकिन गरीब वर्ग वैसा ही गरीब रहता है। न वे रिश्वत दे सकते हैं, ना कानून का डर दिखा सकते हैं। वे तो सरकारी कार्यालय में चक्कर लगाकर मर जाते हैं। धन की अत्यधिक चाहत मनुष्य को मानव धर्म भूलाकर अँधा बना देती है। पैसे के लालची, भ्रष्ट व निकम्मे चपड़ासी से लेकर मंत्री तक सरकारी तन्त्र के लोग गिद्धों की भांति आम जनता को नोच डालते हैं।

पंचम अध्यायः

आलोच्य उपन्यासों में संवैधानिक व
राजनीतिक मूल्यों का तुलनात्मक
अध्ययन

पंचम अध्याय

आलोच्य उपन्यासों में संवैधानिक व राजनीतिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

भारतीय मुनि परम्परा राजनीति के विषय में गहन समझ रखती थी। राजनीति के पुरोधाय चाणक्य ने कहा है, राज्ञ धर्मिणी धर्मिष्ठाः पापे पापाः समे समाः। राजानमनुवर्तन्ते यथा राजा तथा प्रजाः।।(चाणक्य नीति 13/8) अर्थात् जो व्यवहार व चरित्र राजा का होता है, ठीक वैसा ही आचरण तात्कालिक समाज में प्रजा द्वारा किया जाता है। पराधीनता से मुक्त होकर लोकतंत्र की स्थापना के साथ ही भारतीय जनमानस ने एक आदर्श, सुखदायी, उन्नतिकारक राजनीति के स्वप्न देखने प्रारम्भ किये। भारतीय सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित करने में राजनीति का महत्वपूर्ण स्थान है। आजादी के बाद देश को सही ढंग से चलाने के लिए संविधान बनाया गया। लोकतांत्रिक व्यवस्था के बाद समाज में खुशी की लहर दौड़ी। हर इंसान सुख-शांति और समृद्धि के सपने देखने लगा। समय बीतने के साथ-साथ राजनीतिक लोगो के कथनी और करनी में दिन-रात का अंतर होने लगा। जनता की सब खुशी तब निराशा में बदल गई जब अपने ही देश के नेताओं ने राजनीति को भ्रष्टाचार से लिप्त कर दिया। वर्तमान राजनीति के भ्रष्ट स्वरूप के बारे में डॉक्टर रमेश देशमुख ने लिखा है—

“देश में बहुमुखी राजनीति का पतन हुआ है, उसने नैतिकता के सभी मूल्य ध्वस्त कर दिए। जनता के सभी मसले चाहे वे रोटी के हो, चाहे धर्म के, वोट की नीति से तय होने लगे। भ्रष्ट नेताओं ने अपने स्वार्थ के लिए राजनीति को भ्रष्ट कर दिया। सत्ता द्वारा भ्रष्टाचार और दुश्चरित्रता के संरक्षण एवं अपराध तथा राजनीतिक गठजोड़ ने जनजीवन में असहायता व असुरक्षा की भावना भर दी। वोट की राजनीति में संकीर्ण जातिवाद और गुटबंदी को भरपूर प्रश्रय दिया। परिणाम स्वरूप जनता का विश्वास भी इस प्रकार की संवैधानिक रक्षात्मक इकाइयों से उठ गया।”(आठवें दशक की हिंदी कहानी में जीवन मूल्य 146)

वर्तमान में राजनेताओं का ऐसा वर्ग तैयार हुआ जो लोक कल्याण की अपेक्षा व्यक्तिगत स्वार्थों को अधिक महत्व देने लगे, नैतिकता व ईमानदारी को भूलाकर जनता को लूटने लगे हैं।

नरेंद्र मोहन आज की राजनीति और भ्रष्टाचार पर लिखते हैं—

“राजनीति का उद्देश्य लोकतांत्रिक मूल्यों तथा आदर्शों का समर्थन करना होना चाहिए, पर ऐसा नहीं हो पा रहा। कहने को तो, अभी भी राजनीति का उद्देश्य लोक कल्याण है, लेकिन दुर्भाग्य है कि वर्तमान राजनीति ने अपने इस उद्देश्य और लक्ष्य का परित्याग सा कर दिया है और अब तो ऐसा लगता है कि उसने लोगों के स्थान पर संकीर्ण व निहित स्वार्थों की रक्षा करना सर्वोपरि मान लिया है।”(39)

नेताओ ने वोट विज्ञान को समझ लिया। वे कभी धर्म के नाम पर तो कभी जाति के नाम वोटों का ध्रुवीकरण करके जनता को लूटने लगे। स्वतंत्रता, देश-प्रेम, आत्मगौरव, समाजसेवा, देशभक्ति, कर्तव्यपरायणता, कर्मनिष्ठा, त्याग, समर्पण, निष्ठा आदि भारतीय पारम्परिक राजनीतिक जीवन मूल्य थे जिनका वर्तमान राजनीति में व्याप्त कालाबाजारी, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, जातिवाद तथा साम्प्रदायिकता के कारण प्रतिक्षण क्षरण होने लगा। आज आम जनमानस को राजनीति के नाम से भी घृणा होने लगी है। राजनीतिक मूल्यों के अवमूल्यन का यह विवरण सशक्त साहित्यकारों की लेखनी से कैसे अछूता रह सकता है। अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यासों में राजनीतिक मूल्यों के संक्रमण व विघटन को दर्शाया है।

5.1 संविधान का कोशगत अर्थ—

अभिनव शब्दकोश में ‘संविधान’ के अर्थ हैं—“घटना, राज्य घटना (मराठी में), आईना, दस्तूर।”(1)

नवल किशोर की पुस्तक 'नालंदा विशाल शब्द सागर' में संविधान का अर्थ है, "वह विधान या कानून जिसके अनुसार किसी राज्य, राष्ट्र अथवा संस्था का संघटन, संचालन और व्यवस्था होती है।" (1385)

किसी देश या राज्य द्वारा निर्धारित किये गए वे नियम जिसके अनुसार उस देश या राज्य का सुचारु ढंग से संचालन हो सके, उसे उस देश या राज्य का संविधान कहा जाता है। किसी भी राष्ट्र का संविधान उस देश की राजनीतिक व्यवस्था, न्याय व्यवस्था, नागरिकों के हितों की रक्षा करने का एक मूल ढांचा होता है, जिसके माध्यम से उस राष्ट्र के विकास की दिशा का निर्धारण होता है।

प्रत्येक देश का संविधान एक-दूसरे से भिन्न होता है क्योंकि प्रत्येक देश की सामाजिक व्यवस्था, परंपरायें, इतिहास और भौगोलिक संरचनायें भिन्न होती हैं। हर राष्ट्र अपनी जरूरतों और लक्ष्यों के अनुसार अपना संविधान का निर्माण करता है। भारत का संविधान लगभग 300 विद्वानों ने 2 साल 11 महीने 18 दिन रात-दिन मेहनत करके तैयार किया। भारत का संविधान दुनिया के संविधानों से सबसे बृहद् है। संविधान अंशतः परिवर्तनीय और अंशतः अपरिवर्तनीय है। अतः इस संविधान को लचीला और कठोर दोनों कहा जाता है। संविधान के अनुसार, भारतीय लोग सार्वभौम हैं। यह संविधान भारतीय लोगों ने तैयार किया है, स्वीकार किया है। संविधान ने अंतिम सत्ता लोगों को प्रदान की है।

भारतीय संविधान में प्रदत्त मौलिक अधिकार भारतीय जनता के सामाजिक, राजकीय एवं आर्थिक जीवन को दृढ़ता प्रदान करने वाले स्तम्भ हैं। भारतीय संविधान में लोगों को छह मौलिक अधिकार दिए हैं। संविधान के भाग 3 में सन्निहित अनुच्छेद 12 से 35 मौलिक अधिकारों के संबंध में है जो इस प्रकार है

समानता का अधिकार— जिसमें कानून के समक्ष धर्म, वंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध शामिल है, और रोजगार के संबंध में समान अवसर शामिल है।

स्वतंत्रता का अधिकार— भाषा और विचार प्रकट करने की स्वतंत्रता का अधिकार, जमा होने, संघ या यूनियन बनाने, आने-जाने, निवास करने और कोई भी

जीविकोपार्जन एवं व्यवसाय करने की स्वतंत्रता का अधिकार इसके अंतर्गत दिया गया है।

शोषण के विरुद्ध अधिकार— इसमें बेगार, बाल श्रम और मनुष्यों के व्यापार का निषेध किया जाता है।

धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार—आस्था एवं अन्तःकरण की स्वतंत्रता, किसी भी धर्म का अनुयायी बनना, उस पर विश्वास रखना एवं धर्म का प्रचार करना इसमें शामिल हैं।

सांस्कृतिक तथा शिक्षा सम्बन्धित अधिकार— किसी भी वर्ग के नागरिकों को अपनी संस्कृति सुरक्षित रखने, भाषा या लिपि बचाए रखने और अल्पसंख्यकों को अपनी पसंद की शैक्षिक संस्थाएं चलाने का अधिकार शामिल है।

संवैधानिक उपचारों का अधिकार— मौलिक अधिकार के प्रवर्तन के लिए संवैधानिक उपचार का अधिकार को इसमें शामिल किया गया है। संविधान की इन धाराओं के पालन से भारतीय जनता एवं देश में शांति, सुरक्षा, उन्नति, समता, ऐक्य, स्वातंत्र्य, बंधुता, न्याय, धर्मनिरपेक्षता जैसे संवैधानिक मूल्यों की निर्मिति हुई है।

5.2 संवैधानिक मूल्य

26 जनवरी, 1950 को भारतीय संविधान को लागू किया गया। भारतीय संविधान अमल में आने पर सभी भारतीयों के जाति, धर्म, पंथ, लिंग, प्रदेशातीत राजनैतिक आकांक्षा जागृत हुई। स्वातंत्र्य, समता, बंधुता और सामाजिक न्याय, एक आदमी एक मत, सभी को समान शिक्षा, समान अवसर इससे नारी-पुरुष समता के एक नए युग की प्रभात हुई। भारतीय संविधान केवल कानून विषयक श्रेष्ठ ग्रंथ नहीं है, बल्कि व्यापक व नवराष्ट्रीय तत्वज्ञान की रूपरेखा स्पष्ट करने वाला ग्रंथ है। अमृतलाल मदान और धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यासों में संवैधानिक मूल्यों की स्थापना का सफलतम प्रयास किया है।

5.2.1 स्वतंत्रता—मानव इतिहास में ऐसे बहुत सारे दृष्टांत हैं जब शक्तिशाली लोगों ने कुछ समुदायों का शोषण किया और उन्हें गुलाम बनाकर रखा, उनको अपने

आधिपत्य में रखा। लेकिन इतिहास में हमें ऐसे वर्चस्वों के खिलाफ शानदार संघर्षों के प्रेरणादायी उदाहरण भी मिल जाते हैं। भारतीय संवैधानिक मूल्य स्वतंत्रता के अनुसार भारतीय संविधान में विचार की स्वतंत्रता, भारत की सीमाओं के अंतर्गत संचार की स्वतंत्रता, भारत में कहीं भी रहने की स्वतंत्रता, व्यवसाय व व्यापार की स्वतंत्रता को स्थान दिया है।

5.2.2 न्याय— भारतीय संवैधानिक मूल्य न्याय के अनुसार लोगों के बीच विषमता दूर करके प्रत्येक व्यक्ति को उन्नति के समान अवसर उपलब्ध कराना है। समाजिक न्याय में जाति, धर्म, वंश, लिंग, संपत्ति और सामाजिक स्थान आदि के आधार पर भेद न करते हुए हर एक व्यक्ति का दर्जा या स्तर समान स्वीकार करना है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बायोस्कोप' में फौजी हंसराज के पूर्वजों का 500 एकड़ का जंगल जो वन विभाग द्वारा जब्त कर लिया गया था। फौजी हंसराज ने पेंशन आते ही न्यायालय की शरण लेकर उसको प्राप्त किया। यह एक संवैधानिक न्यायिक मूल्य है।

“आखिर फौजी की दीवानगी रंग लाई थी पूरे 12 साल बाद जंगलात विभाग के विरुद्ध मुकदमा जीतकर हंसराज रातों-रात इलाके का साहब बन गया था। हर समय उसकी आलोचना करने वाले भी उसके प्रशंसक बन गए थे। बधाईयां देने वालों ने उसका आंगन ही नीचा कर छोड़ा था।”(बायोस्कोप 136)

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'मचान' में जगदीश एक सिपाही है। वह अपनी पत्नी सुनन्या का शारीरिक और मानसिक तौर पर उत्पीड़न करता है, जिससे तंग आकर वह अपने मायके चली जाती है। रोशनी जो कि उसकी सहेली है सुनन्या को घरेलू हिंसा अधिनियम के विषय में बताती है। रोशनी की बातों से उत्साहित सुनन्या अदालत का आश्रय लेती है व न्याय प्राप्त करती है।

“इस एक्ट के अनुसार अदालत में यह साबित करना होगा कि जगदीश तुमको शारीरिक और मानसिक तौर पर प्रताड़ित करता है। एक बार यह साबित होने पर आपको वहीं अपने घर में या किराये पर जहाँ तुम चाहो,

पति के खर्चे पर आजाद रहने की सहूलियत मिलेगी। दूसरे उसे आपको व आपके बच्चों की परवरिश का खर्चा भी देना होगा। कानूनन अगर वह फिर भी आप पर हाथ उठाएगा या मानसिक तौर पर तंग करेगा, तो उसे जेल जाना पड़ेगा।” (मचान 196)

“रोशनी की सलाह अनुसार सुनयना ने जगदीश को आर्थिक चोट पहुंचाने के इरादे से, अपनी और बेटे की जान को जगदीश से खतरा बता कर किराये की व्यवस्था के लिए पाँच हजार रुपये की अतिरिक्त राशि की मांग की। जिसे अदालत ने देना स्वीकार कर लिया था। सुनयना के वकील की अपील पर जगदीश की ओर से हर महीने की दस तारीख तक बीस हजार रुपये सुनयना के बैंक खाते में आनलाईन भेजने के आर्डर करवा दिये थे।” (मचान 203)

इस प्रकार संविधान में शामिल न्याय मूल्य के कारण ही सुनयना न्याय प्राप्त कर पाती है।

5.2.3 बंधुता— भारत अनेक धर्म, जाति, पंथ के लोगों का निवास स्थान है। राष्ट्र की उन्नति के लिए उक्त विविधताओं में एकता का एकमात्र साधन बंधुता है। भारतीय जनता एकता में रहे, एक दूसरे पर विश्वास करें, सभी उन्नति करें, ऐसा बंधुता में अपेक्षित है।

5.2.4 समता— समता भारतीय संवैधानिक मूल्य है। जिसके अनुसार सरकार धर्म, जाति, वंश, लिंग व जन्म स्थान के नाम पर व्यक्तियों के मध्य भेद नहीं कर सकती। धर्मपाल साहिल व अमृतलाल मदान अपने उपन्यासों में जाति, धर्म में समता, स्त्री-पुरुष समता, अमीर गरीब की समता संबंधित मुद्दों को अपने उपन्यासों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। आलोच्य उपन्यासों में समता के लिए हानिकारक कारकों पर घोर प्रहार कर के समता का पोषण किया गया है।

धर्माधता के कारण जनमानस के परस्पर मधुर संबंध जो कई पीढ़ियों से बने हुए थे, सांप्रदायिक विद्वेष में परिवर्तित हो गए। प्रत्येक व्यक्ति भय और आतंक के साये में जीने को मजबूर हुआ, डरा हुआ, सहमा हुआ चौकन्ना हुआ सा दिखता है।

जब प्रत्येक भारतवासी दूसरे को भारतवासी न समझकर हिंदू या मुसलमान समझेगा तो एक न एक दिन हर कोई लंगड़ाता हुआ चलता दिखेगा या झुलसा हुआ।

अमृतलाल मदान के उपन्यास विराट बौना में डा० शर्मा निसार भाई को साम्प्रदायिकता के भयंकर अनुभव को साझा करते हुए कहता है—

“जानते हो मेरा सारा परिवार इस समय जम्मू के शिविरों में पड़ा है और यह भी बता दूँ कि हमारा घर फूंक डाला था, उन पाकिस्तानी प्रशिक्षण प्राप्त उग्रवादियों ने। हमारा कसूर इतना था कि हमने पंडितों की सुरक्षा के लिए आवाज उठाई थी। हमने उन्हें कहा था कि पंडित भी कश्मीर और कश्मीरियत का उतना ही अभिन्न अंग है जितना कि कश्मीर भारत का। पंडितों के बिना कश्मीर ऐसे लगेगा जैसे डल झील और झेलम नदी के बिना कश्मीर। उन्होंने कहा कि ठीक है फिर जाओ तुम भी उनके पास..... झुलसो जम्मू की गरमी में जा कर जल कर मरो यहीं। आधी रात को धू-धू जलते हुए मकान से परिवार के दूसरे लोग तो निकल आए किसी तरह से लेकिन मेरा छोटा भाई बशीर जो लकवा ग्रस्त होने के कारण चल नहीं पाता था वो... वो... मकान में ही....” (विराट बौना 164)

यहाँ पर संवैधानिक मूल्य, समता का विघटन हुआ है जो हमें धर्म, लिंग, जाति के आधार पर भेदभाव की स्वीकृति नहीं देता।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास ‘बायस्कोप’ में जातिगत विषमता पर कड़ा प्रहार करके संवैधानिक मूल्य समता का पोषण किया गया है। उपन्यास में पात्र मास्टर कुंज कुमार जी स्कूल के पौधों में पानी देने के लिए पानी लाने के लिए बच्चों को जब गाँव में भेजते हैं, तो एक पंडित जी बच्चों को कुएं से पानी नहीं भरने देते हैं क्योंकि उनमें कुछ दलित बच्चों भी शामिल थे और वह तर्क देता है कि उनके पानी लेने से कुआँ भ्रष्ट हो जाएगा, मास्टर जी पंडित जी को सबक सिखाते हुए कहते हैं—

“अच्छा अगर गरीब बच्चों के कुएँ से पानी भरने से कुएँ और आपका धर्म भ्रष्ट हो जाता है तो जरा यह बताना जब यही लोग आपकी दुकान से सौदा

लेने आते हैं, आप की दुकान पर बनी चाय आपके प्यालों में पीते हैं, तब आप भ्रष्ट नहीं होते। जब ये बच्चे एक साथ स्कूल में पढ़ते हैं तब स्कूल भ्रष्ट नहीं होते। जब माने जैसे लोग कमलों के साथ संबंध बनाते हैं, तब भ्रष्ट नहीं होते। कुएं से पानी लेने पर ज्यादा भ्रष्ट हो जाते हैं।” (बायस्कोप 81)

अमृतलाल मदान के उपन्यास ‘दूसरा अरुण’ में जातिगत विषमता की बड़ी समस्या छुआछूत को दर्शाया गया है। उपन्यास में पात्र राजू का पिता, राजू को बताता है कि दलित बस्ती की एक बारात ऊँची नाक वालों के मोहल्ले से गुजर रही थी। दूल्हे की घोड़े की पूँछ जब चौधरी की मूँछ से जा टकराई इसी पर विवाद हो गया।

“शहर की ऊँची नाक वालों के मोहल्ले से गुजर रही थी कि दूल्हे की घोड़ी की पूँछ किसी चौधरी के मुँह से जा टकराई। उसने तुरंत दूल्हे को गालियां देते हुए दो मुक्के जड़ दिए। बस फिर क्या था, गालियों का दौर लाठियों में बदल गया, पता नहीं कहाँ से कैसे एक गोली भी चली। घायल दुल्हा अस्पताल में पड़ा है और आग चारों तरफ फैलनी शुरू हुई है।” (दूसरा अरुण 56)

आलोच्य उपन्यास में संवैधानिक मूल्य ‘समता’ का अवमूल्यन हुआ है जिसके तहत जाति, धर्म, लिंग के आधार पर हम किसी के साथ भेदभाव नहीं कर सकते।

5.3 राजनीति शब्द का अर्थ

राजनीति शब्द अंग्रेजी के ‘पॉलिटिक्स’ शब्द का हिंदी पर्यायवाची है। जिसकी निष्पत्ति यूनानी भाषा के ‘पोलिस’ शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है— नगर अथवा राज्य। प्राचीन यूनान में छोटे-छोटे नगर राज्य अस्तित्व में थे। ये राज्य मानव सभ्यता के केंद्र माने जाते थे, जो अपने आप में पूर्ण और स्वतंत्र थे। इन नगर राज्यों से संबंधित विषय राजनीति या पॉलिटिक्स कहलाते थे। उस समय राजनीति में सभी प्रकार की आर्थिक, सामाजिक और नैतिक समस्याएं शामिल होती थी, शायद इसलिए अरस्तू ने नगर राज्यों से संबंधित पुस्तक का नामकरण ‘पॉलिटिक्स’

किया। अरस्तु के अनुसार एंथेस और सवार्टा जैसे नगर, राज्यों की प्रणाली का नाम ही 'पॉलिटिक्स' है। अरस्तु का अनेक विद्वानों ने अनुकरण किया लेकिन कालांतर में 'पॉलिटिक्स' शब्द के अर्थ में भिन्नता आने लगी। जैसे-जैसे नगर राज्यों का लोप होने लगा पॉलिटिक्स के अर्थ और भाव में भी परिवर्तन आने लगा और इसका स्थान विशाल राष्ट्रीय राज्यों ने ले लिया। और अब राज्य कही जाने वाली राजनीतिक ईकाइयों से संबंधित अध्ययन को राजनीति कहा गया। 'पॉलिटिक्स' शब्द का प्रयोग मूल यूनानी शब्द के रूप में भी किया जाए तो कोई आपत्ति नहीं होगी परंतु आधुनिक प्रयोग के कारण इस शब्द का नया अर्थ हो गया। आजकल 'राजनीति' शब्द का अभिप्राय सरकार के सामने आने वाली समस्याओं से लिया जाता है। जो प्रायः अपने स्वभाव में वैज्ञानिक दृष्टि से आर्थिक अधिक और राजनीतिक कम होती है।

वर्तमान परिवेश में पॉलिटिक्स शब्द का प्रयोग विभिन्न संदर्भों में भिन्न-भिन्न लिया जाता है। जिनमें आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक समस्याएं भी समाहित हैं। राजनीति का अर्थ व्यावहारिक राजनीति भी होता है। जिसमें देश और सरकार के सामने आने वाली सभी प्रकार की समस्याएं निहित होती हैं परंतु प्रत्येक देश की राजनीति और समस्याएं भिन्न-भिन्न होती है। भारतीय राजनीति शहरों से लेकर गाँव के गलियारों तक व्याप्त है। भारतीय राजनीति में नेता लोग चुनाव के समय लोगों को विभिन्न प्रकार के सपने दिखाते हैं और चुनाव के बाद उन्हें भूल जाते हैं। यही कारण है कि देश में बेकारी, गरीबी, स्वार्थ-लिप्सा भ्रष्टाचार पनपा है जिस से वर्ग संघर्ष की स्थिति बन गई है। स्वार्थ पर आधारित राजनीति देश के भविष्य को अँधेरे के गर्त में झोंक देती है। ऐसी राजनीति गरीब जनता का शोषण करती है। अतः प्रदेश में ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न होती हैं जिससे राजनैतिक मूल्यों में परिवर्तन होता है, जिसका प्रभाव समाज और साहित्य पर पड़ता है।

देश में लोकतंत्र की स्थापना से आम जनता में सुखद भविष्य के प्रति आशा और विश्वास का भाव उत्पन्न हुआ था। देश के कर्णधार नेताओं का सत्ता के प्रति अत्यधिक मोह, पद-प्रतिष्ठा, अधिकारों का अभिमान और दुरुपयोग, चारित्रिक अधःपतन के कारण उन नेताओं में देशभक्ति, जन-सेवा, त्याग, कर्तव्य आदि भाव

विलीन होने से देश के विकास की जो संभावनाएं दिखाई पड़ती थी वह सब धूमिल हो गई। नेताओं का ध्यान आमजन कल्याण से हटकर अवसरवादिता, लोभ, बेईमानी आदि अनैतिक और अमर्यादित तरीकों से सत्ता से चिपके रहने में ही केंद्रित रहा। कुछ नेक व ईमानदार नेताओं ने अपने आदर्शों और सिद्धांतों के अनुकूल जन सेवा करने का प्रयास भी किया तो ऐसे आदर्श नेताओं को भ्रष्ट नेताओं की कुटिल चालों में फंसकर अपने सिद्धांतों से हाथ धोना पड़ा।

राजनीति के पुरोधे नेता लोग जाति और धर्म—निरपेक्ष संविधान के बावजूद भी जाति और धर्म के नाम पर वोट बटोरने लगे जिससे समाज में जातिगत भेदभाव को विस्तार मिला। जातिगत भेदभाव का एक दुष्परिणाम यह हुआ कि दलित और शोषित जातियों पर ऊँची जातियों के लोग अत्याचार करने लगे। गाँव में विशेषकर जातिवाद पर आधारित राजनीति अमानवीय और विकृत रूप में उभरी। रविन्द्रनाथ मुखर्जी अपनी पुस्तक 'भारतीय सामाजिक मुद्दे एवं समस्याएँ' में लिखते हैं—

“निश्चित अर्थ में भारत जाति—प्रथा का आगार है। मुसलमान और ईसाई तक भी इसके पंजे में फंस चुके हैं, चाहे उनके यहाँ उसका स्वरूप ठीक वैसा न हो, जैसा हिन्दुओं या हिंदुस्तान की राजनीति में है। दूसरी बात यह है कि प्रारम्भ में जाति प्रथा इतनी जटिल न थी, जितनी कि बाद में हुई। समय के परिवर्तन के साथ इसका स्वरूप भी परिवर्तित होता गया और अंत में यह एक परिवार, धर्म और जाति पर केन्द्रित भी हो कर कुछ स्वार्थी नेताओं का स्वार्थ पूरा करने लगी। (16)

नेता लोग जहाँ स्वार्थ, अवसरवादिता, चारित्रिक पतन, आदर्शहीन, भ्रष्टाचार पूर्ण कार्यकलापों से संलिप्त हो गए। इससे राष्ट्रीय मूल्यों का पतन होना स्वाभाविक ही था। सरकारी तंत्र पर नेताओं और मंत्रियों की पकड़ ढीली पड़ने लगी। इसी कारण भ्रष्ट अधिकारियों व कर्मचारियों को पनपने का मौका मिला। पूँजीवादी प्रवृत्ति बढ़ने लगी जिसके परिणामस्वरूप अवैध कार्यों से धन—संचय की प्रवृत्ति और रिश्वतखोरी बढ़ी।

5.4 धर्म और राजनीति

धर्म मानव सुख का प्रतिष्ठापक है। मनुष्य की उत्तम व दूषित दो प्रकार की प्रवृत्तियां होती हैं। दूषित प्रवृत्तियों पर नियंत्रण कर उत्तम प्रवृत्तियों को अग्रसर करना ही धर्म का प्रधान कार्य है। धर्म के अंतर्गत ईश्वर की महत्ता स्वीकार की गयी है। लेकिन कुछ सत्तापरस्त नेता धर्म की आड़ में राजनीति का घिनौना खेल खेलते हैं। धर्म के नाम पर जो धार्मिक संगठन बने हैं उनमें भी राजनीति की जड़ें पनपती हैं और ये जड़ें कब राजनीति का बड़ा वृक्ष बनकर सामने आ जाती हैं, आम आदमी को इसका पता नहीं चलता। धर्म के नाम पर इकट्ठी हुई भीड़ में ये नेता लोग अपनी वोट को तलाशना शुरू कर देते हैं। जिस संत अथवा धर्म संरक्षक के पास अधिक भीड़ इकट्ठी होती है। नेता लोग तथाकथित संतों का आशीर्वाद लेने के लिए आश्रमों के चक्कर लगाते रहते हैं। संतो और राजनेताओं के इस घिनौने खेल में जनता दोनों तरफ से लुटती है। एक तरफ तो चरित्रहीन संतों का शिकार बनती है दूसरी तरफ भ्रष्ट राजनीति का। राजनीति का आशीर्वाद प्राप्त कुछ चरित्रहीन लोग, धर्म का चौला पहनकर आश्रमों में संत बन कर भोली-भालि जनता को लूटने का कार्य करते हैं। अनेक बार समाज में देखा जाता है कि यदि ये आडम्बरी कानून की गिरफ्त में आ भी जाएँ, तो नेता लोग इन आडम्बरियों का बचाने के लिए पूरा जोर लगा देते हैं।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'आर्तनाद' में एक आश्रम का तथाकथित संत, चंदा नाम की स्त्री को जब सामूहिक दुष्कर्म का शिकार बना देता है तो यह खबर आग की तरह सभी चैनलों पर फैल जाती है। एक चैनल का पत्रकार सत्ता पक्ष के नेता से तथाकथित संतों को बचाने वाली राजनीति के असली चेहरे को उजागर करता हुआ कहता है, "ऐसी भी चर्चा है कि इस कथित संत को बचाने के लिए आपके पार्टी के एक वरिष्ठ मंत्री ने पुलिस और प्रशासन पर दबाव बनाया, कहा तो यह भी जा रहा है कि अगर ज्युडीशियरि यानी अदालत इस घटना का कड़ा संज्ञान न लेती तो शायद यह केस रफा-दफा हो जाता।" (आर्तनाद 94)

अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'इति प्रेम कथा' में अमर पात्र के माध्यम से यह स्पष्ट करने का पुरजोर प्रयास किया है कि धर्म की आड़ में राजनीति का गन्दा खेल किस प्रकार खेला जाता है।

"क्यों, क्या हरिद्वार आश्रम में पूजा, संगतों की अंधभक्ति, अनपढ़ ढोंगी साधु-संतों के सम्मुख भी आँख मूंद कर दण्डवत् व समर्पण, बात बात पर गेरूआ रंग के पाँव पर साष्टाँग लेटना..... ये सब क्या है? धूर्त राजनीतिक लोग तो शिला पूजन, मंदिर-मस्जिद जैसे मुद्दे उछाल कर हज़ारों लाखों ऐसी दण्डवती भेड़ों को हाँक कर ले जाते हैं वधस्थलों की ओर..... मकतलों की ओर।"(इति प्रेम कथा 68)

ब्रह्माकुमारी आश्रमों में भी नेताओं की घुसपैठ रहती हैं। जिसे अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास इति प्रेम कथा में दिखाया है, अमर और सरिता के वार्तालाप के माध्यम से—

"ब्रह्माकुमारी आश्रमों में तो ऐसी कोई बात नहीं न। पर इसका भी उत्तर-आया, क्यों, क्या ब्रह्माकुमारियों ने कभी प्रखरता से डट कर विरोध किया उन मक्कार ढोंगी नेताओं का जो समाज में अशांति फैलाने में माहिर हैं। वे तो विश्व शांति सम्मेलनों तथा विश्व-प्रेम अधिवेशनों में ऐसे नेताओं को बुला-बुला कर उन्हें सम्मानित करती रहीं हैं और अपनी पत्रिकाओं में सगर्व उनके साथ खड़ी फोटो खिंचवाती रहती है। आज सुबह भी तो एक ऐसे ही नेता अधिवेशन के समापन के अवसर पर आमंत्रित थे। अपने समापन भाषण में उन्होंने समाज सेवा से अधिक धर्म सेवा पर बल दिया और अपने एक विशेष धर्म को ही राष्ट्र की रीढ़ बताया। मिस्टर अमर क्या तुमने सहर्ष उनके हाथों से विशिष्ट पुरस्कार ग्रहण नहीं किया? क्या तुमने उनके कट्टर विचारों का विरोध करने को साहस जुटाया कभी?"(इति प्रेम कथा 98)

यहाँ राजनीति के ईमानदारी व न्याय के मूल्य का अवमूल्यन हुआ है। आम जनता अपने नेता का चयन इसलिए करती है ताकि उनको सुरक्षा व न्याय मिलने

में यदि कोई व्यवधान हो तो वे अपने नेता के माध्यम से अपनी आवाज बुलंद कर सके।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'आर्तनाद' में आश्रम के संत के खिलाफ जब पुलिस अपनी कारवाही को रोक देती है तो चंदा का पति रोहित अपने दोस्त सोम के साथ अपने क्षेत्र के एक नेता जी के पास पुलिस पर जाँच करने का दबाव बनाने की गुहार लगाता है। नेता जी को एकांत में पूरी घटना से अवगत कराया जाता है। नेता जी उनकी कथित घटना को ध्यानपूर्वक सुनने के बाद कहते हैं— "धार्मिक हस्ती है, इलेक्शन सिर पर हैं, मैं ओपनली कोई दखल नहीं दे सकता।" (आर्तनाद 68) नेता जी का यह उत्तर राजनीति के उस कर्तव्यनिष्ठता के मूल्यों का अवमूल्यन है जिसकी शपथ लेकर ये लोग राजनीति की सीढ़ी चढ़ते हैं। नेता जी का उत्तर जनमानस के मन में राजनीति की वह घटिया मिशाल पेश करता है जो अपने वोट बैंक के लिए कोई भी कुकृत्य करने व देखने में तनिक भी नहीं पसीजते। सोम गुस्साए अपने मित्र रोहित को ऐसे नेताओं की वास्तविकता को बताता हुआ कहता है—

"वह तो मुझे पहले ही पता था, इन तिलों से तेल नहीं निकलने वाला। यह सब अपना वोट बैंक देखते हैं, आम जनता के हमदर्द बनकर बेवकूफ बनाते हैं, ये नेता, इन्हें किसी के दुख दर्द से क्या लेना। अपना राजनीतिक फायदा होना चाहिए ऐसे करैक्टरलैस लोगों के आशीर्वाद से। बेड़ा गर्क कर के रख दिया है स्वार्थी और मौकापरस्त राजनीति ने।" (आर्तनाद 68)

यहाँ राजनीति के न्याय मूल्य का विघटन नेता जी के वोट बैंक को सुरक्षित रखने वाले नजरिये से स्पष्ट अवलोकित होता है। इनकी वोट सुरक्षित रहनी चाहिए, जनता व उनकी समस्याएं जाएँ भाड में।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'एक अधूरी प्रेम कथा' में भारतीय राजनीति के विषय में अमर पात्र अपनी प्रेमिका से कहता है—

"सरि मैं सोचता हूँ कि हमारी राष्ट्रीय संस्कृति साँझी संस्कृति है कम्पोजिट कल्चर, ...और धर्म निरपेक्ष, जनवादी राजनीति ही इस संस्कृति का पोषण

कर सकती है। आजकल गौ-हत्या विरोधी आंदोलन की आड़ में कुछ फासीवादी शक्तियों तथा कुछ गौ-हत्यारे अल्पसंख्यकों की निन्दा करता हूँ और मैं अपने इन विचारों से उतना ही प्रतिबद्ध हूँ जितना तुम्हारे प्रेम के प्रति.... क्योंकि मानवता में तथा जीवन में जो कुछ सुंदर है, श्रेष्ठ है, उच्चतर है, वह प्रेम के रास्ते से ही गुज़र कर प्राप्त कर सकना संभव है न कि नफ़रत और शोषण के रास्ते से। संकीर्ण, संकुचित राष्ट्रीयता और साम्प्रदायिकता का विरोध मेरे मन, हृदय और आत्मा की पुकार है और मेरे अस्तित्व के रोम रोम से फूटता तुम्हारे प्रति प्रेम ही उसका आधार है।”(एक अधूरी प्रेम कथा 79)

यहाँ धर्मनिरपेक्षता, साम्प्रदायिक सद्भावना, जनवादी राजनीति, मानवता आदि मूल्यों का पोषण अमर नामक पात्र के माध्यम से किया गया है जोकि भारत के राजनीतिक मूल्य हैं।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'अमर प्रेम कथा' में आश्रम के मुखिया विश्व प्रेमानंद अमर को स्वामी निर्लेपानंद द्वारा धर्म में राजनीति को शामिल करने के विषय में चिंता व्यक्त करते हुए कहते हैं—

“ठीक है निर्लेपानंद जी, इस आश्रम में इस मिशन का तेज़ी से आधुनिकीकरण चाहते हैं लेकिन इसका मतलब यह तो नहीं कि.....। आधुनिक संत भी यदि हाईटैक होने लगेंगे तो नैतिकता भी हाईजैक होने लगेंगी, अमर जी। स्वामी जी कुछ क्षण मौन रहे फिर बोले, सामने उन पर्वतों को देखो.... उनकी आदि-गुफाओं में बैठे आज भी सच्चे तपस्वी तप कर रहे हैं क्या उन्होंने हाईटैक किया है अपने को, क्या अपनी पवित्र गुफाओं को बाज़ार बना दिया है। धर्म व नैतिकता के मूक संदेश वहीं से आते हैं। अमरनाथ जब-जब हिमालय के मूक पर्वतों को देखता, मौन रह जाता। उनकी भव्यता देखकर उनकी शालीनता देखकर। वह अब भी मौन रह गया।”(अमर प्रेम कथा 118)

स्वामी जी की बात सुनकर अमर कहता, "स्वामी जी क्षमा करें, मैं आपके इस मिशन से इसलिए जुड़ा हूँ कि इसमें किसी प्रकार की राजनीति.....।"(अमर प्रेम कथा 118) अमर की इस बात के प्रति उत्तर में विश्व प्रेमानंद जी अपनी दुविधा के विषय में बताता है—

"हम संतो में भी विभिन्न प्रकार की लॉबीज हैं..... एक लॉबी है जो मिशन को धार्मिक उन्माद के राजनीति आंदोलन की ओर धकेलना चाहती है। दूसरी लॉबी मिशन को बाज़ार बना देना चाहती है..... तीसरी प्रकार की लॉबी केवल आध्यात्मिक कृत्यों तक सीमित रहते हुए पूरी तरह धर्म—निरपेक्ष रहना चाहती हैं। मुझे कई बार न चाहते हुए भी..... स्वामी जी सिंहासन की दुविधा व्यक्त कर रहे थे। आध्यात्मिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए भी सांसारिक लॉबियाँ हैं।"(अमर प्रेम कथा 118)

यह बात सुनकर अमर कहता है "वाह! लेकिन स्वामी जी, हमारे पथ—प्रदर्शक तो वे दिवंगत महान आत्माएं हैं। वे सद्गुरु जन हैं, जो पूर्णतया गैर—राजनीतिक रहे हैं। यहाँ तक कि आज़ादी के आंदोलन से भी नहीं जुड़े सिद्धान्तवश।"(अमर प्रेम कथा 118)

धार्मिक परम्परागत मूल्यों के अनुसार धर्म में राजनीति का कोई हस्तक्षेप नहीं होता था। धार्मिक कार्य केवल अध्यात्म से जुड़े होते थे जो मनुष्य को आत्मिक शांति प्रदान करते थे और उचित पथ प्रदर्शन करते थे। यहाँ विश्व प्रेमानन्द धार्मिक परम्परागत मूल्यों के पक्षधर है वहीं आधुनिकता से प्रभावित निर्लेपानंद धर्म में राजनीति और बाजार को शामिल करना चाहता है जो कि धार्मिक तथा राजनीतिक दोनों प्रकार के मूल्यों का संक्रमण तथा विघटन हैं।

5.5 धर्मनिरपेक्षता व सांप्रदायिकता

भारतीय संविधान में वर्णित धर्मनिरपेक्षता एक ऐसा राजनीतिक मूल्य है जो प्रत्येक धर्म का मान—सम्मान करने व सभी धर्मों को समता प्रदान करता है। संविधान की दृष्टि में सभी धर्म समान है कोई भी व्यक्ति किसी भी धर्म को अपनाने में स्वतंत्र है। सरकार किसी धर्म विशेष के नाम पर कोई भी भेदभाव किसी के साथ नहीं कर

सकती। संविधान की नजर में सभी धर्म समान है। कुछ धार्मिक संस्थाएं धर्म के विषय में जनमानस में कट्टरता उत्पन्न कर देती हैं जिसका फायदा ये नेता लोग अपनी राजनीति को चमकाने के लिए करते हैं। हिंदू, मुस्लिम और सिक्खों के नाम पर वोटों का ध्रुवीकरण कर ये नेता लोग सत्ता का सुख भोगते हैं। जनता आपस में लडती रहती है। राजनीति कभी मस्जिद के मुद्दे पर कभी मंदिर के मुद्दे पर अपना अस्तित्व बरकरार रखना चाहती है। नेता धर्म के सहारे अपना वोट पक्का करते हैं। धर्म चाहे वह हिंदू धर्म हो या मुसलमान धर्म मानवता व नैतिकता का पाठ पढ़ाते हैं लेकिन धर्म में निहित संस्कारों व उनकी प्रेरणाओं को ताक पर लगाकर राजनेता जनता को हिंदू पार्टी का या मुसलमान पार्टी का ही बना देना चाहते हैं। अमृतलाल मदान के उपन्यास 'विराट बौना' में प्रोफेसर मिश्रा धर्म के नाम पर होने वाली राजनीति के विषय में अपने किरायेदार विमल को बताते हैं, "इन लोगों की मंदिर बनाने में इतनी रुचि नहीं जितनी मस्जिद को तोड़ने में है। सब राजनीति का खेल है ...। और वो भी बहुत खतरनाक... दूर ही रहना इनसे।" (विराट बौना 90) जब नेता लोग धर्म के साथ-साथ राजनीति करना चाहते हैं तो दोनों ही जटिल हो जाते हैं और अर्थहीन बन जाते हैं। अमर आज अच्छी तरह बहस के मूड में था वह दीनदयाल से पूछता है यह आपका सांस्कृतिक संगठन है या राजनीतिक संगठन है। नाम से स्पष्ट है सांस्कृतिक संगठन है। दीनानाथ अब हिंदी अच्छी बोलने लगे थे और उनका उच्चारण भी शुद्ध होता था इस उच्चारण में अमर को एक विशेष प्रकार की ध्वनि सुनाई देने लगी जिसे हर संघ सेवक के स्वर में सुनता था हमारे लिए धर्म राजनीति का ही अंग है दीनानाथ ने यही बंद करते हुए कहा।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'विराट बौना' में प्रोफेसर मिश्रा विमल जी को धर्म की आड़ में होने वाली सांप्रदायिकता पर सावधान करता हुआ कहता है, "देखो मैं हिंदी के प्राध्यापक होने के नाते एग्जाम में राम को भी पढ़ाता हूँ और पढ़ाते हुए मैं रस विभोर हो जाया करता हूँ किंतु इन प्रदर्शनों, आंदोलनों और यात्राओं में मेरा विश्वास बिल्कुल भी नहीं। राजनीति से प्रेरित हैं, ये सब।" (विराट बौना 12)

प्रोफेसर मिश्रा विमल की पत्नी सरस्वती से मंदिर निर्माण के विषय में राय लेते हैं तो उनका तर्कसंगत उत्तर कट्टरता पर प्रहार करता हुआ सांप्रदायिक

सद्भावना की प्रेरणा देता है। "बने, क्यों नहीं बने... पर लाशों के ढेर पर नहीं, न ही मलबे के ढेर पर, एक मंदिर जैसी शांत पवित्र जगह के लिए इतना शोर शराबा या खून खराबा क्यों? उसी से थोड़ा हटकर भी तो....."(विराट बोना 18)

उक्त उपन्यास में सरस्वती और मिश्रा जी के माध्यम से धर्म निरपेक्षता और साम्प्रदायिक सद्भावना के महत्व को उजागर किया है जो कि भारत जैसे बहुधर्मी देश की शांति व्यवस्था के लिए अति आवश्यक है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'बंद होते दरवाजे' में उमाकांत व उसकी पत्नी रमा जब संत शांतानंद की शोक सभा में शामिल होते हैं। संतो के दो गुट, जिसमें एक सांप्रदायिक सद्भावना के समर्थक था और दूसरा जो सांप्रदायिक कट्टरता का, दोनों गुटों की आक्रामकता से सबक लेती हुई रमा कहती है—

"मैं फिर अशांत हो उठी। कहाँ है हमारे पीछे-पीछे आनंद, स्वामी जी? मैंने समाधि पर जाकर पूछा," हमारे तो आगे भी राजनीति है और पीछे भी राजनीति।" तभी समाधि से परिचित स्वर आता सुनाई दिया "जब-जब गेरुआ चोला राजनीति का झंडा उठाएगा तब तब समाज में अशांति फैलेगी और शोक व्यापेगा।"(बंद होते दरवाजे 123)

सांप्रदायिकता ने बीसवीं सदी के हमारे इतिहास को गहराई से प्रभावित किया है। भविष्य में इससे खतरे कम होते दिखाई नहीं देते। इसी तरह से 'विराट बोना' उपन्यास के माध्यम से उपन्यासकार हमें चेतावनी देना चाहता है कि हमारी वास्तविक समस्या तात्कालिक और बाहर की नहीं बल्कि भीतरी और ऐतिहासिक है। सांप्रदायिकता को निसार भाई के शब्दों में बड़ी सुंदरता से बताया है—

"देखिए हर छोटी-बड़ी कॉम अपनी अलग पहचान बनाए रखने के लिए हिंसक और शांतिपूर्ण संघर्ष करती ही आई है जैसे सिखों ने पंजाब में किया और आजादी के लिए भी संघर्ष होते आए हैं जैसे हम सब ने मिलकर अंग्रेजों के विरुद्ध किया साथ में मुसलमानों ने अपनी पहचान के लिए पाकिस्तान.."(विराट बोना 78)

सांप्रदायिकता बाहरी जीवन को तो नष्ट और भ्रष्ट करती ही है आंतरिक संबंधों में भी जहर घोलती है। अमृतलाल मदान के उपन्यास 'विराट बौना' में चंद्रेश और निशान एक दूसरे से मिलना शुरू कर देते हैं। चंद्रेश तो हिंदू है और निसार अहमद मुसलमान लेकिन दोनों ही कश्मीर में फैली सांप्रदायिकता की आग में झुलसे हुए और ना जाने कब कश्मीर के सौंदर्य को याद करते करते एक दूसरे के करीब आ जाते हैं। यह बात उनको इतनी महसूस नहीं होती जितनी कि हिंदू संगठन वालों को, जो इस प्रकार व्यक्त करते हैं।

“यानी एक हिंदू और दूसरा मुसलमान।”

भारतीय संस्कृति और संगम संस्कृति वाले इन दोनों को अलग करना चाहते हैं।

“देखिए यह निसार और चंद्रेश का निजी मामला है।” मैंने कहा ।

“नहीं, यह एक सांस्कृतिक और धार्मिक मामला भी बनता है।”

“और राष्ट्रीय अखंडता का भी।”(विराट बौना 67)

अलग-अलग संप्रदाय के लोगों में यदि सौहार्द की भावना जाग भी जाए और वो भाईचारे की मिशाल पेश भी करना चाहे तो ये धर्म के ठेकेदार उसमें जहर घोलने का काम करते हैं। जैसा कि संस्कृति संगम वालों ने किया और निसार व चंद्रेश को भविष्य में न मिलने के लिए चेतावनी दे डाली।

“इसका 'महिवाल' भी इसी देश का है..... कभी-कभी आया करता है इस से मिलने... लेकिन है मुसलमान...” मैंने बताया।

“मुसलमान है तो क्या हुआ... अगर इससे प्रेम करता है तो...।”

“वह तो सब ठीक है महेश, लेकिन संस्कृति संगम वाले धमकी दे गए हैं इनका मेलजोल बंद होना चाहिए।”(विराट बौना 98)

अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'विराट बौना' में साम्प्रदायिकता पर कड़ा प्रहार करते हुए 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को स्थापित करने का सफलतम

प्रयास किया है। उन्होंने राष्ट्र को मजबूत बनाने के लिए एकत्व का संदेश अपने उपन्यास के पात्रों के माध्यम से दिया। "राष्ट्र की रक्षा के लिए सेनाओं की आवश्यकता होती है और एक ऐसे राष्ट्र को भी जो सारे देशवासियों की मजबूत संगठन हो... न कि सांप्रदायिक, भाषाई या अन्य किसी आधार पर एक दूसरे के शत्रु बने संगठन का परस्पर युद्ध समूह।" (विराट बौना 96)

इतिहास में जब-जब जनमानस ने इन सांप्रदायिक शक्तियों को कुचलने के लिए आवाज बुलंद की तो उनकी जुबान काट दी गई कदम उठाया तो उनका पैर काट डाला और यदि विविधता में एकता दर्शाने का प्रयास किया तो आंखें निकाल डाली, जैसा कि पंजाब में महेश के साथ हुआ। "विविधता में एकता का नारा देता है। उड़ा दो इस गद्दार का भी सिर। यही आवाज फिर कड़की तलवार लहराई... 'छपाक' फिर हुई।" (विराट बौना 75) राम मंदिर के निर्माण को लेकर विमल मिश्रा को गुस्से में कहता है "राष्ट्रद्रोही, मंदिर निर्माण का विरोध करते हो? आवाज फिर कड़की। "निर्माण का विरोध नहीं करता मैं। हाँ, इतिहास में ढांचे को गिराने का विरोध...।" (विराट बौना 83)

साम्प्रदायिक कट्टरता का विरोध तथा साम्प्रदायिक सद्भावना को उजागर करने का प्रयास 'विराट बौना' उपन्यास में किया गया है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'अमर प्रेम कथा' में साम्प्रदायिक सद्भावना और धर्म के विषय में पात्र अमर और सरिता का वार्तालाप है—

"तुम एक ओर तो धर्म-अध्यात्म और भाग्य-ईश्वर को नहीं मानते दूसरी ओर भजन लिखते भी हो और गाते भी हो। यह कैसा विरोधाभास है, नहीं सरि कोई विरोधाभास नहीं। मैं तो बस धर्म के सांप्रदायिक रूप का विरोधी हूँ न कि आध्यात्मिक रूप का। जहाँ तक संकीर्तन का प्रश्न है तो उसे सुनना मेरी रूहानी खुराक है और भजन लिखना मेरा रूहानी शौक। लेकिन सेक्यूलर विचारों वाले तो गुरुडम में भी विश्वास नहीं रखते। हाँ बहुत से सेक्यूलर लोग नहीं करते। लेकिन मैंने इन सद्गुरुओं की जीवनियाँ पढ़ी हैं। अमर ने गुरु-स्वरूपों की ओर नमन किया। वे सब तप और त्याग की मूर्ति थे।

साम्प्रदायिक जातीय नफरतों से कोसों दूर। मानव-प्रेम और विश्व-बंधुत्व के भावों से ओत प्रोत। वे मानव-मन की विकृतियों को दूर करने के पक्ष में थे न कि कुछ राजनीतिक व ऐतिहासिक विकृतियों को। तभी वे श्रद्धेय है।” (अमर प्रेम कथा 119)

यहाँ पर सर्वैधानिक मूल्यों धर्मनिरपेक्षता, समानता आदि को प्रतिपादित किया है, जो कि लोकतान्त्रिक देश के लिए आवश्यक राजनीतिक मूल्य हैं।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'एक अधूरी प्रेम कथा' में राजनीतिक शोषण, साम्प्रदायिकता के निवारण में एक लेखक की भूमिका से अवगत करवाया गया है। "सांप्रदायिकता, शोषण और भ्रष्टाचार के खिलाफ कविताएँ लिख बोल कर, लेख और साहित्य लिखकर। यह ठीक है कि मैं झोला लटकाए और दाढ़ी बढ़ाए गाँव गाँव नहीं घूमता फिरा लेकिन अपनी क्षमताओं और सरकारी नौकरी की सीमाओं के बावजूद भी मैंने जो कुछ किया...अच्छा अच्छा लेखक महोदय...(एक अधूरी प्रेम कथा 127)

जनता को समाज की बुराईयों के प्रति जागरूक करने और समाज सुधार के लिए प्रेरित करने में लेखकों की रचनाओं का महत्वपूर्ण योगदान होता है। साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज में नये मूल्यों की स्थापना और पुराने मूल्यों के संक्रमण और विघटन को लेखक अपनी रचनाओं में लिख पाठकों को अवगत करवाता है।

5.6 अवसरवादिता व राजनीति

वर्तमान राजनैतिक परिस्थितियां पूर्णतया बदल गई हैं। राजनेता देश के प्रति अपना कर्तव्य भूल कर अवसरवादी हो चुके हैं। वास्तविकता तो यह है कि ये लोग झूठे आश्वासन देते हैं और आम जनता भी इन आश्वासनों की अभ्यस्त हो चुकी है। इन नेताओं की कथनी और करनी में दिन-रात का अंतर आ गया है। राजनीति में व्याप्त अवसरवाद, पद की चाहत, नारेबाजी, भ्रष्टाचार नेताओं की अकर्मण्यता के सूचक हैं। नेता संस्कृति, जनता, जीवन इत्यादि बड़े-बड़े आदर्शों की बात करते हैं पर वास्तव में पद-प्रतिष्ठा, यश-मान और धन के भूखे और अवसरवादी हैं, बरसाती

मेंढक के समान। इनके स्वार्थ के समक्ष देश का गौरव तुच्छ है। राजसत्ता अवसरवादी और स्वार्थी लोगों के हाथों में आने से राजनीतिक जीवन मूल्य में गिरावट आई है। ये सत्ता के भूखे भेड़िये लाभ का अवसर कभी नहीं चूकते। आम जनता जिस राजनीतिक पार्टी के विपक्ष में अपना मतदान करती है, मौका मिलते ही चुना गया विधायक जनता के विचार धारा के विपरीत वाली पार्टी में अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु जा मिलता है। राजनीतिक पार्टियां भी, यदि विधायक कम रह जाएं तो पैसों के द्वारा विधायकों की खरीद-फरोख्त में तनिक भी शर्म नहीं करती।

धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'बॉयस्कोप' में राजनीति की अवसरवादिता पर कठोर प्रहार किया है। नेता लोग आम जनता से झूठे वादे करके वोट वसूलते हैं। समय आने पर उनकी मूल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भी उनके पास समय नहीं होता।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बायोस्कोप' में दुकान वाला पंडित जी मास्टर जी को गांव में गर्मी के दिनों में पानी की किल्लत से जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उसके विषय में अवगत कराता हुआ कहता है—

“दुकान वाले पंडित जी ने बताया कि गर्मियों में अक्सर ऐसा ही हाल होता था, लेकिन इस बार तो हद ही हो गई थी। इन कुदरत के मारे लोगों की समस्याओं के बारे में किसी ने नहीं सोचा था। तराई के इलाके में पानी की कोई कमी नहीं थी, इधर भी डीप वेल खुदवा कर बोर द्वारा पानी की सप्लाई की जा सकती थी। लेकिन लीडर थे कि पांच साल में एक बार जोगिया फेरी देते। वोट लेते। जितते। मंत्री पद प्राप्त करते। पांच साल ईद के चांद बन जाते। वे और उनके मातहत अफसर गर्मियों की छुट्टियां बिताने किसी हिल स्टेशन पर चले जाते जनता से तो उनका सिर्फ वोट लेने तक का ही रिश्ता था।” (बायोस्कोप 75)

नेताओं की अवसरवादिता यहाँ स्पष्ट दिखाई देती है। जनता की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करना नेताओं का फर्ज होता है परन्तु आजकल वे अपने फर्ज

भूलते जा रहें हैं और केवल अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए अवसरों की ताक में रहते हैं।

5.7 भ्रष्ट राजनीति

भौतिक स्पर्धा और वर्तमान परिवेश ने व्यक्ति को भ्रष्टाचार की ओर अग्रसर किया है। इसी के फलस्वरूप आज मानवीय मूल्यों का अवमूल्यन हो रहा है। विडंबना यह है कि आज वस्तुओं पर मूल्य अंकित नहीं होते, प्रत्युत व्यक्तियों पर लिखे होते हैं। आज के नेता, बुद्धिजीवी, पत्रकार लगभग सभी पैसों से खरीदे जा सकते हैं, उनकी दरें अलग-अलग हैं। भ्रष्टाचार के इस युग में प्रतिभा और योग्यता को नजरंदाज किया जा रहा है। अधिकांशतः कार्यो का संपादन रिश्वत व सिफारिश से होता है और पैसे को ही प्रतिष्ठा का मापक माना जाने लगा है। भ्रष्ट राजनेता जनतंत्र के माथे पर कलंक हैं। यह जनता का रक्तपान करके विलासितापूर्वक जीवन जीते हैं।

डॉ. विपिन गुप्ता हिन्दी नाटक में समसामयिक परिवेश में लिखते हैं—“हम एक अँधेरी गली में प्रविष्ट हो चुके हैं, जहाँ फिसलन है और उजाला दिखायी नहीं देता। यदि राजनेता अपराधी, भ्रष्ट, स्वार्थी और सत्तालोलुप हों, तो वे जनकल्याण का साधन कैसे बन सकते हैं।”(16)

समकालीन राजनीति में सत्ता का महत्व बढ़ गया है। राजनीतिज्ञों को चारों ओर कुर्सी ही दिखाई देती है परंतु कुर्सी से जुड़े कर्तव्यों की उनको तनिक भी चिंता नहीं। एक बार वोट हासिल करके जीतने के उपरांत, आम आदमी की विपत्तियों से उसका कोई लेन-देन नहीं रहता। आज राजनेता देश-सेवा के बहाने अपनी जेबों को भरने में लगा हुआ है। वह न्याय आसन पर बैठकर के जनता को न्याय नहीं दे सकता प्रत्युत उल्टा अनेक बार न्याय को प्रभावित करता है। भ्रष्ट व्यवस्था और रिश्वत का प्रचलन देश की अधोगति का सूचक है। इस संदर्भ में डॉ. कमला गुप्ता का मंतव्य द्रष्टव्य है—

“स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात व्यक्ति की राजनीतिक चेतना विविध स्वार्थी प्रवृत्तियों के रूप में प्रस्फुटित हुई। सत्ता के लिए आपा-धापी ने राजनीतिक

भ्रष्टाचार को जन्म दिया। भ्रष्टाचार के कारण प्रत्येक व्यक्ति निम्न और उच्च स्तर पर सत्तात्मक राजनीति की शतरंज में अपनी गोटी बैठाने के प्रयत्न में संलग्न हो गया। व्यक्तिगत स्वार्थों ने दल-बदलू राजनीति को जन्म दिया। राजनीतिक दलों के नेता एक के बाद दूसरा दल बदलते रहे। स्वतंत्रता पूर्व भारतीय जनता ने जो सपने संजोए थे, वे धराशायी हो गए। राजनीतिक हत्याएँ, घेराव, हड़ताल, बंद और तथावत् प्रवृत्तिया, राजनीतिक अभिशाप के रूप में सामने आयी।" (हिंदी उपन्यास में सामन्तवाद 324)

ऐसे देश में सामाजिक सौहार्द भी संभव नहीं, न्याय की कल्पना तो दूर की बात है। नेता लोग कुर्सी हथियाने के चक्कर में मतदाताओं से तरह-तरह के वायदे करते हैं। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बेटी हूँ न' में कुंवर नारायण जो राजनीति का अभिन्न हिस्सा ही नहीं अपितु स्वयं स्वास्थ्य मंत्री हैं। वह एक तरफ जहाँ भ्रूण हत्या के खिलाफ सेमिनार, रेलियाँ व भाषणों का आयोजन करवाते हैं, वहीं दूसरी ओर अपने ही अस्पताल में यह अवैध कार्य करवाता है। डॉक्टर डेविड जो मंत्री जी के अस्पताल के ही डॉक्टर हैं, ने मंत्री जी के इस कुकृत्य के खिलाफ न्यायालय में केस कर देता है और स्वयं साक्षी बन कर ब्यान देता है।

"जज साहिबा यहाँ पहले तो हजारों रुपए लेकर गुप्त ढंग से लिंग टेस्ट करके मादा भ्रूण गिराए जाते हैं फिर उन को प्रिजर्व करके रख लिया जाता है। इनमें 'इम्बिलिकल ब्लड सेल' में वृद्धि करने की दर सर्वाधिक होती है। चेहरे या हाथ पावों की झुर्रियां हटाने के लिए इन स्टेम सेलो की ग्राफ्टिंग कर दी जाती है जो विकसित होकर पुरानी चमड़ी का स्थान ले लेते हैं, जिससे झुर्रियां हट जाती हैं और नई चमकती जवान चमड़ी चेहरे को आकर्षक बना देती है। इस कार्य के यहाँ लाखों रुपए वसूले जाते हैं" (बेटी हूँ न 63)

स्वास्थ्य मंत्री का कर्तव्य जनता के स्वास्थ्य की देख रेख के लिए सुविधाओं को उपलब्ध करवाना होता है, यहाँ वो अपने कर्तव्य के विपरीत पैसों के लालच में

कन्या भ्रूण हत्या को अंजाम अपने ही हस्पताल में देता है। यहाँ दया, कर्तव्यनिष्ठा, श्रमनिष्ठा आदि मूल्यों का विघटन हुआ है।

5.8 देशभक्ति

प्रारम्भ से ही भारतीय धरती को अपनी माता स्वीकार करते हैं। अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त का 'माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः' यह मन्त्र अपनी माता के प्रति सम्मान की धारा प्रवाहित करता है। देशभक्ति की भावना देश के प्रति अगाध प्रेम और आत्मसमर्पण की भावना को प्रदर्शित करती है। दूसरे शब्दों में, देशभक्त वह व्यक्ति होता है जो अपनी मातृभूमि व जनता और राजनीतिक व्यवस्था के प्रति पूर्ण वफादार रहकर उसके विकास में सहयोग देता है। यजुर्वेद के मन्त्र 'वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः'(यजुर्वेद 6.23) से शिक्षा लेते हुए अपने देश की उन्नति के लिए सदा कर्मशील रहना चाहिए।

आलोच्य उपन्यासों में भी देशभक्ति के उद्धारण देखने को मिलते हैं। धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'बॉयस्कोप' में रणविजय पात्र के माध्यम से देशभक्ति व भाग सिंह पात्र के माध्यम से देशद्रोह को दर्शाया है। जहाँ रणविजय अपने देश की रक्षा करता हुआ अपने प्राण न्यौछावर कर देता है। वहीं भाग सिंह देश पर विपत्ति के समय अपने आप को छिपा लेता है व सांप के काटने से मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। रणविजय व भाग सिंह जो बचपन से मित्र थे, भारतीय सेना में भर्ती हो जाते हैं। एक बार जब दोनों छुट्टी पर आए हुए थे तो सीमा पर तनाव के कारण दोनों को तुरंत ड्यूटी पर बुलाने की तार आ जाती है। रणविजय में देश प्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी। जब वह ड्यूटी पर लौट रहा था तो वह अपनी रोती हुई माँ का हौंसला बढ़ाता हुआ कहता है—

"लै माई, तू कैन्ह फिक्र करा नी ऐ, तू दिक्ख ता सही, किआ मैं दुश्मन दे दंद, खट्टे करीके आंगा। मिन्नु भारत माता दा कर्ज उतारन दा मौका मिला दा। फिरी मैं उत्थे कल्ला थोड़ा, मेरे बरगे मांआं दे हजारं पुत्त जान तली के धरी के दुश्मन नाल लोहा लेनदे ने।"(बॉयस्कोप 151)

रणविजय ने अपने प्राण भारत माँ की रक्षा के लिए न्यौछावर कर दिए। रणविजय के शहीद होने की सूचना तार द्वारा उसके घर पहुंची तो परिवार ही नहीं, सारा इलाका ही दुःख के सागर में डूब गया था। दुःखी परिवार को सांत्वना देने के लिए मुख्यमंत्री तक पहुंचे थे, स्वयं दुःख प्रकट करने। सरकारी सहायता की घोषणा कर दी गई थी। संस्कार वाले दिन तो कमाल ही हो गया था। क्या बच्चा, क्या बुढ़ा, क्या जवान, भारत माता के सच्चे महान सपूत के अंतिम दर्शन करने, उसे अंतिम विदाई देने वहाँ पहुंचे थे। लोगों का तो जैसे सैलाब ही आ गया था। कुछ लोग बतिया रहे थे "भाई मैं ता आपनीयां उमरा बिच ऐडा वड्डा कठठ नी दिक्खया किसे दे दागे ते।" (बॉयस्कोप 155)

रणविजय को उसके देश प्रेम व राष्ट्रभक्ति के कारण इतना मान और सम्मान मिला वहीं दूसरी ओर उसका मित्र भाग सिंह जिसको युद्ध के दौरान तार आई थी परंतु वह राष्ट्रभक्ति की मर्यादा को तोड़ता हुआ अपनी ज्यूटी पर नहीं लौटा और वह उसके ससुर के घर छुप गया। रणविजय की मृत्यु के तीसरे दिन ही भाग सिंह के घर से भी रोने-चीखने का स्वर सुनकर गाँव सकते में आ गया और उदासी की लहर दौड़ गई। गाँव में दूसरी मृतदेह पहुंची थी, भाग सिंह के शोक-संतप्त परिवार को सांत्वना देने के लिए लोग घरों से निकल पड़े, भाग सिंह की माँ अपने बेटे की लाश से लिपट-लिपट कर विलाप कर रही थी।

"मेरी किस्मत फुट्टी गयी ओए लोको, मैं कैह रोकेया हां तिन्नु लड़ाई ते जान तो- तिन्नु कैह भेजी दित्ता हां तेरे सोहरेयां दे लुकण लई, सप दे डंगे नाल मरन नालों तूं बी रणविजय लेखां शहीद होई के आंदा- तिन्नु बी उन्नी इज्जत मिलणी ही-ओए रब्बा मैं कैह रोकेया हा..। चुप्प करीजा भागे दी मां, लोकी सुणगे तां के गलांगे। भागो के पिता ने सीने पर पत्थर रखते हुए कहा था।" (बॉयस्कोप 154)

भाग सिंह के माता-पिता अपने बेटे को युद्ध में न भेजने पर पश्चाताप करते हैं। आलोच्य उपन्यास में पात्र भाग सिंह के माध्यम से देशभक्ति के मूल्य का अवमूल्यन दिखाया गया है।

5.8 तुलनात्मक निष्कर्ष

5.8.1 साम्य—

प्रथम— धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'आर्तनाद' में चित्रित धार्मिक स्थलों में राजनीति के हस्तक्षेप की समानता अमृतलाल मदान के उपन्यास 'अमर प्रेम कहानी' में चित्रित धार्मिक स्थलों में राजनीति से की जा सकती है।

द्वितीय— धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बायोस्कोप' में राजनेताओं द्वारा इलेक्शन के समय जनता से जो वायदे किये गये, उन्हें इलेक्शन जीतने के बाद राजनेता लोग पूरा नहीं करते, की समता अमृतलाल मदान के उपन्यास 'विराट बौना' से की जा सकती है। दोनों ही उपन्यासों में उपन्यासकारों ने राजनेताओं की स्वार्थी प्रवृत्ति को दिखाया है, वे लोगो की पेय जल सम्बंधित समस्या का भी निवारण नहीं करते जो कि राजनेता होने के नाते उनका प्रथम कर्तव्य होता है।

तृतीय— दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में धर्मनिरपेक्षता का समर्थन किया है।

चतुर्थ— दोनों ही उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में राजनेताओं तथा प्रशासनिक अधिकारियों के भ्रष्टाचार को चित्रित किया है।

5.8.2 वैषम्य—

प्रथम— धार्मिक स्थलों पर भगत जनों की भावनाओं से धार्मिक नेताओं और राजनीतिज्ञों द्वारा किये जाने वाले खिलवाड़ को धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'आर्तनाद' में पात्र चंदा के माध्यम से बहुत ही मार्मिक ढंग से चित्रित किया है। धार्मिक नेता धर्म की आड़ में धोखे से उसका बलात्कार करते हैं और राजनीतिक सिफारिस से बच जाते हैं और चंदा पागल हो जाती है। इस तरह का विषय चित्रण अमृतलाल के उपन्यासों में परिलक्षित नहीं होता।

द्वितीय— साम्प्रदायिक कट्टरता के विरोध के स्वर अमृतलाल मदान के उपन्यासों में धर्मपाल साहिल के उपन्यासों की तुलना में अधिक मुखरित हुए हैं। अमृतलाल मदान

के उपन्यास, 'विराट बौना', 'इति प्रेम कथा', 'अमर प्रेम कथा', 'एक और त्रासदी', 'दूसरा अरुण', 'बन्द होते दरवाजे' में साम्प्रदायिक कट्टरता को दिखाते हुए बहुत ही प्रभावशाली ढंग से उससे होने वाले नुकसानों को उजागर कर साम्प्रदायिक सद्भावना के महत्व को प्रकाशित किया है जो देश की एकता और अखंडता के लिए अनिवार्य हैं।

तृतीय— अमृतलाल मदान के उपन्यास 'अमर प्रेम कथा' में धर्म में भी बनी विभिन्न लोबिज का वर्णन किया गया है। इस प्रकार का विवरण धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में नजर नहीं आता।

चतुर्थ— देशभक्ति एक राष्ट्रीय राजनैतिक मूल्य है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बायोस्कोप' में एक सैनिक की देश भक्ति को दर्शाया गया है। रणविजय नामक सैनिक युद्ध में वीरगति को प्राप्त होता है। इस प्रकार का विवरण अमृतलाल मदान की कलम से अछूता रह गया।

भारतीय राजनीति में तेजी से हो रहे अपराधीकरण ने भयंकर रूप धारण कर लिया है। वर्तमान राजनीति के चाल-चलन से लोकतंत्र की जड़ें लगातार खोखली होती जा रही हैं। आज देश में अपराध व राजनीति दोनों एक दूसरे का पोषण कर रहे हैं। अपराधियों एवं राजनीतिज्ञों ने एक तरफ समाज को चिंतनीय दशा में पहुंचा दिया है वहीं दूसरी तरफ देश के विकास में बाधा उत्पन्न कर रहे हैं। अपराधी लोग राजनेताओं का आशीर्वाद प्राप्त करके सामाजिक ताने-बाने को नुकसान पहुंचा रहे हैं। प्रशासनिक अधिकारी, राजनेताओं और अपराधियों के गठजोड़ की कठपुतली बनकर मूकदर्शक बन कर कार्य करने को विवश हैं। वर्तमान में राजनीति में सच्चरित्र लोगों का आना तथा निस्वार्थ भाव से समाज सेवा करना असंभव होता जा रहा है। राजनीति जनता की सेवा करने का साधन न रहकर ऐश्वर्यपूर्ण जीवन जीने और अपना प्रभाव बढ़ाने का साधन हो गई है। भ्रष्टाचार 21 वीं सदी के लिए एक और बड़ी चुनौती के रूप में सामने है। जहाँ भ्रष्टाचार सरकारी योजनाओं की सफलता को प्रभावित करता है वहीं महंगाई को जन्म देता है और मिलावट व कालाबाजारी जैसी समस्याओं का संरक्षक बनता है। भ्रष्टाचार गैरकानूनी और

अनैतिक कार्यो का पोषक है। आलोच्य उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में राजनैतिक मूल्यों के संक्रमण तथा विघटन के विभिन्न पहलुओं को उजागर किया है।

षष्ठ अध्यायः

जीवन मूल्यों के विघटन के कारक
व निवारक तत्वों का अध्ययन

अध्याय 6

जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्वों का अध्ययन

6.1 पारिवारिक व सामाजिक जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्व

परिवार वह संस्था है जो व्यक्ति व समाज के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य करती हैं। व्यक्ति अपने परिवार से ही सौहार्द-सहयोग, सहनशीलता, त्यागभाव व कर्मशीलता आदि गुणों का अर्जन करता है। संयुक्त परिवार प्रणाली में अनुशासन, स्त्रियों के अनुभव, सौहार्द व सहयोग के कारण पति-पत्नी में असामंजस्य की भावना बहुत कम थी। परन्तु दुर्भाग्यवश नगरीकरण, औद्योगिकरण, पाश्चात्यीकरण, जनसंख्या वृद्धि, सामाजिक व आर्थिक असमानता के कारण परिवार पूरी तरह बिखर गए हैं। वर्तमान समय में परिवारों में प्रेम, स्नेह, समर्पण, वात्सल्य के अभाव के कारण जहाँ घुटन व संत्रास का वातावरण है वहीं संयुक्त परिवार का विघटन एकल परिवार में हो गया है। एकल परिवारों का परिदृश्य और भी भयानक नजर आने लगा है। एकल परिवार ऐसी पारिवारिक संरचना है जिसमें माता-पिता और उनके बच्चे शामिल होते हैं। साथ ही परिवार का मुखिया भी केवल इन्हीं लोगों के प्रति उत्तरदायित्वों का निर्वहन करता है। एकल परिवारों के प्रति बढ़ती दिलचस्पी के पीछे सबसे बड़ा कारण यह है कि पति पत्नी दोनों आर्थिक रूप से स्वतंत्र रहना चाहते हैं। शिक्षित व आत्मनिर्भर नारी को समाज द्वारा पुरुष के बराबर दर्जा देने का दिखावा तो किया जाता है परन्तु वास्तव में वह एक आश्रित नारी, सेविका, गृहिणी और बच्चों की शिक्षिका के रूप में देखना चाहता है।

ऐसी स्थिति में वैचारिक असमानता, अहं की भावना, असहयोग की भावना, नशा व गलत आदतों के कारण असंतुलन पैदा होने से दांपत्य जीवन में असामंजस्य की स्थिति उत्पन्न होती है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास मचान में रोशनी अपने पति के नशेड़ी व व्यभिचारी होने के कारण असामंजस्य की शिकार है, वहीं सुनन्या के पति जगदीश के पुलिस विभाग में होने के कारण अहम की भावना तथा

व्यभिचार के कारण सामंजस्य का अभाव दिखाया गया है। यहाँ पर समानता, स्वतंत्रता, आदि सामाजिक व पारिवारिक मूल्यों का विघटन हुआ है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास '...और कितनी?' में शिवानी एक सुशील बहू है। उसके ससुराल के सदस्य दहेज के लालच और पुत्र की चाहत की पूर्ति न होने पर उसका शोषण कर रहे हैं। यहाँ पर समता, सहानुभूति, दया, आदि सामाजिक मूल्यों का विघटन हुआ है। विवाह विच्छेद में निरंतर वृद्धि, वर्तमान समाज में आपसी विचारों में मतभेद, विवाह का आधार आकर्षण, परिवार के व्यक्तियों के अनावश्यक हस्तक्षेप, अनैतिक संबंध, पुत्र की चाहत, दहेज का लालच व नशे की प्रवृत्ति आदि कारण हैं जो परस्पर प्रेम, सौहार्द, ममता, सहयोग, दयालुता व सहानुभूति जैसे सामाजिक व पारिवारिक मूल्यों का विघटन करते हैं।

संयुक्त परिवार प्रणाली में पूरे परिवार का मुखिया व्यक्ति होता था जिसका परिवार पर पूर्ण नियंत्रण रहता था। उसके मार्गदर्शन में पूरा परिवार परस्पर सौहार्द व सहयोग के साथ अपने दायित्वों का निर्वहन करते थे। शहरीकरण और औद्योगीकरण के कारण संयुक्त परिवारों की परिणिति एकल परिवार में हो गई। एकाकी परिवार में पति-पत्नी की व्यस्तता के कारण और बुजुर्गों के अभाव के कारण बच्चों पर नियंत्रण ढीला हो गया। ऐसी दशा में माता-पिता अपने बच्चों की मांगों को पूरा करना ही अपना दायित्व समझने लगे। धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'खिलने से पहले' में सन्नी व सैफी बच्चों के माध्यम से इस ओर संकेत किया है। उनके माता-पिता की अनदेखी के कारण सैफी बलात्कार का शिकार हुई व सन्नी ड्रग एडिक्ट का।

भारतीय संयुक्त परिवार प्रणाली को तोड़ने में पश्चिम मनोवृत्तियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा। पश्चिम जीवन दर्शन ने यह सिखाया कि व्यक्ति एकाकी परिवार में रह करके अपना विकास कर सकता है। इनके प्रभाव के कारण व्यक्ति पारंपरिक मूल्यों का अनादर करके स्वयं के सुख में ही सर्व कल्याण समझता है।

6.1.1 दाम्पत्य जीवन में असांमजस्य

अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यासों में पारिवारिक असांमजस्य के अनेक कारण प्रस्तुत किए हैं जिनके कारण पारिवारिक मूल्यों का विघटन हुआ है। भारत में दांपत्य जीवन प्राचीन काल से पवित्र रहा है। दांपत्य संबंध को मानव जीवन की मूलभूत आवश्यकता होने के नाते नकारा नहीं जा सकता। परस्पर विश्वास, सम्मान, पारस्परिक सौहार्द व मधुरता ऐसे तत्व हैं जो इस पावन संबंध को अटूट रखने का कार्य करते हैं। पति-पत्नी के संबंधों के विषय में बिंदु अग्रवाल का कहना है, "अपनी योग्यता, कुशलता और सेवा से दांपत्य जीवन को निरंतर सुचारु रूप से चलाना पति-पत्नी का धर्म है। यह धर्म परिवार की नैतिकता व शांति का मेरुदंड है।" (हिंदी उपन्यासों में नारी चित्रण 309)

धर्मपाल साहिल के '...और कितनी?' उपन्यास में शिवानी एक सुशील बहू है। उसके ससुराल के सदस्य दहेज के लालच, पुत्र की चाहत की पूर्ति न होने पर उसका शोषण करते हैं। यहाँ पर समता, सहानुभूति, दया, आदि सामाजिक मूल्यों का विघटन हुआ है।

'एक अधूरी प्रेम कथा' उपन्यास के पात्र देवी-सरिता, दिशा-राजन, अविनाश-वंदना ऐसे पति-पत्नी युगल हैं जिनमें विवाहेत्तर प्रेम के कारण सामंजस्य का अभाव दिखाई देता है।

आज समाज में वैचारिक असमानता, अहं की भावना, असहयोग की भावना, नशा व गलत आदतों के कारण असंतुलन पैदा होने से दांपत्य जीवन में असांमजस्य की स्थिति उत्पन्न होती है। 'मचान' उपन्यास में रोशनी अपने पति के नशेड़ी व व्यभिचारी होने के कारण असांमजस्य की शिकार है, वहीं सुनन्या का पति जगदीश पुलिस विभाग में होने के कारण अहम की भावना से ग्रस्त है तथा उसके व्यभिचार के कारण पति पत्नी में सामंजस्य का अभाव दिखाया गया है। यहाँ पर समानता, स्वतंत्रता, आदि सामाजिक पारिवारिक मूल्यों का विघटन हुआ है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सैफी के माता-पिता जिनका प्रेम विवाह हुआ है के मध्य जावेद नाम के व्यक्ति के आने के कारण मनमुटाव है।

यहाँ पर आपसी मनमुटाव का कारण तीसरे व्यक्ति का आगमन है। इसका सीधा प्रभाव उनकी बेटी सैफी पर पड़ता है। यहाँ तीसरे व्यक्ति के कारण परस्पर विश्वास, स्नेह, सौहार्द आदि सामाजिक मूल्यों का विघटन हुआ है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'ककून' में विनोद व रिया पति-पत्नी हैं जिनके मध्य प्रिया जो कि विनोद की साली के आने के कारण असामंजस्य की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

निवारण— आलोच्य उपन्यासों में जहाँ असामंजस्य के कारणों को गहराई से उकेरा गया है वहीं इनके निवारण या समाधान का संकेत भी किया गया है।

अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास एक समानांतर प्रेम कथा में विश्वप्रेमानंद संत के माध्यम से पति-पत्नी को परस्पर सम्मान, सहयोग, सौहार्द स्थापित करने के संकेत दिए हैं।

वहीं दूसरी ओर धर्मपाल साहिल के उपन्यास खिलने से पहले में सुमित्रा और सेवादास पति-पत्नी है। सुमित्रा सैफी की मैडम है। सुमित्रा सेवादास का दांपत्य जीवन खुशहाली और आनंद से भरा हुआ है। धर्मपाल साहिल ने सुमित्रा व सेवादास दम्पति के माध्यम से परस्पर-विश्वास, अपने कर्तव्यों का ईमानदारी से वहन, क्षमाशीलता के माध्यम से सामंजस्यता का पथ प्रशस्त किया है। उपन्यासकार ने परस्पर सम्मान, अपने दायित्वों का ईमानदारी से वहन, सहनशीलता, पत्नी निष्ठा, पतिव्रता धर्म का पालन, बेटा-बेटी में समानता को असामंजस्य के निवारण तत्वों की ओर संकेत किया है।

6.1.2 विवाह विच्छेद में निरंतर वृद्धि

वर्तमान समाज में आपसी विचारों में मतभेद, विवाह का आधार आकर्षण, परिवार के व्यक्तियों के अनावश्यक हस्तक्षेप, अनैतिक संबंध, पुत्र की चाहत, दहेज का लालच व नशे की प्रवृत्ति के कारण विवाह विच्छेद में लगातार वृद्धि हो रही है, जो परस्पर प्रेम, सौहार्द, ममता, सहयोग, दयालुता व सहानुभूति जैसे सामाजिक व पारिवारिक मूल्यों का विघटन है। अमृतलाल मदान के उपन्यास 'एक अधूरी प्रेम कथा' में सरिता जो कि अमर नाम के व्यक्ति से प्रेम करती है। घर वालों के दबाव में देव मल्होत्रा से विवाह कर लेती है। यह विवाह सफल नहीं हो पाता और अंत में

विवाह—विच्छेद में परिणित हो जाता है। अमृतलाल मदान के उपन्यास अपने—अपने अंधरे में राजेश व उसकी पत्नी के मध्य राजेश की शिष्या रेखा के प्रदीप व उसकी पत्नी के मध्य उसके ऑफिस में काम करने वाली मोहिनी के आने के कारण विवाह—विच्छेद की सम्भावना दिखाई गयी है।

‘अमर प्रेम कथा’ उपन्यास में सरिता, अमर नाम के व्यक्ति से प्रेम करती है जो घर के दबाव में देव के साथ विवाह कर लेती है। जीवनपर्यंत असांमजस्य के चलते बुढ़ापे में विवाह—विच्छेद की स्थिति बन जाती है। सरिता ब्रह्मकुमारी आश्रम में साध्वी बन जाती है और देव हरिद्वार आश्रम में साधु।

‘एक अधूरी प्रेम’ कथा उपन्यास में दिशा व राजन के मध्य विवाहेतर प्रेम के कारण विवाह—विच्छेद की स्थिति बन जाती है जिसका बच्चों पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। स्वयं दिशा का पिता कहता है “काश! दिशा और राजन भी अपने बच्चों की ओर इतना ध्यान दे पाते पर इन्हें तो अब भी अपने झगड़ों से फुर्सत नहीं। बच्चे फिसड्डी बने जा रहे हैं कक्षा में भी, स्वास्थ्य में भी।” (इति प्रेम कथा 93)

आलोच्य उपन्यासों में दबाव में शादी, पारिवारिक व्यक्तियों का अनावश्यक हस्तक्षेप, तीसरे व्यक्ति का आगमन या विवाह पूर्व प्रेम के कारण संबंध विच्छेद दिखाया गया है।

निवारण— उपन्यासकारों ने विवाह से पूर्व जांच—पड़ताल, आपसी सहमति, लड़के और लड़की से उनकी पसंद नापसंद के विषय में पूछताछ को विवाह—विच्छेद के निवारक तत्वों के रूप में बताया गया है।

6.1.3 पारिवारिक अनियन्त्रता

संयुक्त परिवारों के विघटन के पश्चात जब से एकाकी परिवार की स्थापना पति—पत्नी की कार्यव्यस्तता, परस्पर—मनमुटाव, धन—लोलुपता, बेटे के प्रति अत्यधिक लाड—प्यार ने परिवार पर नियंत्रण को ढीला कर दिया है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास ‘खिलने से पहले’ में सेफी के माता—पिता जिनका प्रेम विवाह है, उनके आपसी मनमुटाव के चलते व पुत्र के प्रति अत्यधिक लाड—प्यार करने से बेटा सेफी

की उपेक्षा हुई, जिसका नकारात्मक प्रभाव यह रहा कि वह गलत संगत में पड़ गई, अन्तमें बलात्कार का शिकार हुई। इसी उपन्यास में लक्ष्मी नारायण जो धनाढ्य व्यक्ति हैं, उनकी कार्य व्यस्तता और परिवार के सदस्यों द्वारा बेटे सन्नी को अत्यधिक लाडल्यार देने के कारण बेटे सन्नी पर परिवार का नियंत्रण नहीं रहा जिसके कारण वह धीरे-धीरे नेट व ड्रग एडिक्ट का शिकार हो गया। आलोच्य उपन्यासों में कार्यकारी व्यस्तता, आपसी मनमुटाव, लड़कों के प्रति अत्यधिक लाडल्यार को पारिवारिक अनियंत्रण का कारण बताया गया है।

निवारण— वहीं धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सुमित्रा व सेवादास परिवार के माध्यम से अपने दायित्वों का ईमानदारी से वहन, आपसी मेलजोल, सहनशीलता, व्यस्तता के चलते भी परिवार को समय देने को पारिवारिक अनियंत्रण का समाधान बताया गया है।

धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'बेटी हूँ न' में पात्र कुंवरनारायण के माध्यम से बेटा-बेटी की समानता को पारिवारिक अनियंत्रण का निवारण बताया है।

"जिस पुत्र की मुझे बहुत अधिक कामना थी । जिसे बहुत चाहता था । उसी की वजह से उसे बहुत अधिक बदनामी का सामना करना पड़ा और जिन पुत्रियों को वह देखना भी नहीं चाहता था, वही आज डॉक्टर और जज बनकर उसका नाम रोशन कर रही थी । कुंवर नारायण पश्चाताप करता है तथा अपनी बेटियों को कहते हैं "मेरी अर्थी को दोनों बहनें मिलकर कंधा देना और और मेरी चिता को अग्नि भी तुम्हीं ।" (बेटी हूँ न 101)

6.1.4 पश्चिमी मनोवृत्तियों का प्रभाव

भारतीय संस्कृति में 'वसुधैव कुटुंबकम्' व सर्वे भवन्तु सुखिनः की भावना निहित है। जिसमें व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर के समष्टि कल्याण की प्रार्थना की गई है, परंतु वर्तमान में समाज का प्रत्येक व्यक्ति सुखवादी वह व्यक्तिवादी हो गया है। वह एकाकी रहकर ही ऐश्वर्यशाली जीवन जीना पसंद करता है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने पहले' में सैफी के माता-पिता इन्हीं पश्चिम मनोवृत्तियों

से ग्रस्त हैं। उनके बॉयफ्रेंड हैं, गर्लफ्रेंड है व ऐश्वर्यपूर्ण जीवन जी रहे हैं। इसी वातावरण का प्रभाव सैफी पर भी पड़ता है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'इति प्रेम' कथा'में अरुण व्यक्तिवादी व सुखवादी है। वह व्यक्तिगत सुख को ही महत्व देता हुआ कहता है—

“लिव इन रिलेशनशिप में हर्ज ही क्या है... नानू जब तक मन मिले मजे से रहो,... नहीं तो छोड़ दो। सारी उम्र एक ही बोझा क्यों ढोते रहो। कंधे झटका कर आगे बोला वह, माँ—बाप ओल्ड एज होम में बच्चे चिल्ड्रन केयर होम में..... मैं तो ईजी गोइंग—लाइफ में विश्वास करता हूँ नानीपैसा कमाना ही मेरा उद्देश्य होगा... हाँ कभी कुछ पैसे चैरिटी में भी देता रहूंगा ताकि सेलिब्रिटी स्टेटस भी बना रहे।”(इति प्रेम कथा 113)

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'बंद होते दरवाजे' में मोहित की पत्नी रिया भी पश्चिमी मनोवृत्ति से ग्रस्त है। वह व्यक्तिवादी व ऐश्वर्यशाली जीवन को महत्व देते हुए धनार्जन करने में लगी है। वह बड़ों के प्रति आदर भाव, अतिथि सेवा, परिचर्या को अनावश्यक बोझ मानती है।

निवारण—आलोच्य उपन्यासों में अच्छे साहित्य का अध्ययन, विद्यालयों में नैतिक शिक्षा, भारतीय संस्कृति के महत्व को बताना, सम्भव हो सके संयुक्त परिवार के सदस्यों के साथ भी जब अवकाश हो समय बिताना, इसके निवारण की ओर संकेत किया है।

6.2 सांस्कृतिक जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्व

भारतीय संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीन संस्कृतियों में से एक है। सांस्कृतिक दृष्टि से भारत प्राचीन काल से ही संपन्न रहा है। प्राचीन काल से वर्तमान तक हमारी संस्कृति ने पीढ़ी दर पीढ़ी निरन्तर जटिल सफर तय किया है। भारतीय संस्कार व मूल्य हमारी अमूल्य धरोहर है। अपने सांस्कृतिक मूल्यों के कारण ही भारत की विश्व में पहचान है, जो देश—विदेशों के लिए आकर्षक रही है।

संस्कृति किसी भी देश की आत्मा होती है। संस्कृति आदर्शों, संस्कारों व्यवहारों की संवाहिका होती है। भारतीय संस्कृति में चार मूल्य हैं, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। यह बात अलग है कि पाश्चात्य संस्कृति में अर्थ व काम को अधिक महत्त्व दिया जाता है। सादा जीवन उच्च विचार हमारी संस्कृति की विशेषता रही है परंतु आधुनिकता की अंधी दौड़ व पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव ने भारतीय संस्कृति को प्रभावित किया है।

6.2.1 संयुक्त परिवार विघटन व एकल परिवार

परिवार प्राथमिक संस्था है, जिसमें रक्त व विवाह संबंधी रहते हैं। जो बच्चों के पोषण के लिए उत्तरदायी हैं। परिवार के माध्यम से ही मूल्य व नियम पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांतरित होते रहते हैं। लेकिन जब परिवार का सदस्य स्थापित एवं अन्य नियमों से विचलित होने लगता है तो संपूर्ण परिवार अव्यवस्थित हो जाता है इसे ही पारिवारिक विघटन कहते हैं। पारिवारिक विघटन के अंतर्गत पारिवारिक झगड़े, पारिवारिक तनाव, व्यभिचार, विवाह-विच्छेद, अवैध संतान की उत्पत्ति पारिवारिक विघटन के कारण हैं। औद्योगिक क्रांति के कारण जहाँ संयुक्त परिवार एकल परिवार में तब्दील हो गए वहीं नगरीकरण, पाश्चात्य संस्कृति, व्यक्तिवादी, पदार्थवादी सोच, भौतिकतावाद की होड़ के कारण एकल परिवार में भी परोपकार, सहिष्णुता, सहयोग, त्यागप्रायणता आदि सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास हुआ।

“आधुनिक स्वच्छन्द जीवन-शैली, वृद्धों के अवांछनीय बोझ और हस्तक्षेपों से मुक्ति की चाह और जीविकोपार्जन के लिए घर छोड़ने की अनिवार्यता के कारण संयुक्त परिवार बिखर रहे हैं और एकल परिवारों की भरमार हो गई है और वे वृद्धों की छत्रछाया, उनके मार्गदर्शनों और आशीर्वाद से वंचित हो रहे हैं। अब दादा-दादियों और नाना-नानियों की स्नेहिल गोदों में खेलकर उनकी रोचक-प्रेरक कहानियों से चरित्र-निर्माण की सहज शिक्षा लेते हुए बच्चे बड़े नहीं हो रहे अपितु धनार्जन हेतु नौकरी-पेशा में लगे माता-पिता के स्नेह को तरसते झूलाघरों, आयाओं या नौकर-चाकरों के संरक्षण में पल-बढ़कर असुरक्षा और उपेक्षा के भाव से ग्रस्त हो रहे हैं, तो तथाकथित

सम्भ्रांत परिवारों के अवांछनीय शिथिलांग वृद्ध वृद्धाश्रमों में बलात् रखे जा रहे हैं। घर के अनुपयोगी व्यर्थ सामान को कबाड़ियों का बेचने से तो कुछ रुपये मिल जाते हैं। काश! इन वृद्धों का भी कुछ मोल देने वाला कोई कबाड़िया मिल जाता!”(गगनांचल पृष्ठ 21 मार्च 2018)

6.2.2 शिक्षा का बाजारीकरण

शिक्षा वह माध्यम है, जो जीवन का नया मार्ग प्रशस्त करती है। यदि शिक्षा का उद्देश्य सही दिशा में हो तो, आज का युवा न केवल सामाजिक तौर पर बल्कि वैचारिक रूप से भी स्वतंत्र देश का कर्णधार बन सकता है। मैकाले की संस्कार विहीन शिक्षा में अंग्रेजी का खोखला ज्ञान देकर कर्मचारी तो तैयार कर दिए परंतु हमारी वैदिक संस्कृति की उन सनातन प्रवाहमान मान्यताओं, संस्कारों का नाश कर दिया जो आत्मवत् सर्वभूतेषु, मातृवत् परदारेषु, पितृ देवो भव, मातृ देवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव जैसे सैकड़ों सार्वजनिक गुणों का समवाय था।

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य समय अनुसार अलग-अलग रहा है। वैदिक काल में शिक्षा का उद्देश्य कौशल विकास के साथ-साथ मोक्ष की प्राप्ति था। धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष चतुर्वर्ग की प्राप्ति मनुष्य का ध्येय होता था। परंतु आधुनिक काल में शिक्षा का उद्देश्य मात्र मानव को व्यवसायी बनाना रह गया है। यही कारण है शिक्षित व्यक्तियों में भी नैतिक मूल्य में गिरावट आई है। शिक्षा को लेनदेन की वस्तु मान लिया है, इसी के परिणाम स्वरूप केवल सूचनात्मक ज्ञान देने के लिए कोचिंग सेंटर व विद्यालय कुकुरमुत्ते की तरह उग आए हैं। जहाँ छात्रों को मात्र व्यवसाय के लिए तैयार किया जा रहा है, नैतिकता का कोई प्रयास नहीं किया जाता।

“शिक्षा का उद्देश्य है मानव का सर्वांगीण विकास करके उसे बेहतर इन्सान बनाना। किन्तु आज वैश्वीकरण और बाजारवाद की चपेट में आकर उसका भी व्यवसायीकरण हो गया है। सभी ऐसी व्यावसायिक शिक्षा पाने में जुट गए हैं जिससे अधिकाधिक धनार्जन किया जा सके। निकम्मे बेरोजगारों की जननी अव्यावसायिक सामान्य शिक्षा आज बेमानी हो गई है। यद्यपि जीविकोपार्जन की क्षमता प्राप्त करना मनुष्य की प्रथम अनिवार्यता है किन्तु

उससे भी महत्त्वपूर्ण है मानवीय गुणों और संवेदनाओं का विकास, जिसके बिना मुनष्य अपने में ही सिमटा स्वार्थों का पुतला बनता जा रहा है। जिन प्रतिभाओं को राष्ट्रोत्थान और राष्ट्रनिर्माण में लगना था, वे अधिकाधिक धनार्जन के लिए विदेशों में पलायन कर रही हैं और जो यहाँ हैं भी, वे समाज और राष्ट्र को निर्ममता से चूसने में लगी हैं।”(गगनांचल पृष्ठ 21मार्च 2018)

इसका संकेत अमृतलाल मदान ने 'इति प्रेम कथा' उपन्यास में किया है—

“अमरनाथ अपने नाती की इन आदतों से परेशान हो उठा था। उसे लग रहा था कि अरुण एक सुसंस्कृत लड़का नहीं है, हालाँकि सी.ए. पास था। पर सी.ए. परीक्षा पास करने से सभ्यता, संस्कृति थोड़ा आ जाती है। उसकी आदतों में जहाँ सुस्ती और मस्ती शामिल थी, वहाँ बेशर्मी भी कुछ कम नहीं थी। क्या ऐसा लड़का मेरी सरि की नातिन के काबिल है? क्या वह एक जिम्मेदार पति बन पाएगा और फिर अपने बच्चों को अच्छे संस्कार दे पाएगा?”(इति प्रेम कथा 121)

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में डॉक्टर कन्नू मेडिकल चिकित्सा प्राप्त कर मरीजों को जीवन दान देने की अपेक्षा भ्रूणों की हत्या व नशीले पदार्थों की तस्करी के द्वारा युवाओं का भविष्य बर्बाद कर रहा है। जो शिक्षा के बाजारीकरण का स्पष्ट नकारात्मक दृष्टांत है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बेटी हूँ ना' में पात्र कुंवर नारायण शिक्षा मंत्री होते हुए भी आम जनता में कन्या भ्रूण हत्या पर सेमिनार व रैलियों का आयोजन करता है दूसरी ओर स्वयं के अस्पताल में कन्या भ्रूण हत्या को अंजाम दिलाता है।

उच्च शिक्षित डॉक्टरों के द्वारा कन्या भ्रूण हत्या किया जाना मानवता के खिलाफ है जो मानवीय मूल्यों का विघटन व शिक्षा का बाजारीकरण है।

6.2.3 साम्प्रदायिक सद्भावना का अभाव

भारतीय संस्कृति 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से ओतप्रोत रही है। प्राचीन मुनि परंपरा 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की भावना की प्रेरणा प्राणी मात्र को देती है। इन सब शिक्षाओं परंपराओं को भूलकर राजनेताओं ने अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए भारत के जनमानस पर हिंदू और मुस्लिम के नाम से सांप्रदायिकता का जहर घोला जिसका मूल कारण धार्मिक न होकर पूर्णतः राजनीतिक रहा है। सांप्रदायिकता बाहरी जीवन को बर्बाद ही नहीं करती आंतरिक संबंधों के बीच में भी भयावह दीवार खड़ी कर देती है। साम्प्रदायिकता एक समुदाय विशेष के लोगों के लिए इस विश्वास पर आधारित अवधारणा है कि "किसी खास धर्म को मानने वाले लोगों के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक हित भी समान होते हैं। यह वही धारणा है जो भारत में हिन्दू, मुसलमान, ईसाइयों और सिखों को अलग-अलग समुदाय मानती है, जिनका निर्माण एक दूसरे से अलग-थलग और बिल्कुल स्वतन्त्र रूप से हुआ है।" (विपिनचन्द्र, आधुनिक भारत में साम्प्रदायिकता 1)

गोपीनाथ कालभोर साम्प्रदायिकता पर चर्चा करते हुए इस वृत्ति में विध्वंसक एवं दंगाई होने को भी शामिल करते हैं "समूहों के हितों के बीच होने वाले टकराव का रूप जब विध्वंसक और दंगाई हो जाए तब वह साम्प्रदायिक कहलाता है।" (धर्मनिरपेक्षता और राष्ट्रीय एकता, 170)

6.2.4 साहित्य, इंटरनेट व मीडिया का गिरता स्तर

पहले जब लोगों के पास समय होता था, तब वे अपना समय अच्छा साहित्य पढ़ने में व्यतीत करते थे। उन्हें बस में या रेलगाड़ी में यात्रा करते हुए भी पुस्तकों को पढ़ने का शौक था। पंचतंत्र जैसी पुस्तकों को पढ़ने के लिए बच्चों को प्रोत्साहित किया जाता था। बच्चे खाली समय में अपने दादा-दादी से कहानियां सुनते थे जो नितांत शिक्षाप्रद होती थी। 21वीं सदी के प्रारंभ में इंटरनेट की खोज ने सारा दृश्य बदल दिया। पुस्तकों का स्थान स्मार्टफोन ने ले लिया। बच्चे अब पुस्तक पढ़ने की अपेक्षा सोशल मीडिया की पोस्ट पढ़ना अधिक पसंद करने लगे हैं।

“साहित्यिक पत्रिकाएँ भी पाठकों के लिए तरस रही हैं। चटपटे—मसालेदार लेखों और ऐसी तस्वीरों से भरी पत्रिकाएँ ही आज बाजार में धड़ल्ले से बिक रही हैं, जिन्हें देखकर मूर्तिमान अश्लीलता भी शर्म से पानी—पानी हो जाए! निरर्थक और चटपटी खबरें जुटाने में अथवा पीत—पत्रकारिता में लगे समाचार—पत्र भी अपनी लोकतंत्र के सजग पहरी की भूमिका का सम्यक् निर्वाह नहीं कर पा रहे हैं। दूरदर्शन पर प्रस्तुत समाचार भी अपराध जगत पर ही विशेष रूप से अपना फोकस केन्द्रित कर रहे हैं। फिल्मों भी प्रायः अपराधों, हिंसाचारों और तथाकथित संभ्रांत वर्ग की जीवन—शैली पर केन्द्रित हैं। दूरदर्शन चैनलों पर दिखाए जाने वाले सीरियल भी अपसंस्कृति के प्रचार—प्रचार में लगे हैं। ये दर्शकों को चिन्तन, आचरण और व्यवहार की दृष्टि और दिशा नहीं दे रहे हैं। मनुष्य के भीतर देवता भी है और राक्षस भी। किन्तु ये उसके देवत्व की उपेक्षा करके उसके भीतर के राक्षस को जागृत करने में अपना समस्त कला—कौशल और सामर्थ्य लगा रहे हैं। उनका देवता पदे—पदे उपेक्षित, लांछित, प्रताड़ित और पराजित होकर उपहास का पात्र बन रहा है और उसे रौंद—रौंदकर राक्षस निरंतर अट्टहास कर रहा है! स्नेह, ममता, उदारता, त्याग, सहिष्णुता और सच्चरित्रता भारतीय नारी की सहज वन्दनीय प्रकृति है, जिसके कारण भारत सदैव से नारी की पूजा करते आया है। किन्तु इनकी सन्नारियाँ तो कदम—कदम पर लुटती—पिटती, प्रताड़ित और लांछित होती दिखाई जाती है।” (गगनांचल पृष्ठ 21 मार्च 2018)

खेल खेलने से जहाँ बच्चों का शारीरिक विकास होता था, वहीं बच्चों में सहयोग और सहनशीलता की भावना का विकास भी होता था। स्मार्टफोन ने जहाँ बच्चों को घर के अंदर कैद कर दिया वही मानसिकता को भी कहीं न कहीं प्रभावित किया है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास ‘वे अठारह दिन में’ पात्र समरजीत के माध्यम से जो 70 वर्षीय वृद्ध है (जिसको उसका बेटा समय दे नहीं सकता परंतु उसको

गिफ्ट में लैपटॉप दे देता है) पर इंटरनेट की अश्लीलता के दुष्प्रभाव को प्रकट किया है। वो अपनी पुत्री की उम्र की लड़की को प्रेयसी रूप में देखने लगता है।

अमृतलाल मदान के उपन्यास 'विराट बौना' में वर्णित किया गया कि कैसे बच्चे केवल टीवी पर गलती से आए अश्लील फिल्म को देखकर भाई-बहन होते हुए भी अश्लील कार्य में उन्मुख हो जाते हैं। यह दूरदर्शन का दुष्प्रभाव है। यहाँ पर नैतिकता व पवित्रता जैसे सांस्कृतिक मूल्यों का विघटन हुआ है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले में' सैफी व सन्नी पात्रों के माध्यम से इंटरनेट के दुष्प्रभावों को उजागर किया गया है, जो इंटरनेट चैटिंग के माध्यम से एक दूसरे के करीब आते हैं और अंत में सैफी बलात्कार का शिकार हो जाती है और सन्नी नेट व ड्रग एडिक्ट का।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'समझौता एक्सप्रेस' में प्रोफेसर आनंद अपने पुत्र संदीप को समझाते हुए मीडिया के दुष्प्रभाव को रोकने का उपाय बताते हैं।

6.2.5 पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव

पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण जनमानस की पदार्थवादी सोच व निजता की ओर झुकाव हो गया है। अमृतलाल मदान के उपन्यास 'बंद होते दरवाजे' में रीना पात्र के माध्यम से मोहित की माँ जो शीलानगर में रहती है, अपनी बहू की पदार्थ वाली सोच को इस प्रकार प्रकट करती है। जो पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव का एक उदाहरण है:-

"खाक हुई वह एडजस्ट हमारे साथ। हमारे घर आती तो, सौ नखरे करती हैं यहाँ बिजली गुल रहती है, ना ए.सी. है, न कार है। इस नगर में कोई ढंग का बाजार भी नहीं जहाँ मैं शॉपिंग कर सकूँ ... न ढंग का बॉब कट करने वाला सैलून... न मॉल जा सकते हैं।" (बंद होते दरवाजे 69)

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सैफी के माता-पिता के माध्यम से भारतीय संस्कारों पर पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव का उल्लेख किया गया

है, जहाँ सभी के अपने-अपने फ्रेंड हैं। सैफी स्वयं अपनी मैडम को बताती है हमारी फैमिली में गर्लफ्रेंड, बॉयफ्रेंड होना नॉर्मल सी बात है।

इसी उपन्यास के पात्रों मैडम कुमार व हर्षिता के माध्यम से उपन्यासकार ने संकेत किया है कि पाश्चात्य संस्कृति ने हमारे परम्परागत वैवाहिक जीवन मूल्यों पर भी अपना प्रभाव छोड़ा है। 'लिव इन रिलेशनशिप', 'होमो-रिश्ते' इसका ज्वलंत प्रमाण हैं। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' कुमार मैडम कहती है—

“ऑल राइट मैडम अब अपने ट्रेडिशनल मैरिज सिस्टम को ही लो बोर हो गए हैं लोग इस सिस्टम से। आप जो मर्जी कहें— बट आई बिलीव इन 'लिव इन रिलेशनशिप'। मुझे तो यह ट्रेंड बहुत जचा है। बिन फेरे हम तेरे बनकर जब तक जी चाहे रहो, जब मन भर जाए, उकता गए.. ओके बाय बाय टाटा-टाटा...” (खिलने से पहले 111)

निवारण— धर्मपाल साहिल ने '...और कितनी?' उपन्यास में शिवानी के माता-पिता और खिलने से पहले उपन्यास में सुमित्रा और सेवादास के माध्यम से निवारण का संकेत किया गया है जहाँ दोनों परिवारों में बच्चों को अच्छे संस्कार दिए गये हैं।

6.3 आर्थिक जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्व

भारतीय संस्कृति में चार पुरुषार्थ स्वीकार किए गए हैं जिनका क्रम भी बड़ा वैज्ञानिक है धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष। धर्म का अर्जन करना प्रथम पुरुषार्थ है। द्वितीय स्थान पर अर्थ को रखा, अर्थ का उपार्जन अनुचित तरीकों से नहीं करना चाहिए। वह धर्म पूर्वक होना चाहिए। ऐसी प्रेरणा मानव मात्र को दी गई है। आज के भौतिकवादी युग में अर्थ को मानव विकास का प्रमुख स्रोत माना जाता है। समाज की संपूर्ण गतिविधियां अर्थ से ही संचालित होती हैं। अर्थ की बढ़ती महत्ता के कारण व्यक्ति, परिवार व समाज से संबंधित मूल्यों पर संकट गहरा गया है। व्यक्ति सर्वप्रथम अपने आर्थिक विकास की अपेक्षा रखता है सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, नैतिक, विकास की बाद में।

6.3.1 लालच व असंतोष

उपभोक्तावादी व विलास ग्रस्त जीवन पद्धति का शिकार जनमानस जब अर्थ को ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण समझ बैठता है तो वह अर्थ कमाने के लिए कर्तव्यनिष्ठता व श्रमनिष्ठता जैसे आर्थिक मूल्यों की बलि देकर असंतुष्ट व लालची प्रवृत्ति के कारण धन के शॉर्टकट मार्गों का अन्वेषण करता है। आलोच्य उपन्यासों में इस प्रवृत्ति को गहनता से उकेरा गया है। अमृतलाल मदान के उपन्यास 'दूसरा अरुण' में मोहनलाल हेड क्लर्क धन के लालच में दलित व पिछड़े वर्ग के छात्रों की छात्रवृत्ति हड़प जाता है। यहां इस गलत कार्य का कारण मोहन लाल की पत्नी की असंतुष्टि है। धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'ककून' में डॉक्टर पात्र के माध्यम से दिखाया है कि किस प्रकार डॉक्टर सरकारी पद पर रहते हुए सरकारी अस्पताल में विशेष फीस लेकर प्राइवेट मरीजों को प्रमुखता से देखता है। यहाँ पर लालच के कारण कर्तव्यनिष्ठता मूल्य का विघटन हुआ है।

6.3.2 पाश्चात्य प्रभाव व भूमंडलीकरण

भूमंडलीकरण के खेल में बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा बाजार के माध्यम से एक मूल्य संस्कृति को परोसा जाता है। भूमंडलीकरण के तथाकथित आधुनिक मूल्यों ने सारे भारतीय जीवन मूल्यों को प्रभावित किया है अब प्रत्येक मूल्य बाजार द्वारा निर्धारित संचालित हो रहे हैं।

बाजार का अर्थशास्त्र बहुत सक्षम है, फलतः विज्ञापनों के माध्यम से वह व्यक्तियों की सोच को इस कदर बदल रहा है कि हम इसकी कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। जीवन का प्रत्येक क्षेत्र अब बाजार द्वारा संचालित हो रहा है। बात चाहे उपभोक्तावाद को अलग-अभिव्यक्ति से जोड़ने की हो या फिर अपनी पहचान को उपभोक्तावाद के रूप में प्रदर्शित करने की। यही नहीं, बाजार सुन्दरता को सेक्स अपील से जोड़ता है, धर्म और अध्यात्म का व्यवसायीकरण करता है और प्रेम को प्रदर्शन की वस्तु मानता है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में स्कूल की लड़कियां धनाकर्षण के कारण स्कूल से ही देह व्यापार को अपना रही है। यह अश्लीलता एवं नग्नता को कला, संस्कृति व स्वतंत्रता से जोड़ने में भी कोई संकोच

नहीं करता है। मुकेश शर्मा 'भारतीय संस्कृति में मानव मूल्य व लोक कल्याण' में लिखते हैं—

“रुचियों के क्रांतिकारी बदलाव ने जीवन के सभी आयामों को प्रभावित किया है। भोजन का ही मामला लें। भोजन के बारे में प्रचलित उक्ति थी कि दिल का रास्ता पेट से होकर गुजरता है। इसका सीधा आशय यह है कि भोजन केवल पेट भरने का काम नहीं करता है बल्कि यह लोगों को नजदीक भी लाता है, रिश्तों को मजबूती प्रदान करता है। लेकिन पहले भोजन खालिस तौर पर घर का मामला होता था जो काफी धीरे-धीरे बाहर निकला। आर्थिक उदारीकरण ने खानपान की आदतों को एकदम शीर्षासन करा दिया है। आज बाहर खाने जाना भारतीयों का सबसे पसंदीदा शगल है। भारतीय पॉश रेस्तराओं, अच्छे-बुरे होटलों, ढाबों, सड़क छाप ठेलों में अपनी रसना की तृप्ति पर सालाना 35000 करोड़ रुपये खर्च कर रहे हैं। सामाजिक व्यवहारों में संबंधों का आधार ही अर्थ हो गया है।” (15)

आधुनिक युग में भौतिकतावाद की होड़, दिखावा, पाश्चात्य प्रभाव, आय से अधिक व्यय करने के कारण व्यक्ति की संतुष्टि अर्थ से नहीं होती वह अर्थ लाभ लिए आर्थिक जीवन मूल्यों को तार-तार कर देता है।

निवारण—आलोच्य उपन्यासों में भारतीय संस्कृति की मूल भावना सादा जीवन उच्च विचार, अपने कर्तव्यों का निष्ठापूर्वक निर्वहन को लालच व असंतोष का निवारण बताया गया है। धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बेटी हूँ न' में कुंवर नारायण की दोनों बेटियाँ जो डॉक्टर व जज के रूप में अपने दायित्वों का ईमानदारी से निर्वहन कर रही हैं।

6.4 राजनैतिक जीवन मूल्यों के विघटन के कारक व निवारक तत्व

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जो सपने जनता ने देखे थे, जिन हाथों में सत्ता सौंपकर सुख व आनंद की कल्पना की थी, स्वार्थी व मौकापरस्त राजनेताओं ने इन सपनों को चकनाचूर कर दिया। भाई-भतीजावाद, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, सांप्रदायिकता व जातिवाद का ऐसा बीजारोपण किया कि देशभक्ति, राष्ट्रीयता,

विश्वमंगल की कामना, धर्मनिरपेक्षता, न्याय, समानता आदि राजनीतिक मूल्यों का अस्तित्व खतरे में पड़ गया।

6.4.1 भाई भतीजावाद

अपने सगे-संबंधियों को लाभ पहुंचाने की संकीर्ण भावना का नाम भाई-भतीजावाद है। इस भावना के अंतर्गत अपरिचित योग्य व्यक्ति की उपेक्षा कर अपने सगे-संबंधियों को लाभ पहुंचाया जाता है। अतः यह भावना सामाजिकता, व्यवहारिकता व मानवता के प्रतिकूल है। यह भावना जहाँ व्यक्ति को मानसिक रूप से प्रभावित करती है वहीं राष्ट्र के विकास में भी एक बहुत बड़ी बाधा है। आलोच्य उपन्यासों में उपन्यासकारों ने इस भावना की ओर संकेत किया है।

6.4.2 अवसरवादिता

वर्तमान राजनीतिक परिस्थितियां पूर्णतया बदल गई हैं। राजनेता देश के प्रति अपना कर्तव्य भूल कर अवसरवादी हो चुके हैं। वास्तविकता तो यह है कि ये लोग झूठे आश्वासन देते हैं और आम जनता भी इन आश्वासनों की अभ्यस्त हो चुकी है। इन नेताओं की कथनी और करनी में दिन-रात का अंतर आ गया है। राजनीति में व्याप्त अवसरवाद, पद की चाहत, नारेबाजी, भ्रष्टाचार नेताओं की अकर्मण्यता के सूचक हैं। नेता संस्कृति, जनता, जीवन इत्यादि बड़े-बड़े आदर्शों की बात करते हैं पर वास्तव में पद-प्रतिष्ठा, यश-मान और धन के भूखे और अवसरवादी हैं, बरसाती मेंढक के समान इनके स्वार्थ के समक्ष देश का गौरव तुच्छ है। राजसत्ता अवसरवादी और स्वार्थी लोगों के हाथों में आने से राजनैतिक जीवन मूल्यों में गिरावट आई है। ये सत्ता के भूखे भेड़िये लाभ का अवसर कभी नहीं चूकते। आम जनता जिस राजनीतिक पार्टी के विपक्ष में अपना मतदान करती है, मौका मिलते ही चुना गया विधायक जनता के विचार धारा के विपरीत वाली पार्टी में अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु जा मिलता है। राजनैतिक पार्टियां भी, यदि विधायक कम रह जाएं पैसों के द्वारा विधायकों की खरीद-फरोख्त में तनिक भी शर्म नहीं करती।

“एक रिपोर्ट के अनुसार 1957 से 1967 के बीच 542 बार सांसद अथवा विधायकों ने अपने दल बदले। आप इसे क्या कहेंगे कि 1967 के आम

चुनाव के प्रथम वर्ष में भारत में 430 बार सांसद अथवा विधायकों द्वारा दल बदलने का रिकॉर्ड बना। 1967 के बाद एक रिकॉर्ड और बना जिसमें दल बदल के कारण 16 महीने के भीतर 16 राज्यों की सरकारें गिर गईं। हरियाणा के एक विधायक ने तो 15 दिन में ही तीन बार दल बदल कर राजनीति में एक नया रिकॉर्ड बनाया था।" (गगनांचल मार्च 2021, 28)

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व राजनेताओं ने अथक परिश्रम से भारतीय राजनीति में सर्वहित व राष्ट्रीयता की भावना विद्यमान की, परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सार्वजनिक हित की अपेक्षा व्यक्तिगत स्वार्थ को महत्व दिया जाने लगा। अनुशासनहीनता, अवसरवादिता, भाई-भतीजावाद, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी व नारेबाजी ने गांधी जी के रामराज्य की कल्पना मिट्टी में मिला दिया। पूँजीपति व अवसरवादी लोगों का प्रशासन में प्रवेश हो गया जिसके फलस्वरूप चोर-बाजारी, घूसखोरी व भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिला। आज की राजनीति का सही विश्लेषण करते हुए डॉक्टर देशमुख कहते हैं "आजकल ऊपरी कमाई का सबसे श्रेष्ठ साधन राजनीति है। नौकरी के लिए तो पढ़ा-लिखा होने की शर्त होती है, इसके लिए वह भी नहीं।"

6.4.3 जातीयता

वैदिक काल की वर्णव्यवस्था की परिणति जातिवाद में हो गई। जाति व्यवस्था की इस खाई ने अस्पृश्यता को जन्म दिया जिसके कारण सर्वत्र ब्रह्म के दर्शन करने वाले भारतीय को संसार अछूतमय दिखाई देने लगा। डॉ० दादू राम शर्मा अपने लेख 'भारत के सांस्कृतिक मूल्य' में लिखते हैं-

"भगवान बुद्ध ने जातिवाद की शल्य-क्रिया की, तदुपरान्त गुरुनानक देव ओर उनके उत्तराधिकारी गुरुओं ने इसके उपचार का दीर्घकालीन प्रयास किया। पुनः विवेकानंद ने अपने जागरण मंत्र से हमारी प्रसुप्त चेतना को उद्बुद्ध किया और राष्ट्रपिता ने तो अपने एकादशव्रतों में स्पर्शभावना को सम्मिलित करके अस्पृश्यता निवारण में अपना समग्र जीवन ही समर्पित कर दिया। इस सामाजिक महारोग का स्थायी उपचार हो गया होता यदि हमारी

सत्तालोलुप राजनीति जातिवाद को अपने वोट बैंक के रूप में इस्तेमाल न करती” (गगनांचल पृ० 20 अगस्त 2018)

आजादी के बाद भारतीय राजनीति में जातिवादी भावना और भी बलवती हो गई। सत्ता के लोलुप राजनेता जाति के आधार पर वोटों का धुवीकरण करने लगे। ये नेता चुनाव के नजदीक आते ही जातिगत समीकरण बनाना शुरू कर देते हैं और उन नेताओं का दलबदल भी कराया जाता है जिनका उस क्षेत्र में जातिगत बाहुल्य हो। प्रेम जनमेजय ने ‘चारा और बेचारा व्यंग्य’ में जातिवादी राजनीति के स्वरूप का उद्घाटन किया है

“आज भी हमारे देश में जब भी चुनाव होते हैं तो लाल, पीली, हरी, भगवा आदि सभी पार्टियां इस बात का समीकरण जमाती हैं कि जाट बहुल क्षेत्र से जाट, मुस्लिम बहुल क्षेत्र से मुस्लिम आदि ही चुनाव में खड़े हों और अपनी जाति के आधार पर चुने जाने के बाद जनता का कम, अपना और पार्टी का हित अधिक करें।” (26)

6.4.4 साम्प्रदायिकता

भारतवर्ष में धर्म व राजनीति का नाता पुरातन रहा है। एक धर्म विशेष के सदस्यों में जब यह भावना आ जाए कि उनके धार्मिक हित, अन्य धार्मिक समूहों के हितों से अलग हैं तब यह भावना साम्प्रदायिकता कहलाएगी। परन्तु जब किसी धर्म विशेष के लोग अपने धार्मिक हितों को सर्वोपरि व अन्य धार्मिक समूह के हितों को न केवल भिन्न अपितु विरोधी भी समझने लगते हैं तो यह उग्र साम्प्रदायिकता की भावना को जन्म देगी। यही उग्र साम्प्रदायिकता धार्मिक संघर्षों की जनक है। जिसका वर्णन अमृतलाल मदान के उपन्यास ‘विराट बौना’ में पात्र विमल के माध्यम से किया गया है।

6.4.5 साम्प्रदायिक संघर्ष के कारण

भारत में सांप्रदायिकता की समस्या धार्मिक न होकर पूर्णतः राजनीतिक रही है। संस्कृतियों में विविधता कभी भी सांप्रदायिक संघर्ष का कारण नहीं रही है।

धार्मिक संघर्ष, सत्ता, संपत्ति और समाज के ठेकदारों की नीच सोच की उपज है। इसमें एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय से अपने को उच्च शक्तिशाली और श्रेष्ठ सिद्ध करने का प्रयास करता है। आजादी के बाद वोट की राजनीति ने सांप्रदायिक संघर्ष को बढ़ाने में खाद का काम किया। नेता लोग अपनी कुर्सी के चक्कर में विभिन्न सम्प्रदायों को दंगों की आग में झोक कर वोटों का ध्रुवीकरण कर लेते हैं। नीलम देवी अपने शोध पत्र 'भारतीय राजनीति का धर्म के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन' में साम्प्रदायिकता पर अपने विचार प्रकट करती हुई कहती हैं—

“पिछले कुछ समय से देश में बहुसंख्यक सम्प्रदाय का विकास हुआ है। जब कांग्रेस सरकार ने मुस्लिम लोगों को खुश करके अपना वोट बैंक बनाने के लिए अनेक प्रयत्न किए, तो इसकी प्रतिक्रिया स्वरूप संघ परिवार संबंधित संगठनों द्वारा भारत को 'एक संस्कृति, एक राष्ट्र और एक समुदाय' बनाने का संकल्प लिया गया। इसी समय गर्व से कहो 'हम हिन्दू हैं' जैसे नारे भी दिए गए। संघ परिवार के ऐसे नारों से बहुसंख्यक साम्प्रदायिकता के विकास के साथ साथ अल्पसंख्यकों में असुरक्षा की भावना और धार्मिक कट्टरता उत्पन्न हुई है। स्पष्ट है कि भारत में साम्प्रदायिकता की समस्या गम्भीर रूप धारण किए हुए है। बढ़ती हुई साम्प्रदायिकता के कारण कुछ सम्प्रदाय राष्ट्र की मुख्य धारा से अलग जा रहे हैं और इनमें अलगाववाद की प्रवृत्तियां पैदा हो रही हैं। साम्प्रदायिकता देश की एकता व अखण्डता की जड़ों को कमजोर कर रही है। इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए प्रभावशाली कदम उठाने की आवश्यकता है।

6.4.5 जीवन मूल्यों पर व्यवहारिक अध्ययन—

आलोच्य उपन्यासकारों के उपन्यासों में जीवन मूल्यों के चिंतन व समाज में बुद्धिजीवियों के जीवन मूल्यों के प्रति दृष्टिकोण को जानने के लिए प्रश्नावली सर्वेक्षण का सहारा लिया गया जिसके माध्यम से एकत्रित किए गए उत्तरों को व्यवहारिक अध्ययन के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है।

	नाम	सम्बद्ध क्षेत्र	आयु	लिंग
1	अंजू बाला	शिक्षा व समाज सेवा	38	स्त्री
2	डा० अशोक कुमार मिश्रा	समाज सेवा व शिक्षा	34	पुरुष
3	संजू बाला	शिक्षा व राजनीति	31	स्त्री
4	मिथिलेश शर्मा	शिक्षा	40	पुरुष
5	डा० कृष्ण चन्द	समाज सेवा	42	पुरुष
6	प्रवीन कुमारी	समाज सेवा व राजनीति	35	स्त्री
7	शिव कुमार	देश सेवा	44	पुरुष
8	संगीत शर्मा	चिकित्सा	35	पुरुष
9	डा० मंजू	शिक्षा	40	स्त्री
10	राजीव कौशिक	समाज सेवा	39	पुरुष
11	दर्शन दयाल शर्मा	राजनीति	49	पुरुष
12	प्रवेश कुमार	देश सेवा	43	पुरुष
13	डा० सुशील कुमार अवस्थी	शिक्षा	35	पुरुष
14	अनिल कुमार	समाज सेवा	43	पुरुष
15	बलवान शर्मा	राजनीति	51	पुरुष
16	कुलदीप व्यास	देश सेवा	37	पुरुष
17	सतपाल	शिक्षा	36	पुरुष
18	हरकेश	समाज सेवा	40	पुरुष
19	अमित कुमार	राजनीति	38	पुरुष
20	डॉ. सन्तोष कुमार मिश्र	देश सेवा	44	पुरुष
21	हेमंत कुमार	चिकित्सा	41	पुरुष
22	तिलक गौड़	शिक्षा	29	पुरुष
23	सोहन लाल	समाज सेवा	30	पुरुष
24	डा० अनीता चौहान	राजनीति	38	स्त्री
25	रविश कुमार शर्मा	देश सेवा	36	पुरुष
26	कोमल कौशिक	शिक्षा	21	स्त्री
27	डॉ. धर्मपाल साहिल	समाज सेवा	63	पुरुष
28	रेनू	राजनीति	29	पुरुष
29	रेनू रानी	देश सेवा	23	स्त्री
30	अंजलि	शिक्षा	22	स्त्री
31	स्वाति यादव	समाज सेवा व देश सेवा	23	स्त्री
32	सुरेश कुमार	राजनीति	37	स्त्री
33	विवेक सिंह	देश सेवा	40	स्त्री
34	डा० रविन्द्र शर्मा	शिक्षा	44	पुरुष
35	सुनीता मिश्रा	समाज सेवा	40	पुरुष
36	गोविन्द	राजनीति	23	स्त्री

37	रविन्द्र	देश सेवा	38	पुरुष
38	भास्कर	शिक्षा	23	पुरुष
39	अशोक कुमार	समाज सेवा	40	पुरुष
40	संगीता	राजनीति	23	स्त्री
41	हरदीप	देश सेवा	28	पुरुष
42	रमेश कुमार	शिक्षा	35	पुरुष
43	पवन कुमार	समाज सेवा	42	पुरुष
44	प्रवीण कुमार	राजनीति	39	पुरुष
45	सरोजनी देवी	देश सेवा	24	पुरुष
46	राजेश कुमार	शिक्षा	35	स्त्री
47	भाषा महापात्र	समाज सेवा	22	स्त्री
48	अनिता	राजनीति व शिक्षा	33	स्त्री
49	डॉ० सत्यानन्द	शिक्षा	48	पुरुष
50	क्रांति खूंटे	समाज सेवा व शिक्षा	38	स्त्री

प्रश्न:- आप सामाजिक व पारिवारिक जीवन मूल्यों के विघटन के क्या कारण स्वीकार करते हैं?

व्यवहारिक अध्ययन में अधिकतर विद्वानों ने संस्कार रहित शिक्षा, आर्थिक समस्या, पाश्चात्य जगत का अंधानुकरण व सांस्कृतिक उदासीनता को सामाजिक व पारिवारिक जीवन मूल्यों के विघटन का कारण माना है।

आलोच्य उपन्यासों में संयुक्त परिवार का विघटन, नगरीकरण, जनसंख्या वृद्धि, आर्थिक असमानता को सामाजिक व पारिवारिक विघटन के मुख्य कारणों के रूप में उकेरा गया है।

प्रश्न:- दांपत्य जीवन में असामंजस्य के क्या कारण हैं ? दांपत्य जीवन में असामंजस्य को कैसे दूर किया जा सकता है ?

व्यवहारिक अध्ययन में अधिकतर लोगों ने संस्कारों का अभाव, महत्वाकांक्षाओं का टकराव, एक दूसरे की भावना को नहीं समझना, सहनशीलता की कमी, बांझपन आदि को दांपत्य जीवन में असामंजस्य के कारण स्वीकार किए हैं।

आलोच्य उपन्यासों में वैचारिक असमानता, अहं की भावना, असहयोग की भावना, नशा प्रवृत्ति आदि को दांपत्य जीवन में असामंजस्य के लिए उत्तरदाई ठहराया गया है।

प्रश्न:-विवाह विच्छेद की बढ़ती समस्या के क्या कारण हैं ?

व्यवहारिक अध्ययन के विश्लेषण में पाया गया अधिकतर बुद्धिजन परिवार में बुजुर्गों का खत्म होता वर्चस्व, वर-वधू के माता-पिता की अत्यधिक दखल अंदाजी, फोन की उपलब्धता, विवाहेत्तर संबंध, बेमेल विवाह, बॉलीवुड व आधुनिक नाट्य-सीरियल की नकारात्मक भूमिका को विवाह-विच्छेद के कारण के रूप में स्वीकार करते हैं। परस्पर प्रेम, सहयोग, सौहार्द व एक दूसरे का सम्मान, आपसी सूझबूझ, छोटी-छोटी बातों की उपेक्षा को इसका निवारण बताया गया है।

आलोच्य उपन्यासों में विवाह का आधार आकर्षण, पारिवारिक लोगों का गैरजरूरी हस्तक्षेप, दांपत्य जीवन में तीसरे व्यक्ति का प्रवेश, पुत्र की लालसा दहेज का लालच, आदि को विवाह-विच्छेद का कारण स्वीकार किया गया है।

प्रश्न:- एकल परिवार में दादा-दादी का अभाव व माता-पिता के आपसी मन-मुटाव का बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

व्यवहारिक अध्ययन में अधिकांश लोगों ने स्वीकार किया है परिवार में दादा-दादी संस्कार की पाठशाला के ऐसे अनुभवी प्रशिक्षक होते हैं जो सहजभाव से बच्चों में सुसंस्कारों का संचन करते हैं। अतः इनके अभाव में बच्चों के संस्कारित होने की सम्भावनायें कम होती हैं।

आलोच्य उपन्यासों में दादा-दादी के अभाव का एकल परिवार में कार्यो की व्यस्तता के कारण बच्चों में संस्कारों का अभाव, सहयोग की भावना का अभाव सांवेगिक विकास का अभाव, बच्चों की भावनाओं का प्रस्फुटन न हो पाने की अपेक्षा बच्चों का कुंठित हो जाना इन सब नकारात्मक प्रभावों को उकेरा गया है।

प्रश्न:-पारिवारिक अनियंत्रण के क्या कारण हैं? इसको कैसे रोका जा सकता है?

व्यवहारिक अध्ययन में पाया गया कि अधिकतर बुद्धिजीवियों ने एकल परिवार में अनुभव की कमी, स्वार्थ, वैचारिक मतभेद कलहपूर्ण वातावरण अशिक्षा, परिवार के मुखिया की निष्क्रियता को पारिवारिक अनियंत्रण का कारण माना है। परिवार के सदस्यों के साथ संवाद, परस्पर भावनाओं का सम्मान, पारिवारिक संस्कार, अच्छी शिक्षा, आदर्श व निष्पक्ष व्यवहार को पारिवारिक नियंत्रण का निवारण बताया गया है।

आलोच्य उपन्यासों में पति-पत्नी का परस्पर मनमुटाव, धन-लोलुपता, बेटे के प्रति अत्यधिक लाड-प्यार व आजादी की चाहत को पारिवारिक अनियंत्रण के कारणों के रूप में स्वीकार किया गया है व्यवहारिक अध्ययन में पाया गया कि अधिकतर बुद्धिजीवियों ने एकल परिवार में अनुभव की कमी, स्वार्थ, वैचारिक मतभेद कलहपूर्ण वातावरण अशिक्षा, परिवार के मुखिया की निष्क्रियता को पारिवारिक अनियंत्रण का

कारण माना है। परिवार के सदस्यों के साथ संवाद, परस्पर भावनाओं का सम्मान, पारिवारिक संस्कार, अच्छी शिक्षा, आदर्श व निष्पक्ष व्यवहार को पारिवारिक अनियंत्रण का निवारण बताया गया है।

प्रश्न:— भारतीय संस्कृति की वे क्या विशेषताएं हैं जो इस को अन्य संस्कृतियों से अलग करती हैं ?

व्यावहारिक अध्ययन के विश्लेषण से ज्ञात होता है अधिकांश व्यक्तियों ने विभिन्नता में एकता, आत्मवत् सर्वभूतेषु की भावना, संस्कार युक्त शिक्षा, प्रकृति से जुड़ाव, सत्य, अहिंसा, प्रेम व सहिष्णुता का अन्यतम समावेश किसी अन्य संस्कृति में दिखाई नहीं देता जो भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता का प्रमाण है ।

आलोच्य उपन्यासों में अतिथि देवो भव, वसुधैव कुटुंबकम की भावना, जीवन के सुंदर व सफलतम संचालन के लिए धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की संकल्पना, सर्वे भवन्तु सुखिनः की कामना व आध्यात्मिकता वे विशेषताएं हैं जो किसी अन्य संस्कृति में नहीं हैं।

प्रश्न:— बच्चों में संस्कार विकसित करने में संयुक्त परिवार की क्या भूमिका है ?

व्यवहारिक अध्ययन के अनुसार संयुक्त परिवारों को बच्चों की अनौपचारिक पाठशाला स्वीकार किया गया है जो बच्चों के सामाजिकरण और उनके चरित्र निर्माण में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

आलोच्य उपन्यासों में संयुक्त परिवार को संस्कारों की पाठशाला के रूप में देखा गया है जहां बच्चे सहयोग, सहनशीलता,सौहार्द व प्रेम जैसे गुण सहज भाव से ही सीख जाते हैं।

प्रश्न:—वर्तमान शिक्षा में व्यवसायिकता के साथ-साथ नैतिकता की क्यों आवश्यकता है ?

व्यावहारिक अध्ययन में अधिकतर लोगों का मानना है 'आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः' व्यक्ति का व्यवहार या नैतिकता सर्वोच्च है। नैतिकता के बिना हर प्रकार से व्यवसायिक शिक्षा का कोई औचित्य नहीं है ?

आलोच्य उपन्यासों में दर्शाया गया है कि आज के युवा पढ़ लिखकर बाजार के लिए तो योग्य बन जाते हैं परंतु परिवार व समाज के लिए नहीं । नैतिकता विहीन शिक्षा के बहुत भयंकर दुष्परिणाम हो सकते हैं अतः शिक्षा व्यवस्था में व्यवसायिकता के साथ-साथ नैतिकता का समावेश अपरिहार्य है ।

प्रश्न:—पाश्चात्य संस्कृति ने भारतीय संस्कृति को किस प्रकार प्रभावित किया है?

आलोच्य उपन्यासों में पाश्चात्य संस्कृति ने भारतीय जनमानस के खान-पान रहन-सहन वैवाहिक जीवन मूल्य सब कुछ प्रभावित किए हैं कुछ परिवर्तन सकारात्मक हैं, तो कुछ नकारात्मक। पाश्चात्य जगत के कारण भारतीय शिक्षा को विस्तार मिला, स्त्री शिक्षा का प्रचार हुआ और आर्थिक उन्नति को गति मिली, यह पाश्चात्य संस्कृति का सकारात्मक प्रभाव है। पदार्थवादी सोच, निजता की ओर झुकाव, होमो रिलेशन, लिव इन रिलेशनशिप जैसे नूतन वैवाहिक मूल्यों का उदय, शिक्षा का बाजारीकरण व नैतिक मूल्यों का ह्रास पाश्चात्य संस्कृति के नकारात्मक प्रभाव हैं।

प्रश्न:—शिक्षा का बाजारीकरण समाज के लिए किस प्रकार घातक है इसको रोकने के क्या उपाय हैं ?

व्यवहारिक अध्ययन के मूल्यांकन के उपरांत इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अधिकतर विद्वानों ने शिक्षा के बाजारीकरण के अनेक भयंकर दुष्परिणाम स्पष्ट किए हैं जिनमें शिक्षा का आम व्यक्ति तक न पहुंचना, सभी वर्गों तक शिक्षा के विस्तार का अभाव, शिक्षा की गुणवत्ता में कमी, खर्चीली शिक्षा प्राप्त करके जो युवा तैयार होंगे वह समाज में जन कल्याण की अपेक्षा भ्रष्टाचार को बढ़ावा देंगे। अतः सरकार का शिक्षा पर पूर्ण नियंत्रण होना चाहिए, संपूर्ण देश का पाठ्यक्रम एक होना चाहिए, शिक्षा कम खर्चीली हो ताकि सभी वर्गों तक पहुंच सके। शिक्षा कौशल के साथ-साथ नैतिकता से संपन्न व मूल्यपरक हो ।

आलोच्य उपन्यासों में शिक्षा के बाजारीकरण का प्रभाव प्रतिष्ठित पदों पर विराजमान अधिकारी व डाक्टरों पर भी देखने को मिलता है जो जन कल्याण की अपेक्षा भ्रूण जांच व भ्रूण हत्या जैसे जघन्य कृत्य को करते हुए तनिक भी नहीं शर्माते ।

प्रश्न:—सांप्रदायिक सद्भावना को कैसे बढ़ाया जा सकता है ?

आलोच्य उपन्यासों में एक दूसरे के धर्म का सम्मान, सांझे सांस्कृतिक कार्यक्रम, एक दूसरे के तीज-त्योहारों में शामिल होकर सांप्रदायिक सद्भावना को बढ़ाने का संकेत किया गया है। व्यवहारिक अध्ययन में समर्थन किया गया है कि भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है। अतः सभी धर्मों का सम्मान शिक्षा व्यवस्था की समानता में राजनीति को धर्म से पृथक रखकर सोचना सांप्रदायिक सद्भावना के संवर्धन से संभव है। विद्वेष फैलाने वाले संगठनों पर प्रतिबंध लगाया जाए। धर्म जाति के नाम पर भड़काऊ पोस्ट डालने वाले सोशल मीडिया को भी बैन किया जाए। इन सभी बातों का पालन करके सांप्रदायिक सद्भावना को बढ़ाया जा सकता है।

प्रश्न:—साहित्य में मीडिया के गिरते स्तर के लिए आप किन कारणों को उत्तरदाई ठहराते हैं ?

व्यवहारिक अध्ययन में अधिकांश लोगों का मतव्य है कि साहित्य व मिडिया में नैतिकता की कमी, राजनीतिक विचारधारा को पुष्ट करने की चाहत, वास्तविकता को प्रकट नहीं करने की असमर्थता, बाजारीकरण और केवल आर्थिक मूल्य की प्रधानता ने साहित्य व मीडिया के स्तर को गिराने के लिए उत्तरदाई हैं।

आलोच्य उपन्यासों में दर्शाया गया है कि विलासिता के तड़के से परिपूर्ण पत्रिकाएं, योग पर भोगवाद का लेप, अर्धनग्न चित्रों से पत्रिकाओं में आकर्षण पैदा करना, नैतिकता विहीन दूरदर्शन कार्यक्रम, दूरदर्शन के चलचित्रों में किसी भी खास धर्म के नायक की दूसरे धर्म पर विजय दिखाना यह सब दृश्य बच्चों की मानसिकता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं।

प्रश्न:—राजनीतिक जीवन मूल्यों के विघटन के क्या कारण हैं ?

व्यावहारिक अध्ययन में अधिकतर लोगों का मतव्य है व्यक्तिगत स्वार्थ व महत्वकाक्षाएं, परिवारवाद की भावना, राष्ट्रीय चरित्र का अभाव, नेताओं का चारित्रिक व नैतिक पतन गैर जिम्मेदारी, ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा का अभाव यह सब राजनीतिक जीवन मूल्यों के विघटन के कारण स्वीकार किए गए हैं।

आलोच्य उपन्यासों में भाई-भतीजावाद, नेताओं का अवसरवादी होना, जाति धर्म व संप्रदाय के नाम पर वोटों का ध्रुवीकरण करना, सांप्रदायिकता का जहर घोलकर वोट बैंक बनाना, नेताओं की सत्ता लोलुपता यह सब राजनीतिक जीवन मूल्यों के पतन के कारण बताये गए हैं।

निष्कर्ष—

मानव जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए उपर्युक्त सभी मूल्यों की प्राप्ति आवश्यक है। इनके सुंदर संतुलन से जीवन सुखी होता है और व्यक्तित्व समन्वित। केवल एक-दो मूल्य-आयामों को, जैसे केवल भौतिक जीवन के मूल्यों को अथवा इसके विपरीत केवल आध्यात्मिक मूल्यों को, एकमात्र मूल्य मान लेने से जीवन असंतुलित हो जाता है। आज के जीवन का प्रमुख मूल्य संकट यह है कि व्यवहार के स्तर पर तो हम केवल भौतिक मूल्यों की प्राप्ति के प्रयास करते हैं पर आदर्श के स्तर पर केवल आध्यात्मिक मूल्यों की चर्चा करते हैं। इस पाखंड से व्यक्तित्व खंडित हो जाता है और जीवन तनावपूर्ण। जीवन मूल्यों का उनकी व्यापकता और समग्रता में अनुशीलन ही इस व्यथा से मुक्ति का मार्ग दिखा सकता है। भारतीय मूल्य-व्यवस्था के पुरुषार्थ-चतुष्टय का आदर्श जीवन मूल्यों की व्यापकता और

समग्रता का सशक्त प्रतिपादन करता है। मानव जीवन को सुखी और उत्कृष्ट बनाने वाले सभी श्रेय और प्रेय मूल्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की श्रेणियों के अंतर्गत समाहित होते हैं। इन श्रेय और प्रेय मूल्यों के संतुलित अनुशीलन से मानव जीवन सुखी होता है और व्यक्तित्व समन्वित। पारंपरिक मूल्य चिंतन में व्यक्ति के उत्कर्ष को ही अधिक महत्त्व दिया गया है, अच्छे समाज के निर्माण हेतु मूल्यगत सिद्धान्तों के विकास पर कम। अतः आज सर्वाधिक आवश्यकता इस बात की है कि आज के जीवन की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए, आज की और आने वाले कल की चुनौतियों का सामना करने की चेष्टा करें।

उपसंहार

उपसंहार

साहित्य समाज का दर्पण होता है। साहित्य की कोई भी विधा हो उसमें समाज में घटित होने वाले व्यवहारों का विश्लेषण मूल्यांकन व मार्गदर्शन निहित रहता है। वह समाज में घटित होने वाले मूल्यों के प्रति सावधान ही नहीं करता अपितु सराहनीय नवीन मूल्यों का समर्थन कर प्रेरणा का स्रोत भी बनता है। इस शोध में अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक मूल्यों का गहनता से विश्लेषण किया गया है।

धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'खिलने से पहले' में सैफी के माता-पिता, '...और कितनी' उपन्यास में शिवानी व 'ककून' उपन्यास में विनोद व रिया 'मचान' उपन्यास में जगदीश व सुनन्या के माध्यम से तथा अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'हे पिता' में अमर व राज 'अपने-अपने अंधेरे' उपन्यास में राजेश व शीला 'वे अठारह दिन' उपन्यास में समरजीत व राधा, 'अधूरी प्रेम कथा' में सेठ जयराम व उसके परिवार, 'इति प्रेम कथा' उपन्यास में दिशा व राजन 'एक अधूरी प्रेम कथा' में वंदना व अविनाश दंपति युगलों के माध्यम से परस्पर अविश्वास वैचारिक समता का अभाव, अशिक्षा, पारस्परिक दुर्व्यवहार, अनैतिक प्रेम, शारीरिक अपवित्रता, अनमेल विवाह, अहं की भावना, विवाहेतर प्रेम, स्वैराचार, कामान्धता के कारण पारिवारिक जीवन मूल्य स्नेह, सौहार्द, सामंजस्य, समर्पण, विश्वास आत्मीयता, शुचिता व दांपत्य संबंधी जीवन मूल्यों का विघटन दर्शाते हुए उनके महत्व को प्रकट किया गया है। धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'खिलने से पहले' में सैफी के माता-पिता 'बेटी हूँ न' उपन्यास में पात्र कुंवरनारायण '...और कितनी' में शिवानी तथा अमृतलाल मदान के उपन्यास 'अमर प्रेम कथा' में सरिता व उसके बेटे 'इति प्रेम कथा' उपन्यास में शीला व उसकी बेटी दिशा, 'वे अठारह दिन उपन्यास' में अमरजीत व उसके बेटे के माध्यम से संयुक्त परिवार विघटन, पुत्र की चाहत, पुत्र व पुत्री में असमानता, समय का अभाव, ऐश्वर्यपूर्ण जीवन जीने की लालसा, व्यक्तिवादिता आदि के कारण माता-पिता व संतान विषयक पारिवारिक जीवन मूल्यों ममता, आदरभाव, समर्पण, कर्तव्यपरायणता, समानता एवं सहनशीलता आदि के महत्व को उजागर करते हुए विघटन करने वाले कारकों की ओर संकेत किया गया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'मचान' में चंचल व उसके सास-ससुर '...और कितनी' उपन्यास में शिवानी और उसके सास-ससुर तथा अमृतलाल मदान के उपन्यास 'एक समानांतर प्रेम कथा' में सरिता व उसके पुत्र-पुत्रवधू 'एक अधूरी प्रेम कथा' उपन्यास में अमर व उसकी पुत्रवधू के माध्यम से दुर्व्यवहार, लालच, दहेज पारिवारिक व्यस्तता, रिश्तेदारों का अनावश्यक हस्तक्षेप, अनादर, व्यक्तिगत सुख की चाहत, आदि के कारण प्रेम, आदर्श, सेवा, श्रद्धा, सद्भावना, दयालुता, त्याग, कर्तव्यनिष्ठा आदि मूल्यों के महत्व को समझाते हुए विघटनकारी तत्वों का विश्लेषण किया गया है।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में सैफी व उसकी दादी उपन्यास 'मचान' में शालू व उनकी दादी तथा अमृतलाल मदान के उपन्यास 'विराट बोना' में मिश्रा के बच्चों व उनके दादा 'वे अठारह दिन' उपन्यास में समरजीत, राधा व उनके पोता-पोती 'एक समानांतर प्रेम कथा' उपन्यास में दिशा की बेटी व उसके दादा-दादी के माध्यम से एकल परिवार का बढ़ता प्रचलन, नगरीकरण, औद्योगिकरण, माता-पिता का प्रेम विवाह, पोते की चाहत, पारिवारिक दूरियाँ, वृद्धों की उपेक्षा के कारण दादा-दादी व पोता-पोतियों के मध्य में, त्याग, समानता, सद्भावना, आपसी सहयोग, सम्मान, समर्पण इत्यादि पारिवारिक जीवन मूल्यों के विघटन को दर्शाने के साथ-साथ इन मूल्यों के महत्व पर प्रकाश डाला है।

अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'दूसरा अरुण' के पात्र अरुण व 'बंद होते दरवाजे' उपन्यास में उमाकांत वर्मा के बच्चों तथा धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' सैफी के माता-पिता 'बेटी हूँ ना' उपन्यास में डेविड व डायना के माध्यम से आधुनिक शिक्षा, नगरीकरण, भूमंडलीकरण के प्रभाव के कारण परंपरागत जाति व्यवस्था को तोड़कर अंतरजातीय विवाह के माध्यम से एक नवीन मूल्य की स्थापना की गई है।

सांस्कृतिक जीवन मूल्यों के अंतर्गत खान-पान, रहन-सहन, वेशभूषा, तीज-त्यौहार रीति-रिवाज, मेले, परंपराएं एवं वैवाहिक मूल्यों का समावेश होता है। अमृतलाल मदान 'बंद होते दरवाजे' उपन्यास में मोहित की पत्नी रिया 'दूसरा

अरुण' उपन्यास के पात्र शीला तथा धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' के पात्र सैफी के माता-पिता, सुमित्रा व सेवादास के माध्यम से भारतीय खान-पान, रहन-सहन वैश्वीकरण के सकारात्मक व नकारात्मक दोनों पहलुओं को उजागर किया है।

अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'बंद होते दरवाजे' की पात्र रिया के माध्यम से शिक्षा व वैश्वीकरण के कारण घर बैठे शेयर मार्केट से धनार्जन करने का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत किया गया है। आलोच्य उपन्यासों में दिखाया गया है कि भूमंडलीकरण के कारण लोगों के जीवन स्तर में तो सुधार हुआ है परंतु भोगवाद, व्यक्तिवाद एवं आत्मसुख की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण वृद्ध-सेवा, आरोग्यता, सेवा-भावना, आतिथ्य-सत्कार, सादगी, सहजता, सरलता, निष्कपटता, सत्यता आदि का विघटन भी दर्शाया गया है, वहीं सुमित्रा व सेवादास जैसे दंपति पात्रों के माध्यम से उक्त मूल्यों के महत्व को उजागर किया गया है।

धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास में 'मचान' में छिज मेले व 'समझौता एक्सप्रेस' उपन्यास में सभ्याचारक मेले के माध्यम से दर्शाया गया है कि भारतीय संस्कृति के आधारभूत मेले जन सामान्य के मनोरंजन के लिए ही नहीं होते अपितु वे प्रेम व सहयोग का संचार करते हुए परस्पर सौहार्द, लोकमंगल, भाईचारा, प्रेम, सद्भावना तथा सांस्कृतिक एकता की भावना का संचार सहजता से कर देते हैं। भारतीय परंपरा में तीज त्योहार ऐसे अवसर होते हैं जब प्रत्येक व्यक्ति खुशी व आनंद से झूम उठता है परंतु आज वैश्विक प्रभाव के कारण मनुष्य के व्यक्तिगत आनंद की चाहत ने रेव पार्टी, डेजी चैन पार्टी, किटी पार्टी के प्रचलन के महत्त्व को बढ़ा दिया है। धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास '...और कितनी?' में एक रश्मि के माध्यम से बच्चे की अभिरुचि के मनोविज्ञान को समझने का प्रयास किया है, जिसके आधार पर उसके भविष्य की कल्पना की जा सकती है। 'बेटी हूं न' उपन्यास में पहला लड़का या लड़की पैदा होने संबंधी रिवाज के माध्यम से उस समाज पर कुठाराघात किया है जो लड़की पैदा होने पर उसको मिट्टी के बर्तन में जिंदा ही रखकर धरती में दबा देते हैं व लड़का पैदा होने पर अतिशबाजी करते हैं। इसी

उपन्यास में उपन्यासकार ने पात्र कुंवर नारायण के माध्यम से इस रिवाज के प्रति विद्रोह दिखाया गया है जो समानता नामक मूल्य का पोषक है।

धर्मपाल साहिल अपने उपन्यास 'खिलने से पहले' में मैडम कुमार व हर्षिता के माध्यम से समलैंगिक विवाह को नवीन मूल्य के रूप में दर्शाते हैं जो भारत में अधिक प्रचलन में है। यह सब वैश्वीकरण का प्रभाव है। अमृतलाल मदान 'इति प्रेम कथा' उपन्यास में साध्वी सरला के माध्यम से लिव इन रिलेशनशिप तथा उस से संतान उत्पत्ति के रूप में एक नूतन मूल्य स्थापना करते हैं जो आजकल भारत में देखने को मिलता है। धर्मपाल साहिल अपने उपन्यास 'मचान' में चंचला व दिलबाग 'खिलने से पहले' उपन्यास में सुमित्रा व सेवादास पति-पत्नी युगलों के माध्यम से दर्शाया गया है कि परस्पर प्रेम, वफादारी, सम्मान, शुचिता आदि पारिवारिक मूल्यों का निर्वहन करते हुए आनंद पूर्वक जीवन व्यतीत किया जा सकता है। परंपरागत पद्धति से परिवार के बड़े लोगों द्वारा किए गए वैवाहिक संबंधों को दृढ़ता प्रदान की गई है। वहीं अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'अपने-अपने अंधेरे' में प्रदीप व मोहिनी, धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'खिलने से पहले' में मैडम कुमार व हर्षिता पात्रों के माध्यम से पारंपरिक वैवाहिक मूल्यों के विघटन के साथ लिव इन रिलेशन व होमो रिलेशन के रूप में नूतन वैवाहिक मूल्यों का प्रचलन दिखाया है, जो वैश्वीकरण का प्रभाव है।

भारत में शिक्षा का उद्देश्य वैदिक काल से व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास रहा है। भारतीय ऋषि-मनीषा इस बात पर जोर देती रही कि मूल्यों को पाठ्यक्रम के माध्यम से छात्रों पर नहीं थोपा जा सकता। अध्यापक के व्यवहार में मूल्यों का समावेश कर के छात्रों के मूल्य पुष्ट होने की आशा की जा सकती है। अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास एक और त्रासदी के पात्र अध्यापक रामलुभाया व धर्मपाल साहिल ने 'खिलने से पहले' की पात्र सुमित्रा मैडम के माध्यम से शिक्षा के आदर्श रूप को दिखाया है। वैश्वीकरण के इस दौर में जब छात्र मात्र व्यवसायिक शिक्षा की ओर भाग रहे हैं। ऐसी दशा में शिक्षक व्यवसायिक शिक्षा के साथ किस प्रकार बच्चों में मूल्यों का विकास कर सकते हैं। भारतीय राजनीति में राजा को एक आदर्श के रूप में देखा जाता था। राजनीति को न केवल धर्म से जोड़कर देखा

गया अपितु राजनीति को धर्म के एक सिद्धांत के रूप में अंगीकार किया गया। परंतु वर्तमान राजनीति अपने लोक कल्याण के मार्ग से भटक गई है। अवसरवादिता, भाई-भतीजावाद, जातीयता, सांप्रदायिकता, अनुशासनहीनता, रिश्वतखोरी, चोर-बाजारी व भ्रष्टाचार जैसे कारकों ने राजनीति को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। धर्मपाल साहिल अपने उपन्यास की पात्र चंदा तथा अमृतलाल मदान 'एक अधूरी प्रेम कथा' के पात्र विश्वप्रेमानंद के माध्यम से यह समझाने में सफल रहे किस प्रकार राजनीति धर्म का आश्रय लेकर वोट बैंक को लुटती है व राजनीति का आशीर्वाद प्राप्त कर कथित संत चंदा जैसी औरतों को बलात्कार का शिकार बना लेते हैं।

भारतवर्ष धर्मनिरपेक्ष देश है। प्रत्येक व्यक्ति किसी भी धर्म को स्वेच्छा से अंगीकार कर सकता है व प्रत्येक नागरिक से आशा की जाती है कि अपने धर्म को महत्व देने के साथ-साथ दूसरों के धर्म का भी सम्मान करें। अमृतलाल मदान के उपन्यास 'विराट बोना' के पात्र विमल 'बंद होते दरवाजे' उपन्यास में उमाकांत वर्मा के माध्यम से सांप्रदायिक कट्टरता पर कठोर प्रहार किया गया है। जिसका लाभ आधुनिक राजनीति वोटों के लिए उठाकर वोटों का ध्रुवीकरण कर रही है। अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'अमर प्रेम कथा' में धर्म के सांप्रदायिक रूप का विरोध किया है परंतु धर्म के आध्यात्मिक रूप का समर्थन भी किया है।

धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'बायोस्कोप' के पात्र मास्टर जी के माध्यम से उन मौकापरस्त स्वार्थी राजनेताओं पर कटाक्ष किया है जो मात्र वोट के समय भोली-भाली जनता को लूटने आ जाते हैं। लोक कल्याण से उनका कोई वास्ता नहीं होता।

धर्मपाल साहिल के उपन्यास 'बेटी हूँ न' के पात्र कुंवरनारायण के माध्यम से ऐसे नेताओं पर कठोर प्रहार किया है जो राजनीति का आश्रय लेकर लोकमंगल की अपेक्षा कन्या भ्रूण हत्या जैसे जघन्य अपराध को जन्म देते हैं। धर्मपाल साहिल ने अपने उपन्यास 'बायोस्कोप' के पात्र रणविजय व 'ककून' उपन्यास में प्रिया के पति के माध्यम से देश भक्ति मूल्य का पोषण किया है। वहीं पर भाग सिंह जैसे भीरु पात्र के माध्यम से देश भक्ति को तुच्छ समझने वाले लोगों की निंदा भी की है।

राजनीति में भ्रष्ट व्यक्तियों का प्रवेश, राजनीति की सेवा का अवसर न मानकर व्यवसाय मानना, स्वार्थपरकता, भाई-भतीजावाद, घूसखोरी व भ्रष्टाचार ने राजनीतिक मूल्यों को नष्ट किया है।

धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की चर्चा करने वाली जिस भारतवर्ष में धर्म को कर्तव्य के पर्याय के रूप में देखा जाता है वही धर्म से हीन व्यक्ति को पशुओं की संज्ञा दी जाती है। अमृतलाल मदान ने अपने उपन्यास 'अमर प्रेम कथा' के माध्यम से आजकल के संतों व आश्रमों के संचालकों पर कुठाराघात किया है जो धर्म का आश्रय लेकर विलासिता का जीवन यापन करते हैं और जो धर्म का बाजारीकरण करते हैं।

भारतीय चिंतन धर्म के साथ अर्थ के उपार्जन का समर्थक रहा है, वहीं वर्तमान में धन के बढ़ते महत्व ने अर्थ को जीवन यापन करने का साधन ही नहीं अपितु साध्य मान लिया है। धर्म को भूलाकर येन केन प्रकारेण उचित या अनुचित तरीके से भी धन अर्जन करने में संकोच नहीं किया जाता है। अतः मानव की धन-संपत्ति अर्जित करने की प्रवृत्ति ने भ्रूण हत्या, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, बलात्कार, खून व चौरी को जन्म दिया। अमृतलाल मदान अपने उपन्यास 'बंद होते दरवाजे' के पात्र उमाकांत व रिया 'दूसरा अरुण' उपन्यास के पात्र अरुण तथा धर्मपाल साहिल अपने उपन्यास 'मचान' के पात्र मास्टर कुंज कुमार 'बेटी हूँ न' उपन्यास के पात्र कुंवर नारायण तथा 'ककून' उपन्यास के पात्र विनोद '...और कितनी' उपन्यास के पात्र कन्नू 'आर्तनाद' उपन्यास के पात्र रोहित के माध्यम से लालच, असंतोष, भूमंडलीकरण का प्रभाव, भौतिकतावाद की होड़, दिखावा, आय से अधिक व्यय आदि के कारण पारंपरिक आर्थिक जीवन मूल्य कर्तव्यनिष्ठा, ईमानदारी, आत्मनिर्भरता, उचित साधनों द्वारा धनार्जन, धन का उचित उपयोग आदि मूल्यों के महत्व को बताते हुए उनके विघटन को दर्शाया गया है।

इस शोध में अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक मूल्यों का गहनता से विश्लेषण किया गया है। शोध के उपरांत यह निष्कर्ष सामने आया कि जो मूल्य समाज की प्रगति में बाधक

हैं उनका उपन्यासकारों ने विरोध किया व जो नवीन मूल्य समाज को नई दिशा प्रदान करते हैं उनका समर्थन किया है। सामाजिक व पारिवारिक जीवन मूल्यों के अंतर्गत पति—पत्नी, माता—पिता व संतान सास—ससुर और बहू, दादा—दादी व बच्चों के संबंधों को दृढ़ता प्रदान करने वाले जीवन मूल्य पारस्परिक विश्वास, प्रेम, सहयोग, सेवा—भावना का पोषण किया गया है। वहीं नवीन मूल्यों के अंतर्गत अंतरजातीय विवाह, नारी समानता, स्वतंत्रता, सांप्रदायिक सद्भाव जैसे नवीन मूल्यों की स्थापना की गई है। धर्मपाल साहिल अपने उपन्यास 'खिलने से पहले' में जहाँ समलैंगिक विवाह की ओर संकेत करते हैं वही अमृतलाल मदान अपने उपन्यास 'इति प्रेम कथा' में लिव इन रिलेशनशिप का समर्थन करते हैं।

आलोच्य उपन्यासों में सांस्कृतिक मूल्यों के अंतर्गत धर्म व संस्कृति का संबंध, भारतीय रहन—सहन, खान—पान, मेले, रीति—रिवाज, परंपराओं, विवाह शिक्षा व धर्म से संबंधित परंपरागत सांस्कृतिक मूल्यों का विश्लेषण कर उन में हो रहे परिवर्तनों को उजागर किया गया है। आधुनिकता, वैश्वीकरण व नगरीकरण के भारतीय जनमानस पर पड़ने वाले उभयविध सकारात्मक व नकारात्मक प्रभावों को उजागर किया गया है। भारतीय संस्कृति को अपने विशिष्ट गुणों सर्वांगिणता, विशालता, उदारता और सहिष्णुता जैसे सांस्कृतिक मूल्यों की शिक्षिका के रूप में दर्शाया गया है।

आर्थिक मूल्यों के अंतर्गत दोनों उपन्यासकारों ने श्रमनिष्ठा को महत्वपूर्ण मूल्य के रूप में अंगीकार किया है। स्त्री की आत्मनिर्भरता रूप में नवीन मूल्य की स्थापना दोनों उपन्यासकारों का प्रयास रहा है। धनार्जन करने के अनुचित तरीकों की निंदा की गई है। अमृतलाल मदान ने धर्म का चोला पहनकर राजनीति करने वाले भ्रष्ट नेताओं की अवसरवादिता को उकेरा है व धर्मपाल साहिल ने उच्च प्रशिक्षित नेताओं और डॉक्टरों द्वारा कन्या भ्रूण हत्या जैसे घिनोने कार्य को उजागर कर शिक्षा के बाजारीकरण के दुष्प्रभावों को उजागर किया है।

संवैधानिक मूल्यों के अंतर्गत न्याय, स्वतंत्रता, समता व बंधुता आदि मूल्यों का पोषण व विघटन दर्शाया गया है। इन मूल्यों के संरक्षण के लिए सरकार ने नियम व कानून तय किए हैं परन्तु आलोच्य उपन्यासों में स्वार्थी नेताओं, भ्रष्ट अफसरों, अवसरवादी नेताओं द्वारा समाज सेवा, देशभक्ति, बंधुता, एकता, श्रमनिष्ठा जैसे राजनीतिक मूल्यों का विघटन दर्शाया गया है। राजनीति में व्याप्त भाई-भतीजावाद, भ्रष्टाचार रिश्वतखोरी व अवसरवादिता परम्परागत राजनीतिक मूल्यों देश-भक्ति, देश-प्रेम, कर्मनिष्ठता व ईमानदारी के विघटन के कारक दिखाए गए हैं।

आलोच्य उपन्यासकारों के उपन्यासों पर भविष्य में जिन विषयों पर शोध कार्य हो सकता है, वह निम्नलिखित हैं—

- अमृतलाल मदान के उपन्यासों में प्रेम तत्व एक विमर्श।
- अमृतलाल मदान के उपन्यासों में सांप्रदायिक सौहार्द।
- अमृतलाल मदान के उपन्यासों में मानव मूल्य।
- अमृतलाल मदान के उपन्यासों में सामाजिक विमर्श।
- धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में युग बोध।
- धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में नारी विमर्श।
- धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में कंडी क्षेत्र के संदर्भ में आंचलिकता।

उपन्यासकारों से साक्षात्कार

अमृतलाल मदान जी के साथ साक्षात्कार के कुछ अनुभव—

उपन्यासकार महोदय अमृतलाल मदान जी से मिल कर अपना व अपने शोध के विषय 'अमृतलाल मदान एवं धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन' का परिचय दिया। उसके पश्चात मेरी जिज्ञासाओं के लिए प्रश्नों का सिलसिला शुरू किया।

प्रश्न: सर्वप्रथम अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि के विषय में बताएं?

उत्तर: अविभाजित भारत में डेरा गांजी खां जिला के अंतर्गत तौसा शरीफ में मेरा जन्म हुआ। भारत पाक विभाजन के दौरान मुझे अपनी जड़ों से निर्मूल होकर सपरिवार भारतवर्ष आना पड़ा। पहली कक्षा से लेकर के और उच्च शिक्षा भारतवर्ष में ही हुई। उस समय परिवार नियोजन की कोई व्यवस्था नहीं थी। मेरे बड़े होते-होते मेरे परिवार में हम नौ भाई बहन थे। बड़ा परिवार होने के कारण मुझे पिता जी के साथ बहुत संघर्ष करना पड़ा। संघर्ष जो जीवन में नहीं होता तो हो सकता है कि मैं आज यहाँ इस मुकाम पर नहीं होता। मेरे निजी परिवार में एक बेटा और दो बेटियां हैं।

प्रश्न: आप अंग्रेजी के प्रोफेसर रहे हैं, आपकी हिंदी साहित्य में अभिरुचि किस प्रकार जागृत हुई ?

उत्तर: हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाएं हैं। दोनों का अपना समृद्ध साहित्य हैं परंतु हिंदी में अपनी भावनाओं को व्यक्त करना आसान होता है। जब मैं हिंदी और अंग्रेजी को लेकर असमंजस में था तो मैंने पंजाब विश्वविद्यालय चंडीगढ़ के हिंदी विभाग अध्यक्ष इंद्रनाथ मदान को बड़ा भाई मान करके पत्र लिखा कि मुझे कौन सी भाषा को अपनाना चाहिए। उनका सुझाव आया आपको व्यवसाय के लिए एम. ए. अंग्रेजी विषय में करना चाहिए और जब आपको नौकरी मिल जाए तब आप हिंदी में लेखन जारी रख सकते हैं। जब भी मुझसे कोई यह प्रश्न करता है कि आप इंग्लिश के

प्रोफ़ेसर होते हुए भी आपने हिंदी को क्यों अपनाया? तो मैं कहता हूँ कि इंग्लिश मेरे पेट की भाषा है हिंदी मेरे मन और मस्तिष्क की भाषा है।

प्रश्न: आपने साहित्य की अनेक विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है, आपको कौन सी विधा में अधिक संतुष्टि मिलती है?

उत्तर: जब मैं नाटक लिखता हूँ तो अधिक सहज होता हूँ। नाटक में पात्रों का घात प्रतिघात होता है। नाटक में द्वंद्व और अन्तर्द्वन्द्व की संभावना अधिक होती है। विभाजन की त्रासदी ने मेरे को अंदर से झकोरा था क्योंकि मेरे बालमन में प्रश्न उठते थे कि ऐसा क्यों हुआ? क्यों राजनीति ऐसा करती है? क्यों और कैसे के प्रश्नों के उत्तर नाटक में पात्रों के संवादों के घात और प्रतिघात से मिलने की संभावना अधिक होती है। अतः नाटक मेरी प्रिय विधा है।

प्रश्न: आपको लिखने के लिए किसने प्रोत्साहित किया? आपकी प्रथम रचना क्या है?

उत्तर: संघर्ष, चिंता व अभाव के कारण मेरी अंतरात्मा से कविता निकली। मैंने सबसे पहले कविता लिखना शुरू किया। लेखन के क्षेत्र में मेरे को सर्वाधिक प्रभावित करने वाले सरदार शोभा सिंह जी थे। एक बार मैं अपने जीजा के साथ हिमाचल गया वहाँ पर सुप्रसिद्ध चित्रकार सरदार शोभा सिंह जी गुरु नानक देव जी की मिट्टी का बुत बना रहे थे। जब मैं शोभा सिंह से मिला तो मैंने कहा कि मैं कुछ लिखना चाहता हूँ तो उन्होंने तपाक से कहा गुरु नानक देव पर लिखना शुरू करो इससे बड़ा व्यक्तित्व कहाँ मिलेगा? उसी समय गुरु नानक देव जी की जन्मशती समारोह के उपलक्ष्य में पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला द्वारा अंग्रेजी, हिंदी में पांडुलिपि मांगी गई थी तो मैंने गुरु नानक देव पर प्रबंध काव्य लिखना आरंभ किया। उदयभानु हंस ने गुरु गोविंद सिंह पर 'संत सिपाही' नामक शीर्षक से महाकाव्य लिखा था। उसको बहुत प्रसिद्धि मिली। इससे प्रेरित होकर मैंने अपने प्रबंध काव्य का नाम 'संत महात्मा' रखा और पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला द्वारा इसको प्रकाशित किया गया। इस प्रबंध काव्य को डॉ मनमोहन सहगल के पास मूल्यांकन के लिए भेजा गया जो कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग के अध्यक्ष थे। उन्होंने 'संत महात्मा'

प्रबंध काव्य की काफी प्रशंसा की। इस रचना से प्रसन्न होकर के कुलपति सरदार कृपाल सिंह नारायण मुझ से मिले और उन्होंने कहा कि छोटी सी आयु में यह बड़ी अद्भुत रचना आपने की है।

प्रश्न: आपका उपन्यास 'अपने-अपने अंधेरे' समाज को क्या संदेश देता है ?

उत्तर: प्रत्येक उपन्यास में कोई न कोई संदेश निहित होता है। प्रत्यक्ष रूप से अपने-अपने अंधेरे उपन्यास युवाओं की भटकन की ओर संकेत करता है और परोक्ष रूप से यह आचरण की शुद्धता पर बल देता है। शिक्षक का चरित्र संयमित होना चाहिए यह प्रमुख शिक्षा इस उपन्यास में निहित हैं।

प्रश्न: विराट बौना उपन्यास में 'बौना' शब्द की कल्पना कैसे की है?

उत्तर: मनुष्य के मन में आसुरी व दैवी दोनों शक्तियों का वास होता है। यहाँ पर व्यक्ति की प्रबल सकारात्मक शक्ति का नाम विराट है और वह नकारात्मक शक्ति जो मनुष्य को पीछे की ओर खींचती है उसका नाम बौना है। यह प्रतीकात्मक रचना है।

प्रश्न: भारत पाक विभाजन जो एक त्रासदी थी, उसको आपने स्वयं भोगा है क्या आप ने इस पीड़ा को अपने उपन्यासों में स्थान दिया है?

उत्तर: हाँ, भारत पाक विभाजन को मैं एक बहुत भयंकर त्रासदी मानता हूँ। मैंने अपने उपन्यास 'सिन्धुपुत्र' और 'एक और त्रासदी' में इस भयंकर त्रासदी का वर्णन किया है। इस त्रासदी ने मेरे परिवार को निर्मूल कर भारत आने को मजबूर किया। संघर्ष के कारण मैं आज कवि हूँ। यदि यह त्रासदी नहीं आती तो मैं आज सामान्य जीवन जी रहा होता।

प्रश्न: आप के उपन्यासों के कथानक सत्य घटनाओं पर आधारित होते हैं या काल्पनिक?

उत्तर: हर लेखक की रचना में यथार्थ निहित होता है। वह जग बीती और आप बीती का वर्णन करता हुआ कल्पना का भी सहारा लेता है। उसकी अपनी दृष्टि तथा वैचारिक दबाव भी लेखन को प्रभावित करता है।

प्रश्न: अंतरजातीय विवाह व 'लिव इन रिलेशनशिप' जिनको आपने अपने उपन्यासों में भी उकेरा है। उन्हें आप कहाँ तक उचित मानते हैं?

उत्तर: मैं अंतरजातीय विवाह का समर्थन करता हूँ। बड़ा दुःख होता है, जब मैं समाचार पत्रों में ऑनर किलिंग के मामले देखता हूँ। जहाँ तक बात लिव इन रिलेशनशिप की है, यह पश्चिम की देन है। मैं भारत के परिप्रेक्ष्य में इसका समर्थन इसलिए नहीं करता क्योंकि इसमें शारीरिक आकर्षण को महत्व दिया जाता है। एक दूसरे के प्रति प्रतिबद्धता नहीं होती। बहुत सारे मामलों में देखा जाता है कि अंत में स्त्री को उसके बड़े दुष्परिणाम भोगने पड़ते हैं, असुरक्षा और डर की भावना स्त्री के मन में बनी रहती है।

प्रश्न: धर्म व राजनीति का परस्पर आश्रय आप कहाँ तक उचित मानते हैं?

उत्तर: धर्म तथा राजनीति का गठबंधन सबसे अधिक खतरनाक, विषैला व मानवता के लिए घातक है। विभाजन की त्रासदी राजनीति की ही देन है, नहीं तो सदियों से हिंदू व मुसलमान एक साथ ही बड़े प्यार से रहते थे। जहाँ तक धर्म की बात है, मैं धर्म को व्यक्तिगत विषय मानता हूँ। धर्म के विषय में राज्य को दखल नहीं देना चाहिए। मैं धर्म के आध्यात्मिक रूप का समर्थन करता हूँ।

प्रश्न: युवा पीढ़ी संस्कार हीन हो गई है आप इसका क्या कारण आप स्वीकार करते हैं?

उत्तर: आजकल के युवाओं में परिवार के प्रति निष्ठा, आदरभाव का अभाव देखा जाता है। वे न तो परंपराओं का निर्वहन करते हैं और न ही धर्म को मानते हैं। मैं मानता हूँ मोबाइल ने एक नया अलगाव पैदा कर दिया है। बच्चे दूर बैठे लोगों से चैटिंग करते हैं पर पास में बैठे दादा-दादी और नाना-नानी से बात तक नहीं करते।

प्रश्न: दांपत्य जीवन मूल्यों के विघटन के क्या कारण हैं? इसके निवारण के लिए आप क्या सुझाव देंगे?

उत्तर: दांपत्य जीवन मूल्यों के विघटन का मुख्य कारण अहं की भावना है। आपसी विश्वास का अभाव, एक दूसरे के माता-पिता के प्रति अनादर का भाव विघटन का कारण बनता है। एक दूसरे के प्रति समर्पण, परस्पर विश्वास कर के विघटन को दूर किया जा सकता है।

प्रश्न: मीडिया व साहित्य के गिरते स्तर के लिए आप क्या कहना चाहेंगे?

उत्तर: आज के दिन में मीडिया अपनी टी.आर.पी. बढ़ाने को महत्व देता है। आरोप-प्रत्यारोप, अभद्र भाषा का प्रयोग, अनैतिक बहस यह सब बच्चों पर बड़ा बुरा प्रभाव डालती है। पक्ष तथा विपक्ष की पार्टियों की आपस में जो तर्क-वितर्क होते हैं, उसमें भी नैतिकता का समावेश नहीं होता और हल्ला बोल, मुकाबला ऐसे ही बड़े-बड़े शब्दों को जोड़ कर आक्रामकता दिखाई जाती है जिसमें कहीं ना कहीं देखने वालों पर गलत असर पड़ता है।

प्रश्न: आर्थिक जीवन मूल्यों में जो गिरावट आई है उसके लिए आप किन कारकों को उत्तरदायी मानते हैं ?

उत्तर: महंगाई, भ्रष्टाचार, नैतिकता व ईमानदारी की कमी आर्थिक समस्याओं के मुख्य कारण हैं। सरकारें जातीय और धार्मिक समस्याओं की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करती हैं परंतु आर्थिक समस्याओं का कोई समाधान प्रस्तुत नहीं करती यह एक बहुत बड़ा कारण है।

प्रश्न: आप स्वयं शिक्षक रहे हैं, वर्तमान में बच्चों के नैतिक विकास में आप शिक्षक की क्या भूमिका स्वीकार करते हैं ?

उत्तर: शिक्षक समाज का प्रतिनिधि होता है, शिक्षक के आदर्श व्यवहार से छात्र प्रभावित होते हैं। शिक्षक अपने स्टाफ रूम तक सीमित न रहे अपितु बच्चों के बीच में बैठे, बच्चों के साथ संस्कारों की बात भी करे।

प्रश्न: राजनीति शब्द का नाम सुनते ही नकारात्मक भावना मन में आती है। एक अच्छी राजनीति के क्या लक्षण हैं?

उत्तर: वह समय चला गया जब राजनीति को सेवा करने का अवसर समझा जाता था। बड़े खेद की बात है कि आज राजनीति को व्यवसाय समझा जाने लगा है। लाला लाजपत राय, भगत सिंह, जैसे देशभक्तों ने निस्वार्थ इस देश की सेवा की है। जनता की सेवा का मौका सोचकर राजनीति में ईमानदारी से काम करना चाहिए।

उपन्यासकार धर्मपाल साहिल जी के साथ साक्षात्कार के कुछ अनुभव

उपन्यासकार महोदय धर्मपाल साहिल जी से मिल कर अपना व अपने शोध के विषय 'अमृतलाल मदान एवं धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन' का परिचय दिया। उसके पश्चात मेरी जिज्ञासाओं के लिए प्रश्नों का सिलसिला शुरू किया।

प्रश्न: आपकी पारिवारिक पृष्ठभूमि के विषय में बताएं?

उत्तर: पंजाब के होशियारपुर में शिवालिक पहाड़ियों में एक क्षेत्र है, जिसे कंडी क्षेत्र कहते हैं। उसके अंतर्गत आने वाले तुंग गाँव में मेरा जन्म हुआ। आजादी के 75 वर्ष बाद भी यह इलाका पिछड़ा हुआ है। जब मैं यहाँ पढ़ता था स्कूल नहीं थे, सड़क नहीं थी। मैंने पांचवीं कक्षा गाँव के स्कूल से ही उत्तीर्ण की। पिता जी की नौकरी के कारण मैं देहरादून गया, वहीं पर मेरी सारी पढाई हुई। मैंने बी.एस.सी. एम.एस.सी. व एम.एड. वहीं से की। 1985 में मेरी शादी हुई। मेरी पत्नी कुशल गृहिणी है। दो बच्चे हैं बड़ी बेटी और छोटा बेटा। बेटी एम.फार्मा व एम.बी.ए. कर के जर्मनी के बर्लिन विश्वविद्यालय में शोध कार्य कर रही है और बेटा डॉ. राहुल शर्मा लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी जालंधर में मैकेनिकल इंजीनियर का प्रोफेसर है।

प्रश्न: लेखन के प्रति आपकी अभिरुचि किस प्रकार जागृत हुई ?

उत्तर: लेखन से पहले पढ़ने की अभिरुचि मेरी जागृत हुई। जब मैं छठी क्लास में पढ़ता था तो मुंशी प्रेमचंद की एक कहानी 'ईदगाह' के पात्र हामिद व दादी माँ ने मुझे प्रभावित किया और मेरे को साहित्य पढ़ने के लिए प्रेरित किया। हमारे पाठ्यक्रम में एक पुस्तक थी 'मुंशी प्रेमचंद की सर्वश्रेष्ठ कहानियां' जब मैंने मुंशी

प्रेमचंद जी की कहानी पढ़ी तो मुझे लगा कि जो कहानियां मैं अपनी दादा-दादी और नाना-नानी से सुनता हूँ वे उनसे अलग हैं। इस अभिरुचि के कारण मैंने मुंशी प्रेमचंद की सर्वश्रेष्ठ कहानियां पंच परमेश्वर, ईदगाह, दो बैलों की कथा, सवा सेर गेहूं को पढ़ा। ये सच है जहाँ चाह वहाँ राह है, मेरे एक सहपाठी थे जितेंद्र कुमार उनकी बड़ी बहन देहरादून की एक बड़ी लाइब्रेरी में लाइब्रेरियन थी। उन्होंने मुझे साहित्य पढ़ने की के लिए प्रेरित किया। मैंने विमल चंद्र, टैगोर तथा प्रेमचंद का बहुत सारा साहित्य वहाँ पर पढ़ा। साहित्य पढ़ते-पढ़ते मेरे लिखने की अभिरुचि जागृत हुई।

मेरे कॉलेज में एनुअल मैगजीन प्रकाशित होनी थी तो उसके लिए हिंदी विभाग ने नोटिफिकेशन जारी किया और सभी विभागों को पत्र लिखा यदि कोई अपनी रचना देना चाहता है तो प्रेषित करें। मैं हिंदी विभाग के विभागाध्यक्ष को अपनी कहानी दे कर के आया तो उन्होंने कहा कि यह कहानी आपने कहाँ से उड़ाई है तो मैंने जब उनको बताया कि हमारे ही कॉलेज में एनुअल फंक्शन पर एक लड़की थी जो देख नहीं सकती थी। वह वीणा बजा रही थी। उसको वीणा बजाते हुए मुझे लगा कि मुझे अपनी आंखें उसको दे देनी चाहिए। उसको आधार बनाकर के मैंने एक कहानी लिखी 'उपहार' वह उसी पर आधारित है।

प्रश्न: आप विज्ञान के अध्यापक रहे हैं, हिंदी साहित्य लेखन ने आप को कैसे आकर्षित किया ?

उत्तर: सृजन या साहित्य लेखन का किसी विषय से कोई संबंध नहीं है। यह आपकी संवेदना है, जो साहित्य का सृजन करवाती है। घटना आपके साथ घटित हो या अन्य किसी समाज या देश के साथ उस घटना के प्रति आपकी संवेदना ही साहित्य के रूप में प्रस्फुटित होती है। विज्ञान के कारण मेरे साहित्य में वैज्ञानिक दृष्टिकोण की झलक आपको देखने को मिलेगी। इसके आधार पर ही समाज में व्याप्त आडम्बरों, गलत रुढ़ियों व रश्मों का खंडन मैंने अपने साहित्य में किया है। अकेला मैं ही नहीं, हजारों ऐसे साहित्यकार आपको मिलेंगे जो विभिन्न भाषाओं के साहित्यकार हैं और जिनकी पृष्ठभूमि विज्ञान की रही है।

प्रश्न: साहित्य की कौन सी विधा पर आप ने सर्वाधिक कार्य किया है ?

उत्तर: मेरी साहित्य सृजन की शुरुआत लघुकथा से हुई। मैं साइंस का विद्यार्थी था तो मुझे साहित्य की विधाओं का अधिक ज्ञान नहीं था। मैं तो इसको छोटी कहानी समझता था। बाद में मुझे पता चला कि यह तो लघुकथा के दायरे में आती है अतः मेरी शुरुआत लघुकथा से हुई। मेरी पहचान भी लघु कथाकार के रूप में हुई। 1988 में हरियाणा के शहर कैथल में मेरे लघुकथा संग्रह नरगिस का लोकार्पण हुआ लेकिन मुझे लगा लघु कथा में, मैं अपनी बात पूरी तरह से नहीं कह पाता हूँ। मैं कहानी की ओर मुड़ा और मैंने 'किसी भी शहर में', और 'नीलकंठ' कहानी संग्रह लिखे। मुझे लगा की कहानी 15 से 20 पृष्ठ की लंबी हो जाती है और मेरे मन की बात अधूरी रह जाती है इसलिए उपन्यास लेखन की ओर मेरा झुकाव हुआ। विभाजन की त्रासदी को लेकर लिखा गया मेरा पहला उपन्यास 'समझौता एक्सप्रेस' है। अब तक आठ उपन्यास मैंने लिखे हैं।

प्रश्न: आपके उपन्यास ककून में क्या संदेश निहित है, ककून नाम की संकल्पना का विचार आपके मन में कैसे आया ?

उत्तर: आज हम पदार्थवादी सोच के कारण स्वार्थी हो गए हैं। हमारे बच्चों में भी स्वार्थपरता आ गई है। रेशम का कीड़ा शहतूत के पत्ते खाकर रेशम पैदा करता है और उसकी बदकिस्मती यह है कि यह रेशम पैदा करके अपने शरीर के चारों ओर लपेट लेता है, उसे ककून कहते हैं। उसकी त्रासदी यह है, जब उस ककून से रेशम को अलग करना होता है तो उसे उबलते हुए पानी में डाला जाता है जिस कारण कीड़ा मर जाता है और रेशम को अलग कर लिया जाता है। इसी प्रकार हम अपने रिश्ते नाते अपने चारों ओर बुन लेते हैं और एक दिन उस रेशम के कीड़े की तरह हमें भी घुट कर के मरना पड़ता है। लोग अपना स्वार्थ रुपी रेशम उतार कर ले जाते हैं।

प्रश्न: मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा पुरस्कृत 'बायोस्कोप' उपन्यास की लोकप्रियता का क्या कारण है?

उत्तर: बायोस्कोप की लोकप्रियता का कारण कंडी क्षेत्र की आंचलिकता है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जो हिमाचल, जम्मू कश्मीर, राजस्थान व हरियाणा से घिरा हुआ है। इन सभी से घिरा होने के बावजूद भी यहाँ की जो संस्कृति है वह पूर्णतः भिन्न है। इस उपन्यास में कंडी क्षेत्र की भाषा, वहाँ के संस्कार, रश्में, तीज-त्यौहार, इस क्षेत्र की समस्याएं व धार्मिक प्रवृत्तियों को मैंने इस उपन्यास के माध्यम से पाठकों के समक्ष रखा। मैं बड़ी खुशी से कहता हूँ कि यह पाठकों इतना अधिक भाया कि मौलाना अब्दुल कलाम विश्वविद्यालय के एक मुस्लिम छात्र ने इस पर एम.फिल. भी की है। मुझे लगता है कि आंचलिकता के कारण यह उपन्यास प्रसिद्ध हुआ।

प्रश्न: आपके उपन्यास 'बेटी हूँ न' तथा 'और कितनी'? में नारी जीवन की कौन सी पीड़ाओं को उकेरा गया है?

उत्तर: 'बेटी हूँ ना' उपन्यास में मैंने बेटियों के पैदा होने के बाद कूड़े के ढेर में फेंकना व कन्या भ्रूण हत्या जैसी समस्याओं को उठाया है। मैंने प्रयास किया एक आदर्श समाज के सामने तथा सरकारी तंत्र के सामने रख सकूँ। विज्ञान का छात्र होने के नाते मैंने पता किया कि बड़े-बड़े हॉस्पिटल जहाँ भ्रूण हत्या होती हैं वह उस भ्रूण को फ्रीज कर के रख लेते हैं और इससे बड़ी-बड़ी सेलिब्रिटी, नेता और नेताओं की पत्नियों की स्टेम सेल थेरेपी करके उनकी त्वचा को जवान बनाया जाता है।

...और कितनी? उपन्यास में उन लड़कियों की त्रासदी है जिनकी शादी के बाद ससुराल में पति, सास व परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा दहेज पुत्र या अन्य कारणों से उनको यातनाएं दी जाती हैं। ...और कितनी? यह एक शोषित नारी का प्रश्न है कि मेरी जैसी और कितनी नारी इस प्रकार शोषण की शिकार होती रहेंगी।

प्रश्न: वैश्वीकरण व शहरीकरण के कारण नारी विषयक जीवन मूल्यों में क्या परिवर्तन आए हैं ?

उत्तर: वैश्वीकरण व शहरीकरण के कारण मैं मानता हूँ कि मिश्रित संस्कृति उत्पन्न हो गई है। इसका प्रभाव नारियों पर ही नहीं पुरुषों पर भी पड़ा है। वैश्वीकरण के कारण पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों में नए स्टेटस सिंबल पैदा हुए हैं।

प्रश्न: मेले व त्योहारों का मानव जीवन में क्या महत्व है, वर्तमान संदर्भ में इनकी क्या भूमिका है?

उत्तर: मेले व त्योहार किसी भी क्षेत्र की संस्कृति का मुख्य हिस्सा हैं फसलों के आधार पर, धार्मिक विभूतियों के आधार पर उत्सव का आयोजन करने की परम्परा की शुरुआत की गई जिनके कारण एक बड़ा बाजार लोगों को स्थानीय स्तर पर उपलब्ध हो जाता है। लोगों का अपने रिश्तेदारों से मेल-मिलाप हो जाता है। मेले में खेलों को भी प्रोत्साहन मिलता है। अतः मैं मानता हूँ मेले व त्योहार सहयोग, सद्भावना व भाईचारे का संदेश देते हुए समाज को जोड़ने का कार्य करते हैं।

प्रश्न: राजनीति में धर्म के गठबंधन को आप कहाँ तक सही मानते हैं ?

उत्तर: एक अच्छा जीवन जीने के लिए जो नियमावली निर्धारित की है, उसका पालन धर्म कहा जाता है। प्राचीन काल में राजा के लिए नियमों का पथ प्रदर्शक धर्मगुरु ही होता था। राजा कोई भी कदम उठाए उसका परामर्श अवश्य लेता था। वर्तमान राजनीति में धर्म के नाम पर वोटों का ध्रुवीकरण होता है धर्म को मत, बहुमत या राज्य में सत्ता प्राप्ति का साधन मान लिया गया जो बहुत गलत है।

प्रश्न: इंटरनेट व मीडिया का समाज पड़ रहे सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रभावों को बताएं ?

उत्तर: हम छठी कक्षा में एक निबन्ध पढ़ते थे 'विज्ञान वरदान या अभिशाप' यह बात पूर्णतः सच है कि विज्ञान लोगों के कल्याण के लिए होता है परन्तु यदि मानव इसका उपयोग विपरीत करता है तो यह एक अभिशाप भी हो सकता है। इंटरनेट व मीडिया के संदर्भ में भी यही बात है यदि बच्चे इंटरनेट का सदुपयोग करें तो वह उनके शिक्षा का एक साधन बन सकता है और गलत प्रयोग करें तो यह बच्चों को पथभ्रष्ट भी कर सकता है।

प्रश्न: राजनीतिक जीवन मूल्यों के विघटन के क्या कारण हैं?

उत्तर: राजनीति में अच्छे लोगो का प्रवेश नहीं हो रहा है। मौका परस्त नेता येन केन प्रकारेण सत्ता को हथिया लेते हैं व इसको एक बिजनेस की तरह चलाते हैं। जन कल्याण से उनका कोई सरोकार नहीं रहता।

प्रश्न: आप स्वयं अध्यापक रहे हैं, छात्रों में नैतिकता का विकास कैसे हो सकता है?

उत्तर: अध्यापक समाज के लिए आदर्श होता है। अतः मैं मानता हूँ यदि शिक्षक छात्रों के समक्ष एक व्यवहारिक आदर्श रूप प्रस्तुत करे। छात्र इसे अवश्य ग्रहण करेंगे। अच्छा साहित्य पढ़ने के लिए भी छात्रों को प्रोत्साहित करना चाहिए।

प्रश्न: भारत में भ्रष्टाचार को कैसे समाप्त किया जा सकता है ?

उत्तर: भ्रष्टाचार की शुरुआत ऊपर से होती है। यह बात स्वयं देश के प्रधानमंत्री ने स्वीकार की है। जब केंद्र सरकार से एक रुपया जन कल्याण के लिए जारी होता है तो आम व्यक्ति तक 15 पैसे ही पहुंचते हैं अतः राजशाही व अफसरशाही में ईमानदार व्यक्तियों का प्रवेश ही भ्रष्टाचार को रोक सकता है।

संदर्भ सूची:-

आधार ग्रन्थ :-

- मदान, अमृतलाल. लाल धूप. दिशा प्रकाशन, 1983.
- . अपने-अपने अंधेरे. दिशा प्रकाशन, 1989.
- . सिन्धु-पुत्र. कदम्बरी प्रकाशन, 1991.
- . विराट बौना. सुकीर्ति प्रकाशन, 2004.
- . बंद होते दरवाजे. सुकीर्ति प्रकाशन, 2011.
- . दूसरा अरुण. अक्षरधाम प्रकाशन, 2012.
- . हे पिता !. अक्षरधाम प्रकाशन, 2015.
- . एक अधूरी प्रेम कथा. अक्षरधाम प्रकाशन, 2012.
- . एक समानांतर प्रेम कथा. अक्षरधाम प्रकाशन, 2015.
- . अनंत प्रेम कथा. अक्षरधाम प्रकाशन, 2015.
- . इति प्रेम कथा. अक्षरधाम प्रकाशन, 2016.
- . अमर प्रेम कथा. अक्षरधाम प्रकाशन, 2016.
- . वे अठारह दिन. अक्षरधाम प्रकाशन, 2017.
- . एक और त्रासदी. बोधि प्रकाशन, 2017.
- . शून्यनाथ मुस्कान. बोधि प्रकाशन, 2019.
- साहिल, धर्मपाल. समझौता एक्सप्रेस. शैवाल प्रकाशन, 2005.
- . बायोस्कोप. साहिल प्रकाशन, 2015.

- . बेटी हूँ न. उड़ान पब्लिकेशन, 2007.
- . आर्तनाद. पंखुड़ी प्रकाशन, 2014.
- . खिलने से पहले. अयन प्रकाशन, 2010.
- . ककून. सुकीर्ति प्रकाशन, 2012.
- ...और कितनी. त्रिवेणी साहित्य अकादमी, 2018.

सहायक ग्रन्थ :-

- अग्रवाल, बिंदु. हिंदी उपन्यास में नारी चित्रण. राधाकृष्ण प्रकाशन, 1968.
- अरोड़ा, रामस्वरूप. प्रेमचंद्रोत्तर उपन्यासों में सांस्कृतिक मूल्यों का विघटन. राजकमल प्रकाशन, 2016.
- कालभोर, गोपीनाथ. धर्मनिरपेक्षता और राष्ट्रीय एकता. ज्योति प्रकाशन, 2012.
- कौशिक, हेमराज. मूल्य और हिंदी उपन्यास. निर्मल पब्लिकेशन, 1978.
- गुप्त, मंगल, डॉ लालचंद. हिंदी साहित्य का इतिहास. यूनिवर्सिटी बुक सेंटर थर्ड ग्रेट, 1999.
- गुप्ता, डॉ. कमला. हिंदी उपन्यासों में सामंतवाद. उदयाचल प्रकाशन, 2008.
- चौधरी, इन्द्रनाथ. तुलनात्मक साहित्य की भूमिका. नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1983.
- चौहान, डॉक्टर अर्जुन. राजेंद्र यादव के उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन. राधाकृष्णन प्रकाशन, 2017
- चंद्र, विपिन. आधुनिक भारत में सांप्रदायिकता. विवेक प्रकाशन, 2010.
- दिनकर, रामधारी सिंह. संस्कृति के चार अध्याय. उदयाचल प्रकाशन पटना 2018.
- नगेन्द्र, तुलनात्मक साहित्य. नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1985.
- नवल, नालंदा विशाल शब्द सागर. आदेश बुक डिपो. 1988

- पांडेय, गोविंदचंद्र. मूल्य—मीमांसा. राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, 1970.
- भट्ट, गौरी शंकर. भारतीय संस्कृति एक समाजशास्त्रीय समीक्षा. साहित्य सदन 2017.
- मैनी, डॉ० धर्मपाल. भारतीय मूल्य चेतना. किताब घर प्रकाशन, 2016.
- मिश्र, रामदरश. हिंदी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा. राजकमल प्रकाशन, 2016.
- मुखर्जी, राधाकमल. दि सोशल स्ट्रक्चर ऑफ वैल्यूज. अमन प्रकाशन, 1987
- साहनी, भीष्म. आधुनिक हिन्दी उपन्यास. राजकमल प्रकाशन, 1988.
- सिंहल, बैजनाथ. नई कविता मूल्य मीमांसा. मंथन पब्लिकेशन 1981.
- सोडी, टी. एस.सूरी, अरुणा. शिक्षा के दार्शनिक तथा समाजशास्त्रीय आधार. बाबा प्रकाशन, 2015.
- राजूरकर, तुलनात्मक अध्ययन स्वरूप और समस्याएं.वाणी प्रकाशन, 2017.
- रॉय, गोपाल. हिंदी उपन्यास का इतिहास. राजकमल प्रकाशन, 2016.
- वर्मा, धीरेंद्र. हिंदी साहित्य कोश. ज्ञान मंडल लिमिटेड वाराणसी, 1998.
- वर्मा,रामचन्द्र.लोकभारती प्रामाणिक हिंदी कोश. लोक भारती प्रकाशन, 2014.
- शर्मा, आचार्य श्री राम. यजुर्वेद. संस्कृति संस्थान बरेली,1968.
- शर्मा, डॉक्टर डी.डी. समाजशास्त्र. साहित्य भवन प्रकाशन, 2007.
- शर्मा, मोहिनी. हिंदी उपन्यास और जीवन मूल्य. अमन प्रकाशन, 1987.
- शर्मा, डॉ वासुदेव. हिंदी साहित्य का विकास. सूर्य भारती प्रकाशन, 2009.
- शास्त्री,गजानन.मनुस्मृति.चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, 2019
- हरदयाल, डॉ नगेंद्र. हिंदी साहित्य का इतिहास. नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2009.
- त्रिवेदी, मातृदत्त.अथर्ववेद. विश्वेश्वरानंद वैदिक शोध संस्थान,2019.

कोश ग्रन्थ :-

आप्टे, वामनशिवराम. संस्कृत हिंदी कोश. मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, 2005.

उपाध्याय एवं गुप्ता, मानक हिंदी अंग्रेजी शब्दकोश. रॉयल बुक डिपो, 2005.

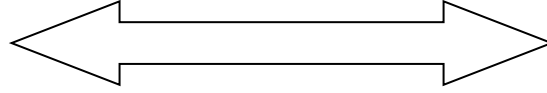
कुमार, अरविंद. कुमार, कुसुम. समान्तर कोश. नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, 2013.

बाहरी, डॉक्टर हरदेव. अंग्रेजी हिंदी शब्दकोश. राजपाल एंड संस प्रकाशन, 2010.

जोशी, श्रीपाद. अभिनव शब्दकोश. निराली प्रकाशन 2011.

डॉक्टर हरदेव. उच्चतर हिंदी कोश. कबूल नगर शाहदरा, दिल्ली प्रकाशन, 2006.

पाठक, शिवप्रकाश. संस्कृत हिंदी अंग्रेजी शब्दकोश. रॉयल बुक डिपो, 2006.



परिशिष्ट
शोध पत्र प्रकाशन एवं प्रस्तुतिकरण

समीचीन

(साहित्य-समाज-संस्कृति और राजनीति के खुले मंच की त्रैमासिक-अव्यावसायिक पत्रिका)

पीयर रिव्यूड व यू. जी. सी. केयर लिस्ट में सम्मिलित जर्नल



शैलेश मटियानी की रचनाओं पर केन्द्रित

29

-
- वर्ष-14 ● अंक 29 ● अक्टूबर-दिसंबर-2021 ● पूर्णांक 67 ● मूल्य 100 रुपए
 - प्रधान संपादक - देवेश ठाकुर ● संपादक - डॉ. सतीश पांडेय

देवेश ठाकुर रचनावली

(16 खंडों में)

(द्वितीय संस्करण)

मूल्य : 16,500/-

नमन प्रकाशन

4231/1, अंसारी रोड,

दरियागंज, नई दिल्ली - 110002

समीचीन

(साहित्य-समाज-संस्कृति और राजनीति के खुले मंच की त्रैमासिक-अव्यावसायिक पत्रिका)
पीयर रिव्यूड व यू. जी. सी. केयर लिस्ट में सम्मिलित जर्नल

प्रबंध संपादिका :

डॉ. रोहिणी शिवबालन

प्रधान संपादक-प्रकाशक :

डॉ. देवेश ठाकुर

संपादक :

डॉ. सतीश पांडेय

संयुक्त संपादक :

डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट

डिजिटल संपादक :

डॉ. मनीष कुमार मिश्रा

संपादकीय-संपर्क :

बी-23, हिमालय सोसाइटी, असल्फा,
घाटकोपर (प.), मुंबई-400 084.

टेलिफोन : 25161446

Email: sameecheen@gmail.com

website-www.http://:

sameecheen.com

विशेष :

‘समीचीन’ में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार संबद्ध रचनाकारों के हैं। संपादक-प्रकाशक की उनसे सहमति आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का न्याय-क्षेत्र मात्र मुंबई होगा। सभी पदाधिकारी पूर्णरूप से अवैतनिक।

परीक्षक विद्वत मंडल : (Peer Review Team)

- 1) प्रोफेसर ताकेशी फुजिई
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
टोक्यो यूनिवर्सिटी फॉर फॉरेन स्टडीज, टोक्यो।
- 2) प्रो. (डॉ.) देवेन्द्र चौबे
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।
- 3) प्रो. (डॉ.) वशिष्ठ अनूप
हिन्दी विभाग, काशी हिंदू विवि., वाराणसी, (उ. प्र.)
- 4) डॉ. नरेन्द्र मिश्र
प्रो. हिंदी, मानविकी विद्यापीठ, इग्नू मैदानगढ़ी, दिल्ली 110068
- 5) प्रो. (डॉ.) करुणाशंकर उपाध्याय
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई।
- 6) डॉ. अनिल सिंह
अध्यक्ष, हिन्दी अध्ययन मंडल, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई।
- 7) प्रो. (डॉ.) सदानंद भोसले
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, सवित्रीबाई फुले पुणे विद्यापीठ, पुणे।
- 8) प्रो. (डॉ.) शरेशचंद्र चुलकीमठ
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड़।
- 9) डॉ. अरुणा दुबलिश
पूर्व प्राचार्य, कनोहरलाल महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
मेरठ (उ. प्र.)

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक : देवेश ठाकुर ने प्रिंटोग्राफी सिस्टम (इंडिया) प्रा. लि., 13/डी, कुर्ला इंडस्ट्रियल एस्टेट, नारी सेवा सदन रोड, नारायण नगर, घाटकोपर (प.) मुंबई-400 086 में छपवाकर बी-23, हिमालय सोसाइटी, असल्फा, घाटकोपर (प.), मुंबई-400084 से प्रकाशित किया।

● वर्ष-14 ● अंक 29 ● अक्टूबर-दिसंबर-2021 ● पूर्णांक 67 ● मूल्य 100 रुपए

सहयोग : एक प्रति रु. 100/-, वार्षिक रु. 400/-, पंच वार्षिक रु. 2000/-

सीधे समीचीन के खाते में भेजने के लिए : खातेधारक का नाम : समीचीन / sameecheen

A/C No. 60330431138, Bank of Maharashtra,

Dr. Ambedkar Road, Dadar, Mumbai. IFSC : MAHB0000045

इस अंक में :

1. अपने तई 6
2. दलित संवेदनाओं की अभिव्यक्ति और हिन्दी सिनेमा
- डॉ. प्रणु शुक्ला 07- 18
3. निर्मल वर्मा के कथा साहित्य में प्रतिबिंबित उनका जीवन
- डॉ. ममता पंत 19 - 24
4. मोहन राकेश की अन्तर्यात्रा - डॉ. रमा विनोद सिंह 25 - 29
5. देवेश ठाकुर के साहित्य में नारी विमर्श - डॉ. मनोज कुमार दुबे 30 - 35
6. प्रयोगवाद: हार्दिकता व बौद्धिकता के रसायन की तलाश
- डॉ. रमेशचन्द्र सैनी 36 - 43
7. बिजेन्द्र सिंह की कविताओं में जीवन-मूल्य एवं मार्मिक
अभिव्यक्ति - डॉ. अजीत पाल 44- 49
8. श्री नरेंद्र कोहली के साहित्य में सांस्कृतिक व्यंग्य
-जी. शुभारानी 50- 56
9. यही सच है के फिल्मांतरण में फिल्म निर्देशक का कौशल
और सृजनशीलता - डॉ. गोकुल क्षीरसागर 57-65
10. प्रभा खेतान की आत्मकथा में स्त्री चेतना के स्वर
- रामलखन राजौरिया 66-69
- 11.मानसिक यातना से जूझती 'तिरिया जनम'- नेहा तिवारी 70-75
12. अज्ञेय के कथा-साहित्य में दार्शनिक एवं आध्यात्मिक मूल्य
सुरेन्द्र शर्मा 76- 82
13. धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में जीवनमूल्य संक्रमण व
विघटन - सोनिया 83-88
14. नये समय की नयी स्त्री की कविता रचती सविता सिंह की
कविताएँ-कार्तिक राय 89- 98
15. ग्रामीण भारत की महिलाओं पर भूमंडलीकरण का प्रभाव
- कल्याणी प्रधान 99-104
16. बंगाल के बाउलों की साधना - अंकिता शाम्भवी वर्मा 105-111

17. कबीर का जीवन और सामाजिक चिंतन
- अरविंद कुमार यादव 112-118
18. वीरेन्द्र मिश्र तथा समकक्ष कवियों के गीतों में आज की नारी
का बदलता स्वरूप - मोहन बैरागी 119-122
19. समकालीन हिंदी कविता: संवेदना और अभिव्यक्ति
- मुकेश कुमार 123-133
20. दक्खिनी हिन्दी गद्य साहित्य का मूल्यांकन
- डॉ. नूरजाहान रहमातुल्लाह 134-140
21. आदिवासियों का पुलिस द्वारा शोषण और उसका औपन्यासिक
प्रतिफलन - डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय 141-148
22. डॉ. सत्य प्रकाश मिश्र का मार्क्सवादी साहित्य चिंतन
- रुबी त्रिपाठी, डॉ. मंजू शुक्ला 149-157
23. स्वाधीनता-पूर्व मूक फिल्मों का दौर - डॉ. सत्यजीत कुमार 158-163
24. आधुनिक हिन्दी कहानी-साहित्य में बाल-मनोविज्ञान
- विकास कुमार सिंह 164-167
25. हिमाचल की कहानियों में नारी शोषण के विविध संदर्भ
- डॉ. ममता 168-173
26. गांधीवादी विचारधारा का भगवानदास मोरवाल के उपन्यासों
पर प्रभाव-शोभा जोशी 174-179
27. शिक्षाजगत की कसौटी और ऑनलाइन कक्षाएँ
- डा. रीना थामस 180-185
28. डॉ. मानसिंह दहिया आनन्द के काव्य में राष्ट्रीय चेतना
- डॉ. नरेश कुमार सिहाग 186-191
29. चंबा जनपद की लोकगाथाएँ एवं मेले - छविंदर कुमार 192-199
30. उपन्यास 'बा' में कस्तूरबा - डॉ. दया दीक्षित 200-203
31. बालसाहित्य के संदर्भ में - डॉ. सुरेन्द्र विक्रम 204-208
32. क्यों चुप तेरी महफिल में है!:: वस्तु एवं भाषा के नये आयाम
-डॉ. मीना सुतवणी 209-214



प्रतिध्वनि कला
संस्कृति की

ISSN 2349 - 137X

UGC CARE-listed, Peer Reviewed

आवरण

लोक

वर्ष 7 अंक -14

2021



ISSN 2349-137X
UGC CARE-Listed Peer Reviewed

अनहद लोक

(प्रतिध्वनि कला संस्कृति की)

वर्ष-7, 2021, अंक-14

(अर्धवार्षिक शोध पत्रिका)

सम्पादक

डॉ. मधु रानी शुक्ला

सम्पादक मण्डल

डॉ. राजश्री रामकृष्ण, डॉ. मनीष कुमार मिश्रा,

डॉ. धनंजय चोपड़ा, डॉ. ज्योति सिन्हा

सहायक सम्पादक

सुश्री शाम्भवी शुक्ला



व्यंजना

आर्ट एण्ड कल्चर सोसायटी

109 डी/4, अबुबकरपुर, प्रीतमनगर, सुलेमसराय

प्रयागराज - 211011

अनहद लोक

(प्रतिध्वनि कला संस्कृति की)

सम्पादक : डॉ. मधु रानी शुक्ला

सम्पादक मण्डल : डॉ. राजश्री रामकृष्ण, डॉ. मनीष कुमार मिश्रा, डॉ. धनंजय चोपड़ा, डॉ. ज्योति सिन्हा

सहायक सम्पादक : सुश्री शाम्भवी शुक्ला

मल्टीमीडिया सम्पादक : श्रेयस शुक्ला

प्रकाशक

व्यंजना

(आर्ट एण्ड कल्चर सोसायटी)

109 डी/4, अबुबकरपुर, प्रीतमनगर

सुलेमसराय, प्रयागराज-211 011

मो. : 9838963188, 8419085095

Email: anhadlok.vyanjana@gmail.com

वेबसाइट : vyanjanasociety.com/anhad_lok

वितरक : पाठक पब्लिकेशन, महाजनी टोला, इलाहाबाद-211 011

फोन नं. 0532-2402073

मूल्य : 200/- प्रति अंक, पोस्टल चार्ज अलग से

सदस्यता शुल्क

वार्षिक : 500/-

तीन वर्ष : 1500/-

आजीवन : 10,000/-

© सर्वाधिकार सुरक्षित

- रचनाकारों के विचार मौलिक हैं
- समस्त न्यायिक विवाद का क्षेत्र इलाहाबाद न्यायालय होगा

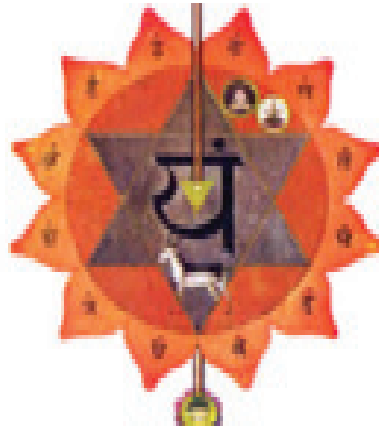
मुद्रक : विकास कंप्यूटर एंड प्रिंटर, ट्रॉनिका सिटी, लोनी, ग़ाज़ियाबाद-201 102

मार्गदर्शन बोर्ड :

डॉ. सोनल मानसिंह, पं. विश्वमोहन भट्ट, पं. भजन सपोरी, पं. रोनु मजुमदार,
पं. विजय शंकर मिश्र, पं. रामकृष्ण दास 'नादरंग', प्रो. कमलेश दत्त त्रिपाठी,
प्रो. चित्तरंजन ज्योतिषी, प्रो. ऋत्विक् सान्याल, प्रो. दीप्ति ओमचारी भल्ला,
प्रो. के. शशि कुमार, डॉ. राजेश मिश्रा, डॉ. आशा आस्थाना

सहयोगी मंडल :

प्रो. संगीता पंडित, प्रो. लावण्य कीर्ति सिंह 'काब्या', प्रो. निशा झा, प्रो. प्रभा भारद्वाज,
प्रो. नीलम पॉल, प्रो. अर्चना अंभोरे, डॉ. राम शंकर, डॉ. इंदु शर्मा, डॉ. सुरेंद्र कुमार,
प्रो. भावना ग्रोवर, डॉ. अंबिका कश्यप, डॉ. स्नेहाशीष दास, डॉ. सुजाता व्यास,
डॉ. कस्तूरी पाइगुड़े राणे, डॉ. शान्ति महेश, डॉ. कल्पना दुबे



अनुक्रम

गान

1. बंदिशें	प्रो. ओजेश प्रताप सिंह	15
2. गज़ल का अर्थ और परिभाषा : एक अवलोकन	डॉ. सरस्वती नेगी	22
3. Dawn of Melody	Dr. Shanti Mahesh	26
4. Analytical study of the Stylistic impressions, tradition and changing trends evolved in Gwalior Gharana of Hindustani Classical Music	Dr. Atindra Sarvadikar	29
5. Applicability of simple quantitative methods to Research in Indian Vocal Music	Abhijith Shenoy K	36
6. दरभंगा में ध्रुपद गायन शैली के विकासात्मक सोपान : एक विश्लेषण	प्रेरणा कुमारी लावण्य कीर्ति सिंह “काव्या”	40
7. ठुमरी शैली का उद्भव एवं विकास	दीपक सिंह, मेघना कुमार	43
8. Compositions of Ustad Amir Hussain Khan	Nikhil Bhagat	48
9. ग्वालियर घराने के स्तम्भ एवं महान संगीतज्ञ स्व. हस्सू खाँ एवं हद्दू खाँ का सांगीतिक योगदान	अर्चना कुमारी	53
10. Musical Style of Gharānā of Hindustani Classical Vocal Music: A Study	Sumedha Singh Abhishek Smith	56

आतोद्य

11. उत्तर प्रदेश में तबला वादन की संस्थागत शिक्षा का विकास: एक अवलोकन (वर्ष 1906 से 2020 तक)	डॉ. अमित कुमार वर्मा	63
12. An Overview of Tāla in Musical Forms of Karnāṭaka Music – with Special Reference to Varṇam	Anuthama Murali Dr Rajshri Ramakrishna	71
13. उस्ताद आफ़ाक हुसैन खाँ साहब की बन्दिशों का तकनीकी पक्ष	कल्याणी गुप्ता डॉ. शिवेन्द्र प्रताप त्रिपाठी	82

14. लखनऊ घराने की तबला वादन परम्परा में उस्ताद जहाँगीर खाँ साहब का योगदान	ज्योति चौधरी, प्रो.(डॉ.). सुनील पावगी	87
15. तरबदार सितार की उत्पत्ति एवं विकास का अध्ययन	विधुश्री पाण्डेय	92
16. 'वायलिन की उत्पत्ति एवं विकास'	प्रशान्त मिश्र	97
17. An Overview of the Dēśī Tāla Simhalilā	Bhavana Prabhakaran Dr. R.Hemalatha	100

शास्त्र

18. A Comparative study of the Rāga-s in the Rāgalakṣaṇamu of Śāhaji and Rāgalakṣaṇam of Muddu Vēṅkaṭamakhī	Dr. R. Hemalatha	109
19. पं. भातखंडे की ग्रंथसंपदा - संशोधन एक अध्ययन	प्रो. विशाल विजय कोरडे	117
20. 27 Nakshatra Charana Ragamalika – An unpublished work of Sri Gali Penchala Narasimha Rao – A Study	Mrs. E. Sreelakshmi Dr. J. Sankar Ganesh	121
21. संगीतशास्त्रज्ञ पं. सोमनाथ प्रणीत राग विबोध : एक परिचयात्मक अध्ययन	आवेश कुमार, प्रो. के. शशि कुमार	131
22. Rāgatarāṅgiṇi of Lōcana – An overview	Lakshmi Priya R Dr. Rajshri Ramakrishna	135
23. The Mēla-s and Rāga-s of Svaramēlakalānidhi – An Overview	S Suchitra, Dr R Hemalatha	143
24. References to Music Therapy in Lakṣaṇa Grantha-s - A Literature Review	Deepa Iyer S Dr Rajshri Ramakrishna	151
25. Description of Rāga-s in select Tamil Publications	Dr. M Subhasree	158
26. A study of Rāga Varāli with special reference to Gīta-s seen in the early Telugu Publications	Pranathi G Dr. Rajshri Ramakrishna	164

संस्कृति

27. भारतीय संस्कृति में गुरु शिष्य परम्परा 'गुरु पूर्णिमाः' सार	डॉ. रमा सिंह	179
28. काशी के संस्कृति में आध्यात्म व संगीत	डॉ. प्रेम किशोर मिश्र	184
29. मिसिंग जनजाति की लोकसंस्कृति और समाज	डॉ. नुरजाहान रहमातुल्लाह	189
30. भारतीय संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में छठ पूजा	डॉ. रीना सिंह	194

31. मानव विकास की प्रक्रिया में संगीत की अहम भूमिका	डॉ. अंकिता चतुर्वेदी	197
32. जैन धर्म और संगीत: राग के विशेष संदर्भ में	सुखवीर कौर	201
33. हिमाचल प्रदेश की गद्दी जनजातिकी लोकसंस्कृति का विश्लेषणात्मक अध्ययन	भरत सिंह	206
34. Devi Krithis And Their Potential Influence on Human Values	Narayanan P Iyer Dr Meera Rajaram Pranesh	210
35. भारतीय संस्कृति एवं लोक संगीत	रीनु शर्मा	221

थाती

36. राजस्थान की लोकसंस्कृति का शाश्वत जीवनदर्पण : लोकसंगीत	डॉ. आकांक्षा गुप्ता	229
37. कोल जनजाति का लोक संगीत : मध्यप्रदेश के सन्दर्भ में	डॉ. वेणु वनिता	233
38. पूर्वांचल का लोकगीत "बिरहा"	कृतिका पाण्डेय	239
39. हरियाणवी गीतों में जीवन जगत	कांता देवी	242
40. लोकनाट्य नौटंकी की समकालीनता	सुनील कुमार	247

सौन्दर्य

41. Antiquity of Sārdā Temple at Maihar	Dr Sanju Mishra	253
42. संगीत कला में भाव, रस एवं ध्वन्याभिव्यक्ति	कामाक्षी यादव, डॉ. रामशंकर	257
43. ABC of Kalpana Swaram Singing Aesthetics Brilliance Creativity	NJ Nandini	261

व्यक्तित्व

44. हरियाणा के लोक नाट्यकवि - मुंशीराम जांडली	डॉ कामराज सिंधु	271
45. यादों के झरोखे से- 'स्मरण मन्नु भण्डारी'	डॉ. कल्पना दुबे	276
46. 'कुमार गंधर्व' गायकी एवं दृष्टिकोण	डॉ. अनुभव पाण्डेय	279
47. विदुषी प्रेमलता शर्मा : सांगीतिक यात्रा	कुमारी बन्दना, प्रो. के.शशि कुमार	282
48. Contribution of Violin Vidwan V.V. Srinivasa Rao to Karnatic Music	Devu Treesa Mathew Dr. Shanti Mahesh	287

साहित्यिकी

49. चंद्रलाल बादी के संगों में लोकधर्मिता : एक विवेचन	डॉ कामराज सिन्धु	295
50. राग बहार में निर्मित रचनाओं का साहित्यिक अवलोकन	श्यामा कुमारी	300

51. अमृतलाल मदान व धर्मपाल साहिल के उपन्यासों में
सांस्कृतिक मूल्य एक विवेचन सोनिया, डॉ. रीता सिंह 305

प्रकीर्णक

52. खेल के सौन्दर्य बोध में उपभोक्तावाद का प्रभाव डॉ. आलोक मिश्र 311
53. हिंदी सिनेमा और मेरा भारत देश : एक सांस्कृतिक अध्ययन
डॉ. दादासाहेब नारायण डांगे 315
54. कथक नृत्य शिक्षण में ई. लर्निंग : एक समीक्षात्मक अध्ययन डॉ. रंजना उपाध्याय 320
55. मध्य प्रादेशिक की लोक चित्रकला परम्परा : एक अध्ययन डॉ. किरन मिश्रा 328
56. संगीत और पर्यावरण का सम्बन्ध डॉ चिंकी रानी 334
57. हिंदी चित्रपट संगीत का आठवां दशक डॉ. देश गौरव सिंह 336
58. Music listening in Workplace Environment -
A Review Study Deepika Theagarajan 342
Dr. Shanti Mahesh
59. संगीत, कला और प्रारब्ध - ज्योतिषीय दृष्टिकोण से श्रीमती प्रज्ञा त्रिवेदी
डॉ. स्नेहाशीष दास 350
60. Raga Chikitsa through the compositions of
Muthuswami Dikshitar B. Utpala Karanth
Dr. Varsha Karanth 358
61. Influence of World music on Indian music Snigdha Halder 368
62. Role & Relevance of I.C.T in modern
teaching of Music: A Survey Study Harmeet Singh 373




हरियाणा ग्रन्थ अकादमी, पंचकूला
डी.ए.वी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, करनाल (हरियाणा)
ग्लोबल हिन्दी साहित्य शोध संस्थान, भारत के संयुक्त तत्वाधान में
आयोजक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी : हिन्दी विभाग




वैश्विक परिदृश्य में हिन्दी साहित्य एवं मीडिया का योगदान

प्रतिभागी प्रमाण-पत्र

सहर्ष प्रमाणित किया जाता है कि प्रो./डॉ./सुश्री/श्रीमती/श्रीमान.....**सोनिया**..... संस्था **लवली प्रोफेशनल**.....
यूनिवर्सिटी, जालन्धर..... ने सत्र के मुख्यातिथि/विशिष्टातिथि/सारस्वतातिथि/बीज वक्ता/अध्यक्ष/प्रतिभागी के रूप में
अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में सक्रिय प्रतिभागिता की एवं वैचारिक योगदान दिया। इन्होंने **हिन्दी साहित्य में जीवन-**
मूल्य (तुलसीदास के संदर्भ में)..... विषय पर अपना
शोध-पत्र भी प्रस्तुत किया।


प्रो. वीरेन्द्र चौहान
उपाध्यक्ष एवं निदेशक
हरियाणा ग्रन्थ अकादमी,
पंचकूला (हरियाणा)


डॉ. कामराज सिन्धु
अध्यक्ष
ग्लोबल हिन्दी साहित्य शोध संस्थान, भारत

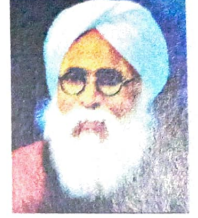

डॉ. ऋतु कालिया
संगोष्ठी संयोजिका
हिन्दी विभाग


डॉ. राम पाल सैनी
प्राचार्य

दिनांक : 28 जनवरी, 2019

E-mail : dav_college@rediffmail.com

प्रमाण-पत्र



एक दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी

रविवार, 27 जनवरी, 2019

वर्तमान हिन्दी साहित्य किस ओर : वैश्विक परिदृश्य

आयोजक

हिन्दी-विभाग
डी.ए.वी. कॉलेज, चीका

उच्चतर शिक्षा महानिदेशालय
पंचकूला

ग्लोबल हिन्दी साहित्य शोध संस्थान
भारत

प्रमाणित किया जाता है कि श्री/श्रीमती/सुश्री/डॉ./प्रो. सोनेया ने एक दिवसीय

अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में मुख्य अतिथि/बीज वक्ता/विशिष्ट अतिथि/मुख्य वक्ता/प्रतिभागी के रूप में सक्रिय प्रतिभागिता की तथा "हिन्दी साहित्य का

सामाजिक व आर्थिक अनुशीलन" विषय पर शोध - पत्र प्रस्तुत किया।

Redha
डॉ. रमेश लाल दांडा
प्राचार्य, डी. ए. वी. कॉलेज,
चीका

Dr. Laxi
प्रो. सखन घई
पूर्व प्रो. यूनिवर्सिटी ऑफ टेरंटो
संस्थापक अध्यक्ष, विश्व हिन्दी संस्थान, कनाडा

Dr. Suresh Chandra Shukla
डॉ. सुरेश चन्द्र शुक्ल
साहित्यकार
ओरलो (नार्वे)

Dr. Jitendra Singh
डॉ. जितेंदर सिंह
अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
डी. ए. वी. कॉलेज, चीका

आयोजन स्थल: महात्मा हंसराज सभागार, डी. ए. वी. कॉलेज, चीका (हरियाणा)



विलक्षणा : एक सार्थक पहल समिति,
अजायब, रोहतक (हरियाणा) (रजि. : 02314)

सरस्वती साहित्य संस्थान एवं
चरखी दादरी (हरियाणा) (रजि. : 02812)

गीना देवी शोध संस्थान
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी (हरियाणा)

के संयुक्त तत्त्वाधान में आयोजित

हिन्दी साहित्य, शिक्षा एवं संस्कृति

एक दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय (Multi Disciplinary) संगोष्ठी

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि

श्री/श्रीमती/डॉ. सोनिया

संस्था/स्थान शोधार्थी, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी जालन्धर

ने दिनांक 09 जनवरी 2022 को **हिन्दी साहित्य, शिक्षा एवं संस्कृति** विषय पर

जनता कॉलेज, चरखी दादरी (हरियाणा) में आयोजित **एक दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय**

संगोष्ठी में सहभागिता की और हिन्दी साहित्य में जीवन मूल्य

व उनकी वर्तमान प्रासंगिकता विषय पर अपना शोध-आलेख प्रस्तुत किया।

Sulaxana

डॉ. सुलक्षणा अहलावत, अध्यक्ष
विलक्षणा : एक सार्थक पहल समिति

कैलाश चन्द्र शर्मा

डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा 'शंकी'
महासचिव, सरस्वती साहित्य संस्थान

वनिता कुमारी

डॉ. वनिता कुमारी
समन्वयक

नरेश सिहाग

डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट
संयोजक/सचिव